ॐ

# दुर्गा-सप्तशती

भाषा टीका सहित

सम्पादक

## दैवज्ञवर्य श्री परिडत शिवरामदत्तात्मज

परिडत रामशरण ज्योतिषाचार्य

जिसको

## परिडत देवीदयालु ज्योतिषी एराड सन्ज़

## पंचांग दिवाकर कार्यालय जालन्धर शहर

से प्रकाशित किया।

द्वितीयबार २०००

मूल्य ३)

# भूमिका

मनुष्य का जीवन धर्म ही है (धारणात् धर्मः) धर्म के लिए अपने आप को मिटा देना, धर्म पर अपने आप को न्योछावर कर देना ही मनुष्य का कर्तव्य है, जब तक कोई जाति या मनुष्य अपने धर्म पर दृढ़ विश्वास रखता है तब तक धर्म ही उस जाति या मनुष्य की पग २ पर रक्षा करता है। परन्तु जब से हिन्दु जाति की श्रद्धा धर्म पर से हटनी प्रारम्भ हुई है और जब से इस जाति के धर्म-बन्धन ढीले हुए है, तब से धर्म ने भी इस जाति का साथ छोड़ दिया है, और इस का परिणाम यह है कि आज हिन्दु जाति संकटापन्न अवस्था में है। भगवान् मनु ने अपनी स्मृति में स्पष्ट शब्दों में कहा है :—

धर्म एव हतो हन्ति, धर्मो रक्षति रक्षितः।

तस्माद्धर्मो न हन्तव्यो, मानो धर्मो हतोऽवधीत ॥ मनु० अ०८ श्लो० १५ ॥

अर्थात्—नष्ट हुआ धर्म ही नाश करता है और रक्षित किया धर्म ही रक्षा करता है। 'नष्ट हुआ धर्म कहीं हमें नष्ट न करे' इस लिए कभी धर्म का नहीं करना चाहिये। क्योंकि मनु जी ने कहा है कि एक धर्म ही ऐसा मित्र है जो मरने पर भी साथ जाता है और सब तो शरीर के साथ ही नष्ट हो जाते हैं। इस कारण प्रत्येक मनुष्य और प्रत्येक जाति को चाहिये कि बिना सन्देह के अपने धर्म का पालन करे और उस पर दृढ़ विश्वास रखे जिस से उस का कल्याण हो।

इस संसार में आचार ही परम धर्म है। आचार ही सब तपस्याओं का मूल है जैसे स्मृति में कहा है:— **"आचारहीनं न पुनन्ति वेदा:"**। इस कारण मनुष्य को चाहिये कि सदाचार से रहता हुआ, अपने इष्टदेव की उपासना करता हुआ, अपने जीवन को सुखमय बनायें और मुक्ति को प्राप्त करे। हमारे सनातन धर्म में मुख्यत: पांच उपासना के देव माने हैं। जैसे—सूर्य, गणेश, दुर्गा, शंकर और विष्णु। परन्तु कलियुग में गणेश और दुर्गा की उपासना को मुख्य माना गया है। जैसे कहा है **"कलौ चण्डी विनायकौ"**।

वैसे भी माता का दर्जा ऊंचा है और जगत में माँ को सन्तान अधिक प्यारी होती है। यदि माता की थोड़ी सी सेवा भी की जाये तो वह शीघ्र प्रसन्न हो कर अपनी सन्तान के सकल मनोरथ पूर्ण कर देती है। ऐसा सब को विदित ही है। भगवती महाशक्ति का निर्माण समस्त देवों के तेज से हुआ है। इस लिए वह सर्व देवों का एकत्र समन्वय है कि भगवती दुर्गा सम्पूर्ण देवों के तेज से निकली है, इस लिए वह अपने भक्त को उन सकल पदार्थों को दे सकती है, जिन्हें अलग २ देवता देते हैं। इस के प्रत्यक्ष प्रमाण ये हैं कि सतयुग, त्रेता, द्वापर, कलियुग के महापुरुषों की अधिकांश संख्या शक्ति की ही उपासक हो कर ऊपर उठी है। कलियुग में—पूज्य शंकराचार्य, महाकवि कालिदास, श्रीहर्ष, छत्रपति शिवाजी, झांसी की रानी, पं० रामकृष्ण परमहंस, गुरु गोबिन्द सिंह जी, पं० लोकमान्य तिलक, पं० मदनमोहन मालवीय, श्री नेता जी सुभाषचन्द्र बोस जी आदि अनेकानेक विभूतियां इस व्यतीत समय में भी इस बात को प्रत्यक्ष सिद्ध करती हैं, इस से सिद्ध है कि माँ की सेवा करने वाली सन्तान अलौकिक शक्ति से सम्पन्न हो कर संसार में

क्या २ नहीं कर सकती । इस के अतिरिक्त सब देवताओं में गणेश तथा दुर्गा की जो महिमा व आदरणीयता है, वह किसी से छिपी नहीं है। सभी कार्यों के आरम्भ में गणेश व लक्ष्मी का पूजन अनादि काल से चला आ रहा है ।

जिन कार्यों को (महिषासुर, शुंभ निशुम्भादि दैत्यों के वध को) कोई देवता न कर सका उसे भगवती ने अकेले सहज ही कर दिखाया। और दुर्गा पाठ करने का माहात्म्य भी बहुत है, जैसे मार्कण्डेय पुराण में लिखा है—

**स्तवस्य तस्य पठनात् सर्वसौख्यं लभेद् ध्रुवम् ,तस्मिन् देव्याः स्तवे पुण्ये मन्त्राः सप्तशतं शिवे।**
**तस्मात् सप्तशती नाम स्तवं परमदुर्लभम् , स्तवस्य पठनादेव सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ॥**

अर्थात्—दुर्गा सप्तशती के पाठ करने से सब उपद्रव नाश हो जाते हैं और सुख की प्राप्ति होती है।

डामर तन्त्र में लिखा है—

**यथाश्वमेधः क्रतुषु देवानां च यथा हरिः, स्तवानामपि सर्वेषां तथा सप्तशती स्तवः ।**
**नातः परतरं स्तोत्रं किंचिदस्ति वरानने, भुक्ति मुक्ति-प्रदं पुण्यं पावनानां च पावनम् ॥**

मातेश्वरी श्री दुर्गा भगवती की उत्पत्ति तथा उस के चरित्रों का वर्णन मार्कण्डेय पुराणान्तर्गत देवी-माहात्म्य में हैं। वह देवी माहात्म्य ७०० श्लोकों में वर्णित हैं, अतः वह माहात्म्य 'दुर्गा सप्तशती' के नाम से

लोक में विख्यात है। उसी माँ दुर्गा शक्ति की उपासना भारतीय चिरकाल से करते चले आये थे और शक्तिशाली बने हुए थे। इस लिए भारतीय जनता को चाहिये कि फिर से उसी भगवती का विधिपूर्वक पूजन कर के अपने आप को शक्तिशाली बनावें।

इस दुर्गा सप्तशती के तेरहवें अध्याय में लिखा है कि भगवती की आराधना कर के राजा सुरथ और समाधि नाम वैश्य का मनोरथ सिद्ध हुआ, उसी प्रकार प्रत्येक व्यक्ति का जो भगवती की विधिपूर्वक उपासना करे, मनोरथ सिद्ध हो सकते हैं। देवी की उपासना का मार्ग सुगम नहीं है, और उस को प्रत्येक मनुष्य जानता भी नहीं है इस कारण मनोरथ की सिद्धि भी नहीं होती। जब सिद्धि नहीं होती तब लोगों का विश्वास उस पर नहीं रहता यह एक स्वाभाविक बात है। यद्यपि भगवती इतनी दयालु है कि केवल १०० बार दुर्गा सप्तशती के पाठमात्र के करने से मनोरथ सिद्ध कर देती है, परन्तु पाठ एकाग्र चित्त हो कर विधि विधान से होना चाहिये। यदि ऐसा नहीं होता तो हमारे मनोरथों की सिद्धि नहीं हो सकती। आज कल प्रायः जा सिद्धि नहीं होती, उस का मुख्य कारण विधि विधान का न जानना ही है। अतः विधिपूर्वक एकाग्र-चित्त हो कर पाठ करना चाहिये और लाभ उठाना चाहिए।

## अङ्ग न्यासः

करन्यास में हाथ की विभिन्न अंगुलियों और हाथ के पृष्ठ भाग में मन्त्रों का न्यास (स्थापना) किया जाता है, इस प्रकार अङ्गन्यास में हृदयादि में अङ्गों में मन्त्रों की स्थापना होती है। मन्त्रों को चेतन

और मूर्तिमान् मान कर उन उन अङ्गों का नाम ले कर उन मन्त्रमय देवताओं का ही स्पर्श और वन्दन किया जाता है, ऐसा करने से पाठ या जप करने वाला स्वयं मन्त्रमय हो कर देवताओं द्वारा सुरक्षित हो जाता है। उस के बाहर भीतर की शुद्धि होती है, दिव्य बल प्राप्त होता हैं और साधना निर्विघ्नता पूर्वक पूर्ण तथा परम लाभदायक होती है।

इस पुस्तक में पाठ करने की विधि स्पष्ट, सरल दी गई है। इस के मूल पाठ को विशेषतः शुद्ध रखने का प्रयास किया गया है, इस में श्लोकों के साथ हवन की आहुतियों की वस्तुएँ तथा हवन विधि दे कर पुस्तक को अति उत्तम और लाभदायक बना दिया गया है। क्योंकि मनुष्य भूलने वाला है। इस कारण यदि कोई अशुद्धि रह जाये तो ऐसी भूल के लिए हमें सूचित करें जिस से भविष्य में उस का सुधार किया जा सके।

रामशरण ज्योतिषी
दिवाकर कर्ता, जालन्धर।

# पाठ विधि

श्री दुर्गा जी के उपासक को चाहिये कि वह स्नान कर के शुद्ध आसन पर पूर्वाभिमुख हो कर बैठे और शिखा बांधकर आचमनादि करके सन्ध्या प्राणायाम करके गणपत्यादि देवताओं का पूजन आदि करके हाथ में जल लेकर संकल्प करे।

रात्रिसूक्त के बाद सकल्प के उपरान्त पुस्तक-पूजन कर के शापोद्धार तथा उत्कीलन कर के कवच,

अ   ा, कीलक तथा रात्रिसूक्त का पाठ करना उचित है। अंगन्यास और १०८ बार नवार्ण मन्त्र का जप कर के दुर्गा सप्तशती का पाठ करना चाहिये । पाठ के अन्त में पुनः विधिपूर्वक १०८ बार नवार्ण मन्त्र का जप कर के देवीसूक्त तथा तीनों रहस्यों का पाठ करना चाहिये।

रात्रिसूक्त भी दो प्रकार के हैं वैदिक और तान्त्रिक । वैदिक-रात्रिसूक्त ऋग्वेद की आठ ऋचाएँ हैं और तान्त्रिक तो दुर्गा सप्तशती के प्रथमाध्याय में है। यहां दोनों दिये जाते हैं ।

जिस मनुष्य को एक ही दिन में पूरे पाठ का अवसर न मिले, वह एक दिन में केवल मध्यम चरित्र का, दूसरे दिन शेष दो चरित्रों का पाठ करे । इस के अतिरिक्त जो प्रतिदिन नियमपूर्वक पाठ करते हैं और एक दिन में पूरा पाठ न कर सकते हों वह पहिले दिन पहला अध्याय, दूसरे दिन दूसरा, तीसरा

---

चूंकि सप्तशती सर्वस्व के उपासना क्रम में पहिले शापोद्धार कर के बाद में षडङ्ग सहित पाठ करने का निर्णय किया गया है ।

नवार्ण मन्त्र का जप सप्तशती पाठ के पहले और अन्त में करना चाहिये क्योंकि डामर तन्त्र में लिखा है— ''शतमादौ शतम् चान्ते जपेन् मन्त्रनवार्णकम्। चण्डीं सप्तशतीं मध्ये संपुटोऽयमुदाहृतः ।।'' इति

कवच, अर्गल, कीलक और तीनों रहस्य दुर्गा सप्तशती पाठ के षट् अंग हैं दुर्गा पाठ के साथ इन का पाठ भी अवश्य होना चाहिये। जैसे कात्यायनी तन्त्र में लिखा है:—अङ्गहीनो यथा देहि सर्व कर्मसु न क्षमः। अङ्ग षट्के विहीनात्तु तथा सप्तशती स्तुतिः। तस्मादेतत्पठित्वैव जपेत्सप्तशतीं पदाम्। अन्यथा शापमाप्नोति हानिं चैव पदे पदे।

तीसरे दिन, चौथा चौथे दिन, पांचवां, छठा, सातवां और आठवां अध्याय पांचवें दिन, नवम, दशम, छठे दिन ग्यारहवां, सातवें दिन, १२वां, तेरहवां अध्याय करना चाहिये । ऐसा बहुतों ने कहा हैं ।

जिन्हों ने नवरात्रों में नव दिन का पाठ करना हो वह पहिले दिन गणेशादि पूजन के उपरान्त कलश स्थापन करे फिर दुर्गा का पूजन करके प्रतिदिन पाठ करें और नवमी के दिन दुर्गा हवन और कुमारी पूजन करें ।

# सम्पुट पाठ

सम्पुट पाठ दो प्रकार का है उदय और अस्त ।

वृद्धि के लिए उदय और अभिचार के लिए अस्त ।

# उदय संपुट का लक्षण

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ॐ ऐं मार्कण्डेय उवाच ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे सावर्णिः सूर्य्यतनयो यो मनु कथ्यतेऽष्टमः ।। निशामय तदुत्पत्तिं विस्ताराद् गदतो मम ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे नमः ।

# अस्त संपुट का लक्षण

हुं फट् ओ३म् ऐं मार्कण्डेय उवाच फट् हुम् ।

# साधक के ध्यान योग्य कुछ बातें

पाठ करते समय हिलना नहीं चाहिये। पुस्तक को हाथ में ले कर पाठ नहीं करना चाहिये। अशुद्ध पाठ नहीं करना चाहिये। अर्थ के जाने बिना पाठ नहीं करना चाहिये, गा कर और जल्दी २ पाठ नहीं करना चाहिये। आधा पढ़ना और आधा न पढ़ना ऐसे पाठ नहीं करना चाहिये। मधुर उच्चारण से पृथक् पृथक् पदच्छेद सहित उत्तम स्वर से धीरे २ लय से युक्त अर्थ को जानते हुए पाठ करना चाहिये। पुस्तक हाथ में ले कर पाठ करने से आधा फल मिलता है। मानसिक पाठ का भी न्यून फल है। प्रत्येक अध्याय के अन्त में आने वाले 'इति' 'अध्याय' और वधः शब्द कभी न कहिये। इति बोलने से लक्ष्मी का नाश होता है और वधः बोलने से कुल का नाश होता है। अध्याय बोलने से अपने प्राणों का नाश होता है इसी लिए अध्याय के बाद आचमनी में जल ले कर "**श्री मार्कण्डेय पुराणान्तगति सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः संतु :(यजमानस्य) मम कामाः**" ऐसा कहना चाहिये और जल छोड़ देना चाहिये।

मनोरथ सिद्धि के अभिलाषी को पर-स्त्री और परान्न से दूर रहना चाहिये।

# कलश स्थापन विधिः

मनुष्य स्नान आदि से निवृत्त होकर शुद्धासन पर पूर्वाभिमुख हो कर बैठे और आचमन करे।

ॐ अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा। यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः। पुण्डरीकाक्षाय नमः।

फिर पवित्र धारण कर के स्वस्तिवाचन करे।

फिर नीचे लिखे मन्त्र द्वारा गन्धादि से भूमि पूजन करे।

ॐ भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्स्य धर्त्री। पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳ ह पृथिवीमाहिꣳसीः।

नीचे लिखे मन्त्र से भूमि स्पर्श करे।

ओ३म् महीद्यौः पृथिवी च न इमं यज्ञं मिमिक्षतां पिपृतान्नो भरीमभिः।

नीचे लिखे मन्त्र से यव फैंकें।

ओ३म् ओषधयः समवदन्त सोमेन सह राज्ञा यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तꣳ राजन्पारयामसि।

नीचे लिखे मन्त्र से कलश को स्थापन करे।

ॐ आजिघ्र कलशं मह्या त्वां विशन्त्विन्दवः पुनरूर्जा निवर्तस्वसानः सहस्रं धुक्ष्वोरुधारा पयस्वती पुनर्माविशताद्रयिः।

नीचे लिखे मन्त्र से कलश में जल डाले ।

ॐ वरुणस्योत्तम्भनमसि वरुणस्य स्कम्भसर्जनीस्थो वरुणस्य ऋतसदन्यसि वरुणस्य ऋत-सदनमसि वरुणस्य ऋतसदनमासीद ।। इति कलशे जलम् ।

नीचे लिखे मन्त्र से चन्दनादि डालना ।

ॐ गन्ध द्वारां दुराधर्षां नित्य पुष्टां करीषणीम् । ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपह्वये श्रियम् ।

नीचे लिखे मन्त्र से पवित्रे से जल का मन्थन करे ।

ॐ पवित्रेस्थो वैष्णव्यौ सवितुर्वः प्रसवउत्पुनाम्यच्छिद्रेण पवित्रेण सूर्यस्य रश्मिभिः । पवित्रपते पवित्रपूतस्य यत्कामः पुने तच्छकेयम् ।।

नीचे लिखे मन्त्र से सर्वौषधि कुम्भ में डाले ।

ओ३म या ओषधिः पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा । मनैनु बभ्रणामह ँ शतं धामानिसप्त च ।

नीचे लिखे मंत्र से सप्तमृत्तिका डाले ।

ओ३म् स्योना पृथिविनो भवानृत्तरा निवेशनी । यच्छानः शर्म्मसप्रथाः ।

नीचे लिखे मन्त्र से दूर्वा डाले ।

**ओ३म् कांडात्कांडात्प्ररोहन्ती परुषः परुषस्परि । एवानो दूर्वे प्रतनु सहस्रेन शतेन च ॥**

नीचे लिखे मन्त्र से पञ्चपलल्व (आदि के पते) डालें ।

**ओ३म् अश्वत्थेवो निषदनं पर्णे वो वसतिष्कृता गोभाज इतिकलासथ यत्समवथ पूरुषम् ।**

नीचे लिखे मन्त्र से पञ्चरत्न डाले ।

**ओ३म् परिवाजपतिः कविरग्निर्हव्यान्यक्रमीत् । दधद्रत्नानि दाशुषे ।**

फिर नीचे लिखे मन्त्र से धान्य डाले ।

**ॐ धान्यमसि धिनुहि देवान्प्राणायत्त्वोदानायत्वा व्यानायत्वा दीर्घामनुप्रसितिमायुषेन्धा-न्देवो वः सविता हिरण्यपाणिः प्रतिगृभ्णात्वच्छिद्रेण पाणिना चक्षुषे त्वा महीनां पयोसि । इति धान्यम् ।**

नीचे लिखे मन्त्र से पूगीफल डाले ।

**ॐ या फलिनीर्याऽअफलाअपुष्पायाश्च पुष्पिर्णी । बृहस्पति प्रसूतास्तानो मुञ्चत्व ँ हसः ।**

नीचे लिखे मन्त्र से दक्षिणा रखे ।

**ॐ हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकआसीत् । सदाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै**

देवाय हविषा विधेम । इति द्रव्यम् ।

नीचे लिखे मन्त्र से कलश के ऊपर पूर्णपात्र स्थापन करे ।

ॐ पूर्णादर्वि परापत सुपूर्णा पुनरापत । वस्नेव विक्रीणावहा इषमूर्जँ शतक्रतो: ॥

नीचे लिखे मन्त्र से श्री फल (नारियल) को लाल कपड़े में लपेट कर पूर्ण पात्र पर रखे ।

ॐ श्रीश्चते लक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौव्यात्तम् इष्णन्निषाण मुम्मइषाण सर्वलोकम्म इषाण ॥

नीचे लिखे मन्त्र से वरुन में जलका आवाहन करे ।

ॐ तत्वायामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानोहविर्भिः ।
अहेडमानो वरुणेह वोद्धयरुश ँ समान आयुः प्रमोषीः ॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वः अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकम् आवाहयामि स्थापयामि ।

नीचे लिखे मन्त्र से ध्यान करे ।

वरुणः पाशभृत्सौम्यः प्रतीच्यां मकराश्रयः । पाशहस्तात्मको देवो जलराश्यधिपो महान् ।

फिर हाथ में चावल ले कर प्रतिष्ठा करे।

ओ३म मनोजूतिर्जुषतामाज्यस्य बृहस्पतिर्यज्ञमिमं तनोत्वरिष्टं यज्ञँ समिमं दधातु। विश्वेदेवा स इह मादयन्तामों प्रतिष्ठ। ॐ वरुणाय नमः सुप्रतिष्ठितो वरदो भव इति प्रतिष्ठाप्य॥

ओ३म् भूर्भुवः स्वः अपां पतये वरुणाय नमः इति मन्त्रेण षोडशोपचारैः पंचोपचारैर्वा सम्पूज्य ओ३म् तत्वायामीति पुष्पाञ्जलिं समर्प्य ओ३म् अनेन पूजनेन वरुणः प्रीयतामिति जलं क्षिपेत्। - गङ्गाद्यावाहनम् ओ३म् सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः। आयान्तु मम शान्त्यर्थं दुरित क्षयकारकाः।

नीचे लिखे मन्त्रों से कलश के ऊपर चावल फैंको।

ओ३म् ऋग्वेदाय नमः। ओ३म् यजुर्वेदाय नमः। ओ३म् सामवेदाय नमः। ओ३म् अथर्ववेदाय नमः। ॐ कलशाय नमः। ॐ रुद्राय नमः। ॐ समुद्राय नमः। ओ३म् गंगायै नमः। ॐ यमुनायै नमः। ॐ सरस्वत्यै नमः। ॐ कलशकुम्भाय नमः।

नीचे लिखे मन्त्रों द्वारा अनामिका अंगुली से कलश को स्पर्श करे

ओ३म् कलशस्य मुखेविष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः। मूले तस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः।१। कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपावसुन्धरा। ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामोवेद ह्यथर्वणः ॥२॥ अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशाम्बुसमाश्रिताः। अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ॥३॥ आयान्तु यजमानस्य दुरितक्षयकारकाः॥ ततः गायत्र्यादिभ्यो नमः॥

फिर प्रार्थना करे।

ओ३म् देव दानव संवादे मथ्यमाने महोदधौ। उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ।१।त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः। त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ।२। शिवः स्वयं त्वमेवासि विष्णुस्त्वं च प्रजापतिः। आदित्या वसवो रुद्रा विश्वे देवाः सपैतृकाः ।३ त्वयि तिष्ठन्ति सर्वेऽपि यतः कामफल प्रदाः। त्वत्प्रसादादिं कर्म कर्तुमीहे जलोद्भव। सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा। ॥५॥ नमो नमस्ते स्फटिकप्रभाय सुश्वेतहाराया सुमंगलाय सुपाशहस्ताय झषासनाय जलाधिनाथाय नमो नमस्ते ॥

# अथ दुर्गापूजन

हाथ जोड़ कर आवाहन करे।

ॐ आगच्छेह महादेवि ! सर्वसम्पत्प्रदायिनी ! यावद् व्रतंसमाप्येत् तावत्त्वं सन्निधौ भव ॥

आसन के लिए पुष्प हाथ में ले कर नीचे लिखा मन्त्र पढ़े।

अनेकरत्नसंयुक्तं नानामणि गुणान्वितम्। कार्तस्वरमयं दिव्यमासनं प्रतिगृह्यताम्।

पैर धुलाने के लिए जल ले कर नीचे लिखे मन्त्र से पैर धाए।

गंगादि सर्वतीर्थेभ्यो मया प्रार्थनया हृतम। तोयमेतत् सुखस्पर्शं पाद्यार्थं प्रतिगृह्यताम्।

दूर्वा, तिल, दर्भ, सर्षप, यव, पुष्प, अक्षत, चन्दन जल में मिला कर नीचे लिखे मन्त्र से अर्पण करे।

ॐ कांसोस्मितां हिरण्यप्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम्। पद्मे स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम्।ॐ। त्रिपादूर्ध्व उदैतपुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः । ततो विश्वं व्यक्रामत्साशनानशने अभि। निधीनां सर्वरत्नानां त्वमनर्घ्य गुणाह्वसि। सिंहोपरि स्थितो देवि! गृहाणार्घ्यं नमोस्तु ते।

# आचमनीयम्

ओ३म् सर्व तीर्थ समायुक्तं सुगन्धिनिर्मलं जलम्। आचम्यतां मया दत्तं गृहीत्वा परमेश्वरि।

# स्नानम्

ॐ गङ्गा सरस्वती रेवा-पयोष्णी-नर्मदा जलैः। स्नापितोसि मया देवि ह्यतः शान्तिं कुरुष्व मे ॥

# पुनराचमनीयम्

उच्छिष्टोप्यशुचिर्वापि यस्य स्मरणमात्रतः। शुद्धिमाप्नोति तस्मै ते पुनराचमनीयकम् ॥

# पंचामृत मिला कर स्नान कराना

ॐ पंच नद्यः सरस्वतीमपीयन्ति सस्रोतसः। सरस्वती तु पंचधा सो देशे भवत्सरित् ॥
पयो दधि घृतं चैव मधु च शर्करान्वितम्। पंचामृतं मयानीतं स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥

# शुद्ध जल से स्नान कराना

ॐ शुद्धबालः सर्वशुद्धबालो मणिबालस्तऽआश्विना श्येतः श्येताक्षो ऽरुणस्ते रुद्राय पशुपतये कर्णा यामा अवलिप्ता रौद्रा नमोरूपाः पार्जन्याः ॥

(१) पुनराचमनीयं समर्पयामि नमः।

आगे श्रीसूक्त वा पुरुषसूक्त के १६ मन्त्रों से मूर्ति पर शंख से महा अभिषेक करना चाहिये। इस के उपरान्त

दो वस्त्र(धोती और दुपट्टा) धारण कराकर सिंहासन वा कलश पर दुर्गा मूर्ति को स्थापित कर मूर्ति पूजन करे।

नीचे लिखे मन्त्र से दो वस्त्र धारण करवाये ।

ॐ उपैतुमां देवसखः कीर्तिश्च मणिना सह । प्रादुर्भूतो सुराष्ट्रे अस्मिन् कीर्तिमृद्धिं ददातु मे

तस्मात् यज्ञात्सर्वहुत ऋचः सामानि जज्ञिरे। छन्दाँ सि जज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ।

पट्टकूलयुगंदेवि ! कुंचकेन समन्वितम्। परिधेहि कृपां कृत्वा दुर्गे ! दुर्गतिनाशिनी। पुनराचमनीयम्

## चन्दन चढ़ाना

ॐ श्रीखण्डं चन्दनं दिव्यं गन्धाढयं सुमनोहरम् । विलेपनं च देवेशि ! चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ।

## अक्षत चढ़ाना

ॐ अक्षताश्च सुरश्रेष्ठा कुंकमाक्ता सुशोभिताः । मया निवेदिता भक्त्या गृहाण परमेश्वरि ।

## पुष्प चढ़ाना

पुष्पैर्नानाविधैर्दिव्यैः कुमुदैरथ चम्पकैः । पूजा ते क्रियते देवि पुष्पाणि प्रतिगृह्यताम् ।

# सौभाग्य द्रव्याणि

ओ३म् श्वेतचूर्ण-रक्तचूर्णहरिद्रा कुंकुमान्वितैः । नानापरिमल द्रव्यै प्रीयतां परमेश्वरि ।

# धूप अर्पण करना

दशांगं गुग्लं धूपं चन्दनागरु संयुतम् । समर्पितं मया भक्त्या महादेवि प्रतिगृह्यताम् ॥

# दीपक

घृतवर्ति समायुक्तं महातेजो महोज्वलम् । दीपं दास्यामि देवेशि ! सुप्रीता भव सर्वदा ॥

# नैवेद्य

ओ३म् नैवेद्यं गृह्यताम् देवि भक्ति मे ह्यचलां कुरु । ईप्सितं मे वरं देहि परत्रेह परां गतिम् ।

# अथ संकल्प

हाथ में जल लेकर संकल्प करे, संकल्प के उपरान्त हाथ का जल पृथ्वी पर छोड़ दें ।

ॐ विष्णुःविष्णुःविष्णुः। श्री ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्रीश्वेतवाराहकल्पे वैवस्वतमन्वन्तरे अष्टा-

दीपक में इतना घी रहना चाहिये जो पूरे पाठ के समय तक जल सके तथा उसे पुस्तक के दक्षिण और भूमि पर रोला का षट् चक्र बना कर उस के ऊपर रखना चाहिये ।

विंशतितमे युगे कलियुगे प्रथमचरणे जम्बूद्वीपे भारतवर्षे आर्यावर्ते अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकतिथौ अमुकवासरान्वितायाम् सकलशास्त्र-श्रुति-स्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्तिकामः अमुकगोत्रोत्पन्नः अमुकशर्मा अहं सर्वाभीष्टसिद्ध्यर्थं, सर्वापन्निवारणार्थं हर्षविजयकामनासिद्ध्यर्थं श्रीमहाकाली, महालक्ष्मी, महासरस्वती देवता प्रीत्यर्थं शापोद्धारकवचार्गला कीलकरात्रिसूक्तन्यासनवार्णजप-सप्तशतीन्यासध्यानसहित-चरित्रसम्बन्धिविनियोगन्यासध्यानपूर्वकं च 'मार्कण्डेय उवाच ! सावर्णि सूर्यतनयो यो मनुः कथ्यतेऽष्टमः इत्याद्यारभ्य 'सावर्णिर्भविता मनुः' इत्यन्तं दुर्गासप्तशतीपाठं तदन्ते न्यासविधिसहितनवार्णमन्त्रजपं वेदतन्त्रोक्तदेवीसूक्तपाठं रहस्यत्रयपठनं करिष्ये ।

## पुस्तक पूजन

इस प्रकार प्रतिज्ञा (संकल्प) कर के देवी का ध्यान करते हुए पञ्चोपचार की विधि से पुस्तक की पूजा नीचे लिखे मन्त्र से करें ।

ओ३म् नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम्

फिर योनिमुद्रा का प्रदर्शन करके भगवती को प्रणाम करे, फिर मूल नवार्ण मन्त्र से पीठ आदि में आधारशक्ति की स्थापना करके उसके ऊपर पुस्तक को विराजमान करे ।

# अथ शापोद्धार

ॐ अस्य श्रीचण्डिकास्तोत्रस्य ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्र शापविमोचनमंत्रस्य वसिष्ठनारदसंवादसामवेदाधिपतिब्रह्माण ऋषयः सर्वैश्वर्यकारिणी श्रीदुर्गादेवता चरित्रत्रयं बीजं ह्रीं शक्तिः त्रिगुणात्मस्वरूपचण्डिकाशापविमुक्तौ मम कल्पितकार्यसिद्ध्यर्थे जपे विनियोगः ॥ ॐ (ह्रीं) रीं रेतः स्वरूपिण्यै मधुकैटभमर्दिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद्-विमुक्ता भव । ॐ श्रीं बुद्धिस्वरूपिण्यै महिषासुरसैन्यनाशिन्यै ब्रह्मवसिष्ठ विश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव । ॐ रं रक्तस्वरूपिण्यै

महिषासुरमर्दिन्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद्विमुक्ता भव ।
ॐ क्षुं क्षुधास्वरूपिरायै देववन्दितायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वा-
मित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ॐ छाँ छायास्वरूपिरायै
दूतसंवादिरायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥
ॐ शं शक्तिस्वरूपिरायै धूम्रलोचनघातिन्यै ब्रह्मवसिष्ठ
विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव । ॐ तृं तृषास्वरूपिरायै चराड
मुराडवधकारिरायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता
भव । ॐ क्षां क्षान्तिस्वरूपिरायै रक्तबीजवधकारिरायै ब्रह्म
वसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव । ॐ जां जातिस्व-

रूपिरायै निशुम्भवधकारिरायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव । ॐ लं लज्जास्वरूपिरायै शुम्भवधकारिरायै ब्रह्म वसिष्ठविश्वामित्र शापाद् विमुक्ता भव । ॐ शां शान्तिस्वरूपिरायै देवस्तुत्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव । ॐ श्रं श्रद्धास्वरूपिरायै फलदात्र्यै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ ॐ कां कान्तिस्वरूपिरायै राजवरप्रदायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्र शापाद् विमुक्ता भव ॥ ॐ मां मातृस्वरूपिरायै अनर्गलमहिमसहितायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव । ॐ ह्रीं श्रीं दुं दुर्गायै सं सर्वैश्वर्यकारिरायै ब्रह्मवसिष्ठ

विश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं नमः शिवायै अभेद्यकवचस्वरूपिरायै ब्रह्मवसष्ठिविश्वामित्र शापाद् विमुक्ता भव । ॐ क्रीं काल्यैः काली ह्रीं फट् स्वाहायै ऋग्वेदस्वरूपिरायै ब्रह्मवसिष्ठविश्वामित्रशापाद् विमुक्ता भव ॥ इत्येवं हि महामंत्रान् पठित्वा परमेश्वरी । चराडी पाठं दिवारात्रौ कुर्यादेव न संशयः ॥ एवं मंत्रं न जानाति चराडीपाठं करोति यः ॥ आत्मनश्चैव दातृणां त्तयं कुर्यान्न संशयः ॥ ॐ ॥

अथ शापोद्धार मंत्रः ॥ ॐ ह्रीं क्लीं श्रीं क्रां क्रीं चरिडका देव्यै शापनानुग्रहं कुरु कुरु स्वाहा सप्तवार जपेत्। अथ उत्कीलन मंत्रः-ॐ श्रीं क्लीं ह्रीं सप्तशति चरिडके उत्कीलनं कुरु कुरु स्वाहा । एकविंतिशवारं जपेत् ।

## ॥ अथ देव्याः कवचम् ॥

ओ३म् नमश्चण्डिकायै ।

### मार्कण्डेय उवाच

ॐ यद्गुह्यं परमं लोके सर्वरक्षाकरं नृणाम् ॥ यन्न कस्यचिदाख्यातं तन्मे ब्रूहि पितामह ॥ १ ॥

ॐ चण्डिकादेवी को नमस्कार है । मार्कण्डेय जी बोले–हे पितामह ! जो इस लोक में गुप्त हो और मनुष्यों की सब प्रकार से रक्षा करने वाला हो और जिसको किसीके सामने कहा भी न हो उसको मुझ से कहिये ॥ १ ॥

ब्रह्मा जी बोले–हे महामुने ! सब प्राणियों का भला करने वाला, गुप्त तथा पवित्र देवी का कवच ही है उसको सुनिये ॥२॥ देवी की नौ मूर्तियां हैं जिनको नवदुर्गा कहते हैं ।उनके नाम ब्रह्माजी ने

यह बताये हैं। प्रथम शैल पुत्री, दूसरी मूर्ति ब्रह्मचारिणी, तीसरी मूर्ति चन्द्रघंटा, चौथी कूष्माण्ड,

ब्रह्मोवाच ॥ अस्ति गुह्यतमं विप्र सर्वभूतोपकारम् । देव्यास्तु कवचं पुण्यं तच्छृणुष्व महामुने ॥ २ ॥ प्रथमं शैलपुत्री च द्वितीयं ब्रह्मचारिणी । तृतीयं चंद्रघण्टेति कूष्माण्डेति चतुर्थकम् ॥३॥ पञ्चमं स्कन्दमातेति षष्ठं कात्यायनीति च । सप्तमं कालरात्रीति महागौरीति चाष्टमम् ॥ ४ ॥ नवमं सिद्धिदात्री च नव दुर्गाः प्रकीर्त्तिताः । उक्तान्येतानि नामानि ब्रह्मणैव महात्मना ॥ ५ ॥

पांचवीं मूर्ति स्कन्दमाता, छटी देवी कात्यायनी, सातवीं कालरात्री, आठवीं महागौरी, नौवीं मूर्ति का नाम सिद्धिदात्री है ॥ ३-५ ॥ जो मनुष्य आग में जल रहा हो, रण में शत्रु से घिर गया हो, भयंकर संकट में फंस गया हो, ऐसा भय से आतुर होकर जो दुर्गा की शरण में

चला जावे ॥ ६ ॥ तो उसका कुछ भी अशुभ नहीं होता, रण संकट में उसके लिये कुछ भी

**अग्निना दह्यमानस्तु शत्रुमध्ये गतो रणे । विषमे दुर्गमे चैव भयार्त्ताः शरणं गताः ॥६॥ न तेषां जायते किंचिदशुभं रण संकटे । नापदं तस्य पश्यामि शोकदुःखभयं न हि ॥७॥ यैस्तु भक्त्या स्मृता नूनं तेषां वृद्धिः प्रजायते । ये त्वां स्मरन्ति देवेशि रक्षसे तान्न संशयः ॥८॥ प्रेतसंस्था तु चामुण्डा वाराही महिषासना । ऐन्द्री गजसमारूढा वैष्णवी गरुडासना ॥९॥**

आपत्ति नहीं आती और न शोक और दुःख होता है ॥७॥ भक्ति से जो तुमको याद करते हैं, उनकी वृद्धि होती है। हे देवी जो तुमको याद करते हैं। उनकी तू निःसन्देह रक्षा करती है ।८। चामुण्डा प्रेत पर बैठी होती है, वाराही भैंसे पर सवारी करती है, ऐन्द्री हाथी पर, वैष्णवी गरुड़

पर आसन लगाये होती है ।९। बैल पर माहेश्वरी, कौमारी मोर पर, हरिप्रिया लक्ष्मी कमल पर बैठी हाथ में कमल लिये है, ।१०। बैल पर सवार ईश्वरी ने श्वेतरूप धारण किया है, हंस पर

माहेश्वरी वृषारूढा कौमारी शिखिवाहना । लक्ष्मीःपद्मासना देवी पद्महस्ता हरिप्रिया ॥ १० ॥ श्वेतरूपधरा देवी ईश्वरी वृषवाहना । ब्राह्मी हंस समारूढा सर्वाभरणभूषिता ॥ ११ ॥ इत्येता मातरः सर्वाःसर्वयोगसमन्विताः । नानाभरणशोभाढ्या नानारत्नोपशोभिताः ॥ १२ ॥ दृश्यन्ते रथमारूढा देव्यः क्रोधसमाकुलाः । शंख चक्रं गदां शक्तिं हलं च मुसलायुधम् ॥ १३ ॥ खेटकं तोमरं

बैठी हुई ब्राह्मी देवी सब आभूषणों से शोभित है ।११। इस प्रकार ये सब माताएं, सब योगशक्तियों से युक्त, अनेक अलंकारों से शोभित, अनेक रत्नों को धारण किये हुए हैं ।१२। सम्पूर्ण

देवियां रथ पर बैठी हुई क्रोध से आकुल शंख, चक्र, गदा, शक्ति, हल और मूसल, खेटक और तोमर परशु तथा पाशकुन्त और त्रिशूल, एवं उत्तम शार्ङ्ग, धनुष नाम के शस्त्रों को दैत्यों के नाश के

चैव परशुं पाशमेव च । कुन्तायुधं त्रिशूलं च -शार्ङ्गमायुधमुत्तमम् ॥ १४ ॥ दैत्यानां देहनाशाय भक्तानामभयाय च । धारयन्त्यायुधानीत्थं देवानां च हिताय वै ॥ १५ ॥ नमस्तेऽस्तु महारौद्रे महाघोरपराक्रमे महाबले महोत्साहे महाभयविनाशिनि ॥ १६ ॥ त्राहि मां देवि दुष्प्रेच्ये शत्रूणां भयवर्द्धिनि

लिए और भक्तों के अभय के लिए तथा देवताओं के कल्याण के लिए ही धारण करती हैं।१३-१५। महा भयंकर और अत्यन्त पराक्रमी महावलवती और महान् उत्साह वाली/देवी तुम महानभय का नाश करनेवालीहो, तुमको नमस्कार है।१६। दुःख से दर्शन देनेवाली शत्रुओं केलिए भय को

बढ़ानेवाली देवी मेरी रक्षा करो, पूर्वदिशामें ऐन्द्री (इन्द्रशक्ति) देवी मेरी रक्षा करे, अग्निदेवता अग्नि कोणमें, वाराही दक्षिण में, नैऋृति में खड्क धारिणी मेरी रक्षा करे। पश्चिममें वारुणी और वायव्य में मृगवाहिनी उत्तर में कौमारी और ईशान में शूलधारिणी देवी रक्षा करे, ब्रह्माणी मेरी

प्राच्यां रक्षतु मामैन्द्री आग्नेय्यामग्निदेवता ॥ १७ ॥ दक्षिणेऽवतु वाराही नैऋृत्यां खड्ग धारिणी । प्रतीच्यां वारुणी रक्षेद्वायव्यां मृगवाहिनी ॥ १८ ॥ उदीच्यां पातु कौमारी ऐशान्यां शूलधारिणी । ऊर्ध्वं ब्रह्माणि मे रक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा ॥ १९ ॥ एवं दशदिशो रक्षेच्चामुण्डा शववाहना । जया

ऊपर की ओर से रक्षा करे, वैष्णवी देवी मेरी नीचेकी ओर से रक्षा करे ॥१७-१९॥ शव पर बैठी २ चामुण्डा दसों दिशाओं में मेरी रक्षा करे। जया आगे से, विजय पीछे की ओर से

मेरी रक्षा करे ॥२०॥ बाईं ओर से अजिता, दक्षिण में अपराजिता रक्षा करे। उद्योतिनी शिखा की, उमा मेरे मस्तक पर विराजमान होकर रक्षा करे ॥२१॥ माला धारण करने वाली

मे चाग्रतः पातु विजया पातु पृष्ठतः ॥२०॥ अजिता वाम-पार्श्वे तु दक्षिणे चापराजिता। शिखामुद्योतिनी रक्षेदुमा मूर्ध्नि व्यवस्थिता ॥ २१ ॥ मालाधरी ललाटे च भ्रुवौ रक्षेद्यशस्विनी त्रिनेत्रा च भ्रुवोर्मध्ये यमघण्टा च नासिके ॥ २२ ॥ शंखिनी चक्षुषोर्मध्ये श्रोत्रयोर्द्वारवासिनी। कपोलौ कालिका रक्षेत्क-

ललाट की और यशस्विनी भौंहों की रक्षा करे, त्रिनेत्रा भ्रकुटियों के मध्य में, यमघण्टा नयनों की रक्षा करे।२२। शंखिनी नेत्रों के मध्य में और कानों मे द्वारवासिनी रक्षा करे कालिका कपोलों की और शाङ्करी कर्ण मूल की रक्षा करे। नासिका में सुगन्धा और ऊपर के ओठ में

चर्चिका रक्षा करे। अमृतकला नीचे के ओंठ में, सरस्वती जिह्वा में रक्षा करे।२४। दांतों में कौमारीऔर कण्ठ देश में चण्डिका रक्षा करे। गले की घण्टी की चित्रघंण्टा, तालुओं की महा-

र्णमूले तु शाङ्करी ॥ २३ ॥ नासिकायां सुगन्धा च उत्तरोष्ठे च चर्चिका । अधरे चामृतकला जिह्वायां च सरस्वती ॥२४॥ दन्तान् रक्षतु कौमारी कण्ठदेशे तु चण्डिका । घण्टिकां चित्रघण्टा च महामाया च तालुके ॥ २५ ॥ कामाक्षी चिबुक रक्षेद्वाचं मे सर्वमंगला । ग्रीवायां भद्रकाली च पृष्ठवंशे

माया रक्षा करे।२५। ठोडी की कामाक्षी और वाणी की सर्वमङ्गला, गर्दन की भद्रकाली, रीढ़ की धनुर्धरी रक्षा करे।२६। कंठ के बाहर की नीलग्रीवा और नलिका की नलकूबरी कंधों की खड्गिनी बाहुओं की वज्रधारिणी, रक्षा करे।२७। हाथों की दण्डिनी और अंगुलियों की अम्बिका, नाखूनों

धनुर्धरी ॥ २६ ॥ नीलग्रीवा बहिः कंठे नलिकां नलकूबरी । स्क-
न्धयोः खड्गिनी रक्षेद्बाहू मे वज्रधारिणी ॥ २७ ॥ हस्तयो-
र्दण्डिनी रक्षेदम्बिका चांगुलीषु च । नखाञ्छूलेश्वरी रक्षेत् कुक्षौ
रक्षेत्कुलेश्वरी ॥ २८ ॥ स्तनौ रक्षेन्महादेवी मनः शोकविना-
शिनी । हृदये ललिता देवी उदरे शूलधारिणी ॥ २९ ॥ नाभौ च
कामिनी रक्षेद् गुह्यं गुह्येश्वरी तथा । पूतना कामिका मेढ्रं गुदे

की शूलेश्वरी, कुक्षि (वखी)की कुलेश्वरी, रक्षा करे ।२८। स्तनों की महादेवी और मन की शोक
को नाश करने वाली रक्षा करे, हृदय की ललिता देवी, उदर की शूलधारिणी रक्षा करे ।२९।
नाभि की कामिनी और गुदा की गुह्येश्वरी देवी रक्षा करे । पूतना कामिका लिङ्ग की और महिष-

वाहिनी गुदा की रक्षा करे।३०। भगवती कटिभाग की और विन्ध्यवासिनी दोनों घुटनों की रक्षा

महिषवाहिनी ॥ ३० ॥ कट्यां भगवती रक्षेज्जानुनी विन्ध्यवासिनी । जंघे महाबला रक्षेत्सर्वकामप्रदायिनी ॥ ३१ ॥ गुल्फयोर्नारसिंही च पादपृष्ठे तु तैजसी । पादांगुलीषु श्री रक्षेत् पादाधस्तलवासिनी ॥ ३२ ॥ नखान्दंष्ट्राकराली च केशाँश्चैवोर्ध्वकेशिनी । रोमकूपेषु कौबेरी त्वचं वागीश्वरी तथा ॥ ३३ ॥ रक्तमज्जावसामांसान्यस्थिमेदांसि पार्वती । अन्त्राणि कालरात्रिश्च पित्तं

करे। सम्पूर्ण कामनाओं को देने वाली महाबली देवी दोनों जंघों की रक्षा करे।३१। घुटनों की नारसिंही और पावों के पिछले भाग की तेजसी रक्षा करे। पैरों की अंगुलियों की श्री देवी, तलुओं

की स्थल वासिनी, रक्षा करे।३२। नखों की दंष्ट्र*कराली और केशों की उर्ध्वकेशिनी रक्षा करे। रोमछिद्रकी कौवेरी, त्वचाकी वागीश्वरी रक्षा करे।३३। खून, चरबी, मज्जा और माँसकी तथा हड्डी

च मुकुटेश्वरी ॥ ३४ ॥ पद्मावती पद्मकोशे कफे चूडामणिस्तथा । ज्वालामुखी नखज्वालामभेद्या सर्वसन्धिषु ॥ ३५ ॥ शुक्रं ब्रह्माणी मे रक्षेच्छायां छत्रेश्वरी तथा । अहंकारं मनो बुद्धिं रक्षेन्मे धर्मधारिणी ॥ ३६ ॥ प्राणापानौ तथा व्यानमुदानं च समानकम् । वज्रहस्ता च मे रक्षेत्प्राणं कल्याणशोभना ॥३७।

मेदे की पार्वती, आँतो की कालरात्री, पित्त की मुकुटेश्वरी, रक्षा करे।३४। मूलाधार पद्मकोष की पद्मावती, कफकी चूडामणि, नखों के तेज की ज्वालामुखी, समस्त जोड़ों की अभेद्य•रक्षा करे।३५। ब्रह्माणी! आप मेरे वीर्य की, और छाया की छत्रेश्वरी रक्षाकरे। मेरे अहंकार, मन और बुद्धि

*जिस की भयंकर दाढ़ें हैं।

•जिसका किसी भी अस्त्र से अभेदन नहीं हो सकता।

की धर्मधारिणी, रक्षा करे ।३६। प्राण,अपान व्यान,उदान तथा समान की वज्रहस्ता रक्षा करे। कल्याण से सुशोभित होने वाली भगवती कल्याण शोभना मेरे प्राण की रक्षा करे ।३७। रस,

रसे रूपे च गन्धे च शब्दे स्पर्शे च योगिनी । सत्त्वं रजस्तमश्चैव रक्षेन्नारायणी सदा ॥ ३८ ॥ आयू रक्षतु वाराही धर्मं रक्षतु वैष्णवी । यशः कीर्तिं च लक्ष्मीं च धनं विद्यां च चक्रिणी ॥ ३९ ॥ गोत्रमिन्द्राणी मे रक्षेत्पशून्मे रक्ष चण्डिके । पुत्रान् रक्षेन्महालक्ष्मीर्भार्यां रक्षतु भैरवी ॥ ४० ॥ पन्थानं सुपथा

रूप, गन्ध, शब्द, स्पर्श आदि के अनुपम में योगिनी,सत्त्वगुण,रजोगुण,तमोगुण की नारायणी रक्षा करे ।३८। वाराही आयु की रक्षा करे और वैष्णवी धर्म की रक्षा करे। यश और कीर्ति, लक्ष्मी,धन और विद्या की चक्रधारण करने वाली रक्षा करे ।३९। इन्द्राणी ! आप मेरे गोत्र की

और चण्डिके ! आप मेरे पशुओं की रक्षा करो। महालक्ष्मी पुत्रों की और भैरवी पत्नी की रक्षा करे ॥४०॥ मार्ग में शुभ करने वाली सुपथादेवी तथा मार्ग की क्षेमकरी रक्षा करे राज्य

रक्षेन्मार्गं क्षेमकरी तथा। राजद्वारे महालक्ष्मीर्विजया सर्वतः स्थिता ॥ ४१ ॥ रक्षाहीनं तु यत्स्थानं वर्जितं कवचेन तु। तत्सर्वं रक्ष मे देवि जयन्ती पापनाशिनी ॥ ४२ ॥ पदमेकं न गच्छेत्तु यदीच्छेच्छुभमात्मनः कवचेनावृतो नित्यं यत्र यत्रैव गच्छति ॥ ४३ ॥ तत्र तत्रार्थलाभश्च विजयः सार्वकामिकः

द्वार में महालक्ष्मी रक्षा करे तथा चारों ओर व्याप्त रहने वाली विजया देवी मेरी रक्षा करे ।४१। जो स्थान कवच में नहीं कहा गया और रक्षा हीन है वह सब की हे पापनाशिनी देवि ! रक्षा करो क्योंकि तुम विजयशालिनी और पाप नाशिनी हो ॥ ४२ ॥ यदि मनुष्य अपना भला चाहे तो

कवच के बिना एक कदम भी बाहर न जावे। कवच का पाठ करके जहां २ प्राणी जाता है ।४३। वहां २ ही उसे धन की प्राप्त तथा सम्पूर्ण कामनाओं की सिद्धि तथा विजय प्राप्ति होती है। जिस

यं यं चिन्तयते कामं तं तं प्राप्नोति निश्चितम् । परमैश्वर्य-मतुलं प्राप्स्यते भूतले पुमान् ॥ ४४ ॥ निर्भयो जायते मर्त्यः संग्रामेष्वपराजितः । त्रैलोक्ये तु भवेत्पूज्यः कवचेनावृतः पुमान् ॥ ४५ ॥ इदं तु देव्याः कवचं देवानामपि दुर्लभम् । यः पठेत्प्रयतो नित्यं त्रिसन्ध्यं श्रद्धयान्वितः ॥ ४६ ॥ दैवी कला

जिस कामना को चिन्तन करता है उसको मनुष्य पाता है मनुष्य कवच के द्वारा परम ऐश्वर्य को पृथ्वी पर पाता है ।४४। कवच से सुरक्षित मनुष्य निर्भय हो जाता है संग्राम में पराजय नहीं होती तीनों लोकों में पूज्य होता है ।४५। यह देवी का कवच

देवताओं को भी दुर्लभ है। तीनों संध्या में जो पुरुष श्रद्धा से इसका पाठ करता है ॥४६॥ उसे देवी कला प्राप्त होती है तथा वह तीनों लोकों में पराजित नहीं होता और *अपमृत्यु

भवेत्तस्य त्रैलोक्येष्वपराजितः। जीवेद्वर्षशतं साग्रमपमृत्यु-विवर्जितः ॥ ४७ ॥ नश्यन्ति व्याधयः सर्वे लूताविस्फोटकादयः। स्थावरं जङ्गमं चैव कृत्रिमं चापि यद्विषम् ॥ ४८ ॥ अभिचारा-णि सर्वाणि मन्त्रयन्त्राणि भूतले। भूचराः खेचराश्चैव जल-

से रहित हो कर सौ वर्ष जीता है।४७। मकरी, चेचक और कोढ़ आदि सम्पूर्ण रोग नष्ट हो जाते हैं। कनेर, भांग अफीम धतूरे आदि का स्थावर विष, सांप और बिच्छू आदि के काटने से चढ़ा

---

*काल मृत्यु अथवा अग्नि, जल, बिजली एवं सर्प आदि से होने वाली मृत्यु को अपमृत्यु कहते हैं।

हुआ जंगम विष तथा अहिफेन और तेल के सहयोग से बनने वाला कृत्रिम विष, यहसभी प्रकार के विष दूर हो जाते हैं।४८। मारण मोहनादि समस्त अभिचारिक प्रयोग और मन्त्र यन्त्र जो पृथ्वी पर हैं पृथ्वी पर विचरने वाले आकाशचारी जलचर और उपदेशिक ।४६। सहज, और वंश से उत्पन्न हुए रोग, तथा डाकिनी, शाकिनी और आकाश में घूमने वाली महाबली

जाश्चोपदेशिकाः ॥ ४९ ॥ सहजा कुलजा माला डाकिनी शाकिनी तथा । अन्तरिक्षचरा घोरा डाकिन्यश्च महाबलाः ॥ ५० ॥ ग्रहभूतपिशाचाश्च यक्षगन्धर्वराक्षसाः । ब्रह्मराक्षसवेतालाः कूष्माण्डा भैरवादयः ॥ ५१ ॥ नश्यन्ति दर्शनात्तस्य कवचे

डाकिनियां ।५०। ग्रह, भूत, पिशाच, यक्ष, गन्धर्व, राक्षस, ब्रह्म राक्षस, बेताल, कूष्माण्ड और भैरव आदि अनिष्ट कारक देवता ।५१। भी हृदय में कवच धारण किये रहने पर उस मनुष्य के

दर्शनमात्र से भाग जाते है। कवच धारी पुरुष को राजा से सम्मान वृद्धि प्राप्त होती है। और उसके तेज की वृद्धि होती है।५२। जो कवच का पाठ करके फिर सप्तशती का पाठ करता

हृदि संस्थिते । मानोन्नतिर्भवेद्राज्ञस्तेजोवृद्धिकरं परम् ॥ ५२ ॥ यशसा वर्द्धते सोऽपि कीर्तिमण्डितभूतले । जपेत्सप्तशतीं चण्डीं कृत्वा तु कवचं पुरा ॥ ५३ ॥ यावद्भूमण्डलं धत्ते सशैलवनकाननम् । तावत्तिष्ठति मेदिन्यां सन्ततिः पुत्रपौत्रिकी ॥ ५४ ॥ देहान्ते परमं स्थानं यत्सुरैरपि दुर्लभम् । प्राप्नोति

है वह पृथ्वी पर कीर्ति और यश को पाता है।५३। जब तक पृथ्वी पर जीता है इसके सन्तान और पुत्र पौत्र स्थित रहते हैं।५४। महामाया की कृपा से वह उस नित्य परम पद को प्राप्त

**पुरुषो नित्यं महामाया प्रसादतः ।। ५५ ।। लभते परमं रूपं शिवेन सह मोदते ।। ॐ ।। ५५ ।।**

होता है जो देवताओं के लिए भी दुर्लभ है ।५५। शिव के संग आनन्द करता है और परम रूप जो मोक्ष है उसे पाता है ।५६।

## ।। इति देव्याः कवचं सम्पूर्णम् ।।

# ॥ अथ अर्गलास्तोत्रम् ॥

ॐ अस्य श्री अर्गला स्तोत्र मन्त्रस्य विष्णु ऋषिः अनुष्टुप् छन्दः श्रीं महालक्ष्मीः देवता श्री जगदम्बा प्रीतये सप्तशती पाठाङ्गत्वेन जपे विनियोगः ।

## ॐ नमश्चण्डिकायै ॥

मार्कण्डेय उवाच ।

ॐ जयन्ती मङ्गला काली भद्रकाली कपालिनी । दुर्गा क्षमा शिवा धात्री स्वाहा स्वधा नमोऽस्तु ते ॥ १ ॥ जय त्वं देवि चामुण्डे जय भूतार्तिहारिणि । जय सर्वगते देवी कालरात्रि नमोऽस्तु ते ॥ २ ॥ मधुकैटभविद्रावि विधातृवरदे नमः

ओ३म् चण्डिका देवी को नमस्कार है। मार्कण्डेय जी कहते हैं जयन्ती, मंगला काली, भद्रकाली, कपालिनी, दुर्गा, क्षमा, शिवा धात्री, स्वाहा और स्वधा नाम वाली देवी तेरे लिए नमस्कार है ।१। हे देवी चामुण्डे, तेरी जय हो, हे प्राणियों के दुःख नाश करने वाली तेरी जय हो। हे सब में व्याप्त रहने वाली देवी तेरी जय हो, काल रात्रि तेरे लिए नमस्कार हो ।२। हे

रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ३ ॥ महि-
षासुरनिर्णाशि भक्तानां सुखदे नमः । रूपं देहि जयं
देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ४ ॥ रक्तबीजवधे देवि चण्ड-
मुण्डविनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि

मधु और कैटभ का नाश करने वालीं, हे ब्रह्मा को वर देने वालीं तेरे लिये नमस्कार है। तुम हमें रूप (आत्मा स्वरूप का ज्ञान) दो, जय (मोहपर विजय) और यश दो तथा काम क्रोध आदि शत्रुओं का नाश करो।३। महिषासुर का नाश करने वाली और भक्तों को सुख देने वाली तुम्हारे लिए नमस्कार है रूप दो, यश दो और शत्रु का नाश करो।४। हे रक्त बीज को मारने वाली हे चण्ड-मुण्ड का संहार करने वाली देवी, रूप दो, जय दो और शत्रु का नाश

॥ ५ ॥ शुम्भस्यैव निशुम्भस्य धूम्राक्षस्य च मर्दिनी ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ६ ॥
वन्दिताङ्घ्रियुगे देवि सर्वसौभाग्यदायिनि । रूपं देहि जयं
देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥७॥ अचिन्त्यरूपचरिते सर्व-
शत्रुविनाशिनि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो

करो ॥५॥ हे शुम्भ, निशुम्भ और धूम्राक्ष के मर्दन करने वाली देवी रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥६॥ हे वन्दित चरण वाली, सबको सौभाग्य देने वाली देवी, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥७॥ हे देवी ! तेरे रूप और चरित्र अचिंत्य हैं। और

जहि ॥ ८ ॥ न तेभ्यः सर्वदा भक्त्या चण्डिके दुरितापहे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥९॥ स्तुवद्भ्यो भक्तिपूर्वं त्वां चण्डिके व्याधिनाशिनी । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥१०॥ चण्डिके सततं ये त्वामर्चयन्तीह भक्तितः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ ११ ॥

तुम सब शत्रुओं का नाश करने वाली हो । हमें रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का संहार करो॥८॥पापों का नाश करने वाली हे चण्डिके भक्ति से नम्र हुये प्राणियों केलिये रूप दो,जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो ॥९॥ व्याधिका नाश करने वाली हे चण्डिके भक्ति से तेरी स्तुति करने वालों के लिये रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥१०॥ हे चण्डिके इस संसार में जो भक्ति पूर्वक तुम्हारी पूजा करते हैं उनको रूप दो,जय दो,यश दो,और

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १२ ॥ विधेहि द्विषतां नाशं विधेहि बलमुच्चकैः । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १३ ॥ विधेहि देवि कल्याणं विधेहि परमां श्रियम् । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १४ ॥ सुरासुरशिरोरत्ननिघृष्ट-चरणेऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि । १५ ।

शत्रु का नाश करो ॥११॥ मुझे सौभाग्य और आरोग्य दो, और परमसुख दो, रूप दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥१२॥ मेरे शत्रु का नाश करो और मुझे अधिक बल दो । रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रुओं का नाश करो ॥१३॥ हे देवी मेरा परम कल्याण करो और अधिक धन दो, रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रु का संहार करो ॥१४॥ सुर और असुरों के शिर रत्नों से स्पर्शित चरणों वाली अम्बिके देवी, रूप दो, जय दो, यश और शत्रु का नाश

विद्यावन्तं यशस्वन्तं लक्ष्मीवन्तं जनं कुरु । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १६ ॥ प्रचण्डदैत्यदर्पघ्ने चंडिके प्रणताय मे । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १७ ॥ चतुर्भुजे चतुर्वक्त्रसंस्तुते परमेश्वरि । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १८ ॥ कृष्णेन संस्तुते देवि शश्वद्भक्त्या

करो ॥१५॥ अपने भक्तजन को विद्वान कीर्तिमान और धनवान बनाओ तथा रूप दो, जय दो यश दो और शत्रु का नाश करो ॥१६॥ हे प्रचंड राक्षसों के गर्व का नाश करने वाली, चंडिके मुझ शरणागत को रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥१७॥ हे चार भुजा वाली ब्रह्मासे स्तुति की हुई परमेश्वरी मेरे लिये रूपदो, जय दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥१८॥

सदाम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ १६ ॥
हिमाचलसुतानाथसंस्तुते परमेश्वरी । रूप देहि जय देहि यशो
देहि द्विषो जहि ॥ २० ॥ इन्द्राणीपतिसद्भावपूजिते परमेश्वरि ।
रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २१ ॥ देवि प्रचण्ड
दोर्दण्डदैत्यदर्पविनाशिनी । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि-

भक्ती से सदा भगवान विष्णु 'कृष्ण' से स्तुति की हुई, हे देवि रूप दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥१६॥ हे शिवजी से स्तुति की गई परमेश्वरी देवी रूप दो, जय दो, यश दो, और शत्रु का नाश करो ॥२०॥ शचीपति इन्द्र से सच्चे भाव से पूजित हे देवी परमेश्वरी रूप दो, जय दो, यश दो और शत्रु का नाश करो ॥२१॥ प्रचंड भुजदंडों वाले दैत्यों का घमंड नाश करने वाली, देवी ! रूप दो, जय दो और यश प्रदान करो तथा शत्रुओं का नाश करो ।२२। हे भक्त-

द्विषो जहि ॥ २२ ॥ देवि भक्तजनोद्दामदत्तानन्दोदयेऽम्बिके । रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषो जहि ॥ २३ ॥ पत्नीं मनोरमां देहि मनोवृत्तानुसारिणीम् । तारिणीं दुर्गसंसारसा-गरस्य कुलोद्भवाम् ॥ २४ ॥ इदं स्तोत्रं पठित्वा तु महास्तोत्रं पठेन्नरः । स तु सप्तशतीसंख्यावरमाप्नोति सम्पदाम् ॥ २५ ॥

॥ इति देव्या अर्गलास्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥

जनों को अत्यन्त आनन्द देने वाली अम्बिके रूप दो जय दो और यश प्रदान करो तथा शत्रुओं को नष्ट करो ।।२३।। हे देवि ! मन को प्रसन्न करने वाली, इच्छानुकूल चलने वाली, दुर्गम संसार से पार करने वाली, श्रेष्ठ कुलोत्पन्न पत्नी प्रदान करो ।।२४।। जो मनुष्य इस स्तोत्र का पाठ कर महास्तोत्र का पाठ करता है वह सप्तशती संख्या के समान वर व सम्पत्ति को प्राप्त करता है ।।२५।।

# अथ कीलकस्तोत्रम्

ॐ अस्य श्री कीलक स्तोत्रस्य शिव ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः महासरस्वती देवता, श्री जगदम्बा प्रीत्यर्थे सप्तशतीपाठाङ्गत्वेन विनियोगः।

ॐ नमश्चण्डिकायै। मार्कण्डेय उवाच। ॐ विशुद्धज्ञानदेहाय त्रिवेदीदिव्यचक्षुषे। श्रेयः प्राप्तिनिमित्ताय नमः सोमार्द्धधारिणे ॥ १ ॥ सर्वमेतद्विजानीयान्मन्त्राणामपिकीलकम्।

ॐ चण्डिका देवी को नमस्कार है। मार्कण्डेय जी बोले—विशुद्ध ज्ञान ही जिनका शरीर है, वेद ही जिनके तीन नेत्र हैं, जो कल्याण प्राप्ति के हेतु हैं, और मस्तक पर अर्द्धचन्द्र धारण करते हैं, उन भगवान शिव को नमस्कार है ॥१॥ निरन्तर जप करने वाला मनुष्य यदि वह

सोऽपि क्षेममवाप्नोति सततं जाप्यतत्परः ॥ २ ॥ सिद्ध्यन्त्युच्चाटनादीनि वस्तूनि सकलान्यपि । एतेन स्तुवतां देवी स्तोत्रमात्रेण सिद्ध्यति ॥ ३ ॥ न मन्त्रो नौषधं तत्र न किञ्चिदपि विद्यते । विना जाप्येन सिद्ध्येत सर्वमुच्चाटनादिकम् ॥ ४ ॥ समग्राण्यपि सिद्ध्यन्ति लोकशंकामिमां हरः । कृत्वा निमन्त्र-

अभिकीलक मन्त्र को जानता है तो वह निश्चय कल्याण को प्राप्त करता है ॥२॥ जो इस सप्तशती नामक स्तोत्र से स्तुति करते हैं उनके भी उच्चाटन आदि सभी प्रयोजन सिद्ध होते हैं तथा समस्त दुर्लभ वस्तुओं की प्राप्ति होती है ॥३॥ उन्हें किसी मन्त्र, औषधि तथा अन्य किसी साधन के उपयोग की आवश्यकता नहीं रहती । बिना जप के उच्चाटनादि समस्त कर्म सिद्ध हो जाते हैं ॥४॥ व लोक शिका सब कुछ सिद्ध होने की आशंका से भगवान शंकर ने इस

यामास सर्वमेवमिदं शुभम् ॥ ५ ॥ स्तोत्रं वै चण्डिकायास्तु तच्च गुप्तं चकार सः। समाप्तिर्न च पुण्यस्य तां यथावन्नियन्त्रणाम् ॥ ६ ॥ सोऽपि क्षेममवाप्नोति सर्वमेवं न संशयः कृष्णायां वा चतुर्दश्यामष्टम्यां वा समाहितः ॥ ७ ॥ ददाति प्रतिगृह्णाति नान्यथैषा प्रसीदति। इत्थं रूपेण कीलेन महा-

सब शुभ को कील दिया है ॥५॥ और चण्डी के इस सप्तशती स्तोत्र को गुप्त कर दिया है। सप्तशती के पाठ से जो पुण्य प्राप्त होता है उस की समाप्ति नहीं होती ॥६॥ वह निस्सन्देह पूर्ण कल्याण को पाता है, जो कृष्णपक्ष को चतुर्दशी वा अष्टमी को ॥७॥ एकाग्र चित होकर भगवती की सेवा में सर्वस्व समर्पित कर देता है और फिर उसे प्रसाद रूप से लेता है उस पर प्रसन्न होती है अन्य रीति से प्रसन्न नहीं होती इसी प्रकार सिद्धि के प्रतिबन्धक रूप कील के

देवेन कीलितम् ॥ ८ ॥ यो निष्कीलां विधायैनां नित्यं जपति संस्फुटम् । स सिद्धः स गणः सोऽपि गन्धर्वो जायते नरः ॥ ९ ॥ न चैवाप्यटतस्तस्य भयं क्वापीह जायते । नापमृत्यु-वशं याति मृतो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ १० ॥ ज्ञात्वा प्रारभ्य कुर्वीत न कुर्वाणो विनश्यति । ततो ज्ञात्वैव सम्पन्नमिदं प्रा-

द्वारा महादेव ने इसे कील दिया है ॥८॥ जो इस को पूर्वोक्त रीति से निष्कीलन करके प्रति दिन स्पष्ट उच्चारण पूर्वक पाठ करता है वह मनुष्य सिद्ध, गण और गन्धर्व हो जाता है ॥९॥ उसको कहीं भी घूमते हुए भय नहीं होता, न अल्प मृत्यु में पड़ता है और मर कर मोक्ष को प्राप्त करता है ॥१०॥ अतः कीलक को जानकर उसका परिहार कर के ही सप्तशती का पाठ प्रारम्भ करे, न करने वाला नष्ट हो जाता है, इस लिये बुद्धिमान् भली प्रकार जानकर ही इस

रभ्यते बुधैः ॥ ११ ॥ सौभाग्यादि च यत्किंचिद् दृश्यते ललनाजने । तत्सर्वं तत्प्रसादेन तेन जाप्यमिदं शुभम् ॥ १२ ॥ शनैस्तु जाप्यमानेऽस्मिन् स्तोत्रे संपत्तिरुच्चकैः । भवत्येवसमग्रापि ततः प्रारभ्यमेव तत् ॥ १३ ॥ ऐश्वर्यं यत्प्रसादेन सौभाग्यारोग्यसम्पदः । शत्रुहानिः परो मोक्षः स्तूयते सा न किं जनैः ॥ १४ ॥

निर्दोष स्तोत्र का पाठ प्रारम्भ करते हैं ॥११॥ जो सौभाग्य आदि स्त्रियों में देख पड़ता है वह सब इसी का प्रताप है इस लिये इस जप का करना सर्व श्रेष्ठ है ॥१२॥ इस स्तोत्र के मन्दस्वर से पाठ करने पर स्वल्प फल की प्राप्ति होती है और उच्च स्वर से पाठ करने पर सम्पूर्ण फल की प्राप्ति होती है। अतः उच्च स्वर से ही इस का पाठ आरम्भ करना चाहिये ॥१३॥ जिस भगवती के प्रसाद से ऐश्वर्यं, सौभाग्य, आरोग्य, सम्पत्ति प्राप्त होती है और शत्रु नष्ट होते हैं तथा मोक्ष मिलता है उस भगवती की मनुष्यों द्वारा क्यों न स्तुति की जाये ॥१४॥

# अथ वेदोक्तं रात्रि सूक्तम्

ॐ रात्री व्यख्यदायती पुरुत्रा देव्यक्षभिः विश्वा अधिश्रि-
योऽधित ॥ १ ॥ ओर्वप्रा अमर्त्या निवतो देव्युद्वतः । ज्योतिषा
बाधते तमः ॥ २ ॥ निरु स्वसारमस्कृतोषसं देव्यायती । अपेदु
हासते तमः ॥ ३ ॥ सानो अद्य यस्या वयं नि ते यामन्न विद्महि

तत्त्वादि रूप व्यापक इन्द्रियों से सर्वत्र समस्त वस्तुओं को प्रकाशित करने वाली रात्रि रूपा देवी जगत के जीवों के शुभाशुभ कार्यों को विशेष रूप से देखती है और उन के अनुरूप फल की व्यवस्था करने के लिये समस्त विभूतियों को धारण करती है ॥ ये देवी अमर हैं, और सम्पूर्ण विश्व को नीचे तथा ऊपर फैलाने वाली वस्तुओं को व्याप्त कर के स्थित हैं और यह ज्ञान रूपी ज्योति से जीवोंके अज्ञानान्धकार का नाशकर देती है॥२॥परा चिच्छक्ति रूपा रात्रिदेवी आकर

अपनी बहन ब्रह्मविद्यामयी उषा देवी को प्रकट करती है जिससे अविद्यामय अन्धकार स्वतः नष्ट हो जाता है ।३। जैसे रात्रि को पक्षी वृक्षों पर अपने घोंसलों में सुख पूर्वक शयन करते हैं, ठीक उसी तरह रात्रिदेवी की प्रसन्नता से इन के आने पर हम लोग अपने घरों में सुख से सोते हैं ।४। इसी प्रकार उस करुणामयी रात्रीदेवी के अङ्क में सम्पूर्ण ग्रामवासी मनुष्य, चौपायादि पशु, तथा पक्षी तथा पथिक और बाजादि भी सुखपूर्वक सोते हैं ।५। हे रात्रिमयी चिच्छक्ति तुम कृपा करके

वृक्षे न वसतिं वयः ॥ ४ ॥ निग्रामासो अविक्षत नि पद्वन्तो नि पक्षिणः । निश्येनासश्चिदर्थिनः ॥ ५ ॥ यावया वृक्यं वृकं यवय स्तेनमूर्म्ये । अथानः सुतरा भव ॥ ६ ॥ उपमा पेपिशत्तमः कृष्णं

वासनामयी वृकी तथा पापमय बृक को तथा कामादि को हम से दूर करदो और हमारे लिये मोक्षदायिनी एवं कल्याणकारिणी बन जाओ ॥६॥ हे उषादेवी चारों ओर फैला हुआ यह अज्ञानमय काला अंधकार मेरे निकट आ पहुंचा है । आप इसे ऋणकी भांति दूर करो ॥७॥

व्यक्तमस्थित । उष ऋणेव यातय ।। ७ ।। उप ते गा इवाकरं
वृणीष्व दुहितर्दिवः । रात्रि स्तोमं न जिग्युषे ।। ८ ।।

हे रात्रिदेवी ! तुम दूध देने वाली गौ के समान हो, मैं आपकी स्तुति आदि से आप को अपने अनुकूल करता हूं, तथा आपकी कृपा से मैंने कामादि शत्रुओं को जीत लिया है अब आप स्तोत्र हविष्य को भी ग्रहण करो ।।८।।

## ॥ अथ तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम् ॥

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् । निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ १ ॥

## ॥ ब्रह्मोवाच ॥

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका । सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥ २ ॥ अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः । त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥ ३ ॥ त्वयैतद्धार्यते विश्वं

त्वयैतत्सृज्यते जगत् । त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥ ४ ॥ विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने । तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥ ५ ॥ महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः । महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ॥ ६ ॥ प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥ ७ ॥ त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा । लज्जा पुष्टि स्तथातुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ॥ ८ ॥ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शंखिनी चापिनी बाणभुशुण्डी-

परिघायुधा ॥ ९ ॥ सौम्या सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ।
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥ १० ॥ यच्चकिञ्चित्
क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके । तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा
त्वं किं स्तूयसे तदा ॥ ११ ॥ यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पा-
त्यत्ति यो जगत् । सोऽपिनिद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः
॥ १२ ॥ विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च । कारितास्ते
यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ॥ १३ ॥ सा त्वमित्थं
प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता । मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ

मधुकैटभौ ॥ १४ ॥ प्रबोधं च जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु । बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥ १५ ॥

॥ इति रात्रिसूक्तम् ॥

---

इनका अर्थ पहिले अध्याय में दिया हुआ है।



# अथ नवार्णमन्त्र जपविधिः

इस प्रकार रात्रिसूक्त का पाठ करने के पश्चात् निम्नाङ्कित रूप से नवार्णमन्त्र के विनियोग, न्यास और ध्यानादि करे।

नीचे लिखे विनियोग को पढ़ कर जल गिराये।

श्री गणपतिर्जयति। ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्म-विष्णुरुद्रा ऋषयःगायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि श्री महाकाली, महालक्ष्मी महासरस्वत्यो देवताः, ऐं बीजम्, ह्रीं शक्तिः क्लीं कीलकम्, श्रीमहाकाली महालक्ष्मी, महासरस्वती प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः॥

## ॥ अथ ऋष्यादिन्यासः ॥

नीचे लिखे न्यास वाक्यों में से एक एक का उच्चारण करके दाहिने हाथ की अंगुलियों से क्रमशः शिर, मुख हृदय, गुदा, दोनों चरण और नाभि का स्पर्श करे।

ॐ ब्रह्मविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः, शिरसि ॥ ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे। श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवताभ्यो नमः, हृदि। ऐं बीजाय नमः गुह्ये। ह्रीं शक्तये नयः, पादयोः। क्लीं कीलकाय नमः, नाभौ। ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति मूलेन करौ संशोध्य* । ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः। ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः। ॐ क्लीं

---

* इससे हाथों की शुद्धि करके कर न्यास करे।

मध्यमाभ्यां नमः ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः । ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥

## ॥ अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः ॥

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़कर दाहिने हाथों की पांचो अंगुलियो से हृदय आदि अङ्ग का स्पर्श करे।

ॐ ऐं हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ क्लीं शिखायै वषट् । ॐ चामुण्डायै कवचाय‡ हुम् । ॐ विच्चे नेत्र-त्रयाय वौषट् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय* फट् ॥

---

‡दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कंधे को और बायें हाथ की अंगुलियों से दायें कंधे को एक साथ स्पर्श करें

*दाहिने हाथ की शिर के ऊपर से बांई ओर से पीछे की ओर ले जाकर दाहिनी ओरसे आगे ले आए और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये।

# अथ बीजन्यासः

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़कर क्रमशः शिखा आदि का दाहिने हाथ की पांचों अंगुलियों से स्पर्श करें

ॐ ऐं नमः, शिखायाम् ॐ ह्रीं नमः, दक्षिणनेत्रे ॥ ॐ क्लीं नमः, वामनेत्रे। ॐ चां नमः, दक्षिणकर्णे। ॐ मुं नमः, वामकर्णे। ॐ डां नमः, दक्षिणनासापुटे। ॐ यैं नमः वामनासापुटे। ॐ विं नमः, मुखे। ॐ च्चें नमः गुह्ये ॥

# अथ व्यापक न्यासः

प्रत्येक दिशा में चुटकी बजाते हुए न्यास करे।

ॐ ऐं प्राच्यै नमः। ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः। ॐ ह्रीं दक्षिणायै

नमः । ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः । ॐ क्लीं वायव्यै नमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः । ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः ।

## अथ ध्यानम्

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् ।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुकैटभम् ॥१॥

मधु और कैटभ को मारने के लिए ब्रह्मा जी ने ऐसी देवी का स्तवन किया था, जिसके दस हाथों में खड्ग, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिघ, शूल, भुशुण्डि, मस्तक और शङ्ख हैं। उनके

अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां ।
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ॥
शूलं पाश सुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नानना ।
सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ २ ॥
घण्टाशूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं ।

तीन नेत्र हैं। जिसके समस्त अङ्गों में दिव्य भूषण विभूषित हैं। जिसके शरीर की कांति नीलमणि के समान है तथा वे दस मुख और दस पैरों से युक्त है ॥१॥ मैं कमलासन पर बैठी हुई प्रसन्न मुखवाली महिषासुर मर्दिनी भगवती महालक्ष्मी का भजन करता हूं, जो अपने हाथ में अक्षमाला,

हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्त विलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ॥
गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा पूर्वमत्र सरस्वतीमनुभजे
शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥३॥

फरसा, गदा, बाण, वज्र, पद्म, धनुष, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति खड्ग, ढाल, शंख घंटा, मधुपात्र शूल, पाश और चक्र धारण करती हैं ॥२॥ जिनके हाथों में घण्टा, शूल, हल, शंख, मूसल, चक्र धनुष और बाण हैं और शरद ऋतु के शोभा सम्पन्न चन्द्रमा के समान मनोहर जिनकी कान्ति है, जो तीनों लोकों की आधारभूता और शुम्भादि दैत्यों को नाश करने वाली हैं तथा गौरी के शरीर से जो प्रकट हुई हैं, मैं उन महासरस्वती देवी का भजन करता हूं ॥३॥

# अथ मालापूजनम्

नीचे लिखे मन्त्र से माला की पूजा करे ।

ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः

नीचे लिखे मन्त्र से प्रार्थना करे ।

ॐ मां माले महामाये सर्वशक्ति स्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥
ॐ अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

नीचे लिखे मन्त्र से दाहिने हाथ में माला को ग्रहण करके मन्त्र के देवता सविता का ध्यान करता हुआ हृदय में नवार्ण मन्त्र का १०८ बार जप करे ।

ॐ अक्षमालाधिपतये सुसिद्धिं देहि देहि सर्वमन्त्रार्थ साधिनि साधय साधय सर्व सिद्धिं परिकल्पय मे स्वाहा ।

अर्थात् हे महामाये ! सर्व शक्ति रूप माले-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष तेरे ही अधीन हैं, इससे तू मुझे सिद्धि की दाता हो ।

# नवार्णमन्त्र

ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे

नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर जप देवी के वाम हस्त में निवेदन करे

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम् ।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि ॥

# सप्तशतीन्यासः

नीचे लिखे पूर्वक सप्तशती के विनियोग, न्यास और ध्यान करने चाहियें ।

प्रथममध्यमोत्तर चरित्राणां ब्रह्माविष्णुरुद्रा ऋषयः, श्री महाकाली महालक्ष्मी महासरस्वत्यो देवताः गायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि, नन्दाशाकम्भरी भीमाः शक्तयः,

रक्तदन्तिका दुर्गा भ्रामर्यो बीजानि, अग्निवायु सूर्यास्तत्त्वानि ऋग्यजुः सामवेदा ध्यानानि, सकल कामना सिद्धये श्री महा काली महालक्ष्मी महासरस्वती देवता प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ।

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डी परिघायुधा ॥ अंगुष्ठाभ्यां नमः । ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके । घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ तर्जनीभ्यां नमः ॥ ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे । भ्रामणे-नात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ मध्यमाभ्यां नमः ॥ ॐ

सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते । यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ अनामिकाभ्यां नमः ॥

ॐ खड्ग शूल गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके । करपल्लव सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ कनिष्ठिकाभ्यां नमः ॥

ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥ करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥

ॐ खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शङ्खिनी चापिनी बाण भुशुण्डी परिघायुधा ॥ हृदयाय नमः ।

ॐ शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके ।
घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ शिरसे स्वाहा ॥ ॐ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे । भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ शिखायै वषट् ॥ ॐ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते । यानि चात्यर्थ घोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ कवचाय हुम् ॥

ॐ खड्ग शूल गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके । करपल्लव सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ नेत्रत्रयाय वौषट् ॥

ॐ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते । भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥ अस्त्राय फट् ॥



# अथ दुर्गा सप्तशती

## प्रथमोऽध्यायः

॥ विनियोगः ॥

प्रथमचरित्रस्य ब्रह्मा ऋषिः, महाकाली देवता गायत्री छन्दः, नन्दा शक्तिः, रक्तदन्तिका वीजम्, अग्निस्तत्त्वम्, ऋग्वेदः स्वरूपं, श्रीमहाकालीप्रीत्यर्थे प्रथमचरित्रजपे विनियोगः ।

## अथ ध्यानम्

खड्गं चक्रगदेषुचापपरिघाञ्छूलंभुशुण्डीं शिरः ।

शंखं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्गभूषावृताम् । नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकाम् । यामस्तौत् स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुं कैटभम् ॥

## ॥ ॐ ऐं मार्कण्डेय उवाच ॥

सावर्णिः सूर्यतनयो यो मनुःकथ्यतेऽष्टमः । निशामय तदुत्पत्तिं विस्तराद्गदतो मम ॥ २ ॥ महामायानुभावेन यथा

श्री मार्कण्डेय जी बोले ॥१॥ मैं सूर्य के पुत्र सावर्णि को जो आठवें मनु कहलाते हैं उत्पति विस्तार से कहता हूं सुनो ॥२॥ सूर्य के पुत्र भाग्यशाली सावर्णि महामाया की कृपा से जैसे मन्वन्तर के स्वामी हुए, वह भी सुनो ॥३॥ स्वारोचिष मन्वन्तर में चैत्र

वंशी सुरथ नाम के राजा थे, उन का समस्त भूमण्डल पर अधिकार था ।।४।। वह प्रजा का

मन्वन्तराधिपः । स बभूव महाभागःसावर्णिस्तनयो रवेः ॥ ३ ॥
स्वारोचिषेऽन्तरे पूर्वं चैत्रवंशसमुद्भवः । सुरथो नाम राजा-भूत्समस्ते क्षितिमण्डले ॥ ४ ॥ तस्य पालयतः सम्यक् प्रजा पुत्रानिवौरसान् । बभूवुः शत्रवो भूपाः कोलाविध्वंसिनस्तदा ॥ ५ ॥ तस्य तैरभवद् युद्धमतिप्रबलदण्डिनः । न्यूनैरपि स तैर्युद्धे कोलाविध्वंसिभिर्जितः ॥ ६ ॥ ततः स्वपुरमायातो

निज पुत्रों की भांति पालन करते थे तो भी कोलाविध्वंसी नामक क्षत्रिय उनके शत्रु हो गये।।५।। प्रबल दण्ड देने वाले राजा सुरथ का उनके साथ युद्ध हुआ, यद्यपि कालाविध्वंसी संख्या में कम थे तोभी राजा सुरथ युद्ध में उन से हार गये ॥६॥ अपने प्रबल शत्रुओं से हारा हुआ राजा

सुरथ अपने नगर में आकर अपने देश का शासन करने लगा ॥७॥ वहां पर भी उस दुर्बल
निजदेशाधिपोऽभवत् । आक्रान्तः स महाभागस्तैस्तदा प्रबलारिभिः ॥ ७ ॥ अमात्यैर्बलिभिर्दुष्टैर्दुर्बलस्य दुरात्मभिः । कोशो बलं चापहृतं तत्रापि स्वपुरे ततः ॥ ८ ॥ ततो मृगयाव्याजेन हृतस्वाम्यः स भूपतिः । एकाकी हयमारुह्य जगाम गहनं वनम् ॥ ९ ॥ स तत्राश्रममद्राक्षीद् द्विजवर्यस्य मेधसः । प्रशान्तश्वपदाकीर्णं मुनिशिष्योपशोभितम् ॥ १० ॥ तस्थौ
राजा का खज़ाना उसके दुष्ट बलवान मन्त्रियों ने हरण कर लिया ॥८॥ राज्य च्युत राजा सुरथ शिकार के बहाने अकेले घोड़े पर चढ़ कर घने वन को चले गये ॥९॥ उस वन में राजा ने हिंसा के स्वभाव से रहित पशुओं से पूर्ण तथा शिष्यों से शोभायमान महर्षि मेधा

का आश्रम देखा ॥१०॥ इधर उधर भ्रमण करता हुआ राजा उस मुनि के आश्रम में कुछ समय तक ठहरा और मुनिने राजा का उचित सत्कार किया ॥११॥ नगर की ममता के आकर्षण से

कञ्चित्स कालं च मुनिना तेन संस्कृतः । इतश्चेतश्च विचरंस्तस्मिन्मुनिवराश्रमे ॥ ११ ॥ सोऽचिन्तयत्तदा तत्र ममत्वाकृष्टचेतनः । मत्पूर्वैः पालितं पूर्वं मया हीनं पुरं हि तत् ॥ १२ ॥ मद् भृत्यैस्तैरसद्वृत्तैर्धर्मतः पाल्यते न वा । न जाने स प्रधानो मे शूरहस्ती सदा मदः ॥ १३ ॥ मया वैरिवशं यातः कान् भोगानुपलप्स्यते । ये ममानुगता नित्यं प्रसादधन-

राजा मन में सोचने लगा कि जिस नगर को मेरे पूर्वजों ने पाला अब वह मुझ से रहित है ॥१२॥ दुर्व्यवहारी मेरे नौकर न जाने प्रजा का धर्म पूर्वक पालन करते हैं वा नहीं, मेरा मस्ती

शूरवीर प्रधान हाथी अब शत्रुओं के अधीन होकर न जाने किन भोगों को भोगता होगा। जो लोग मेरी कृपासे धन तथा भोजन द्वारा सदा मेरे अनुचर थे, वे निश्चय ही अब दूसरे राजाओं का अनुसरण करते होंगे॥ निरर्थक व्यय करने वाले मेरे नौकरों द्वारा निरन्तर व्यय होने

भोजनैः ॥ १४ ॥ अनुवृत्तिं ध्रुवं तेऽद्य कुर्वन्त्यन्यमहीभृताम् ।
असम्यग्व्ययशीलैस्तैः कुर्वद्भिःसततं व्ययम् ॥ १५ ॥ संचितः
सोऽतिदुःखेन क्षयं कोशो गमिष्यति । एतच्चान्यच्च सततं-
चिन्तयामास पार्थिवः ॥ १६ ॥ तत्र विप्राश्रमाभ्याशे वैश्यमेकं-
ददर्श सः । स पृष्टस्तेन कस्त्वं भो हेतुश्चागमनेऽत्र कः ॥ १७ ॥

के कारण अत्यन्त कष्ट से संग्रह किया हुआ मेरा वह खजाना खाली हो जाएगा, यह तथा और भी ऐसी ही कई बातें राजा वहां सोचता रहता था॥१३-१६॥ राजा ने विप्रवर मेधा के

आश्रम के निकट एक वैश्य को देखा और पूछा कि तुम कौन हो और यहां आने का क्या कारण है ॥१७॥ और किस कारण तुम शोक में मलीन दिखाई पड़ते हो, राजा के ये नम्र वचन सुन कर ॥१८॥ वैश्य राजा से विनय पूर्वक बोला ॥१९॥ वैश्य बोला ॥२०॥

सशोक इव कस्मात्त्वं दुर्मना इव लक्ष्यसे । इत्याकर्ण्य वचस्तस्य भूपतेः प्रणयोदितम् ॥ १८ ॥ प्रत्युवाच स तं वैश्यः प्रश्रयावनतो नृपम् ॥ १९ ॥ वैश्य उवाच ॥ २० ॥ समाधिर्नाम वैश्योऽहमुत्पन्नो धनिनां कुले ॥ २१ ॥ पुत्रदारैर्निरस्तश्च धनलोभादसाधुभिः । विहीनश्च धनैर्दारैः पुत्रैरादाय मे धनम् ॥ २२ ॥ वनमभ्यागतो दुःखी निरस्तश्चाप्तबन्धुभिः ।

कि धनिकों के कुल में उत्पन हुआ मैं समाधि नामक वैश्य हूं ॥२१॥ मेरे दुष्ट स्त्री पुत्रों ने तथा

पुत्र बधुओं ने धन के लोभ से मेरा धन आदि छीन कर मुझे घर से निकाल दिया ॥२२॥ स्वजनों तथा बन्धुओं से निकाला हुआ मैं इस बन में आया हूं और अपने पुत्रों के दुःख-सुख के विषय में कुछ भी नहीं जानता ॥२३॥ यहां रहता हुआ मैं अपने परिवार के आचरण

सोऽहं न वेद्मि पुत्राणां कुशला कुशलात्मिकाम् ॥ २३ ॥ प्रवृत्तिं स्वजनानां च दाराणां चात्र संस्थितः । किन्नु तेषां गृहे क्षेम-मक्षेमं किन्नु साम्प्रतम् ॥ २४ ॥ कथं ते किन्नु सद्‌वृत्ता दुर्वृत्ताः किन्नु मे सुताः ॥ २५ ॥ राजोवाच ॥ २६ ॥ यैर्निरस्तो भवां-ल्लुब्धैः पुत्रदारादिभिर्धनैः ॥ २७ ॥ तेषु किं भवतः स्नेहमनु-

सम्बन्धी कोई समाचार नहीं पा सकता और वह घर में इस समय कुशल से हैं अथवा उन्हें कोई कष्ट है ॥२४॥ वे मेरे पुत्र कैसे हैं। क्या वे सदाचारी हैं या दुराचारी हो गए हैं ॥२५॥

राजा बोला॥ २६॥ जिस धन के लोभी पुत्र स्त्री आदिकों ने तुम्हें घर से निकाल दिया ॥२७॥ उनके प्रति तुम्हारे चित्त में स्नेह क्यों है ॥२८॥ वैश्य बोला ॥२६॥ आप मेरे विषय में

बध्नाति मानसम् ॥ २८ ॥ वैश्य उवाच ॥ २९ ॥ एवमेतद्यथा प्राह भवानस्मद्गतं वचः ॥ ३० ॥ किं करोमि न बध्नाति मम निष्ठुरतां मनः ॥ यैः संत्यज्य पितृस्नेहं धनलुब्धैर्निराकृतः ॥ ३१ ॥ पतिस्वजनहार्दं च हार्दितेष्वेव मे मनः । किमेतन्नाभिजानामि जानन्नपि महामते ॥ ३२ ॥ यत्प्रेमप्रवणं चित्तं विगुणेष्वपि बन्धुषु । तेषां कृते मे निःश्वासो

जैसी बात कहते हैं सब ठीक है ॥३०॥ किन्तु क्या करूं, उन के धन लोभियों के लिये जिन्होंने पितृ स्नेह को त्याग दिया मेरे मन में निष्ठुरता नहीं आती ॥३१॥ जिन्हों ने पति,

परिवार तथा मित्र प्रेम को छोड़ दिया फिर उन्ही में मेरा मन क्यों फंस रहा है, ! महामते ! मैं जानता हुआ भी इस रहस्य को नहीं जानता ॥३२॥ उन दुर्गुणी बन्धुओं में मेरा चित्त फंस रहा है, उनके लिये मुझे कष्ट है और चित्त दुःखित हो रहा है ॥३३॥ क्या करूं ! उन

दौर्मनस्यं च जायते ॥ ३३ ॥ करोमि किं यन्न मनस्तेष्वप्रीतिषु निष्ठुरम् ॥ ३४ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ ३५ ॥ ततस्तौ सहितौ विप्र तं मुनिं समुपस्थितौ ॥ ३६ ॥ समाधिर्नामवैश्योऽसौ स च पार्थिवसत्तमः । कृत्वा तु तौ यथान्यायं यथार्हं तेन संविदम् ॥ ३७ ॥ उपविष्टौ कथाः काश्चिच्चक्रतुः

प्रेम शून्यों के प्रति मेरा मन निष्ठुर नहीं हो पाता ॥३४॥ मार्कण्डेय जी बोले ॥३५॥ हे विप्र ! इस के पश्चात् वह दोनों एक साथ मुनि के समीप गये ॥३६॥ समाधि नामक वैश्य तथा

महाराजा सुरथ न्याय पूर्वक यथा योग्य सम्भाषण कर के बैठ कर दोनों कुछ वार्ता-
लाप करने लगे ।३७-३८।। राजा ने कहा ।३९। भगवन ! मैं आपसे एक बात पूछना चाहता हूं
मुझे बतावें।।४०।।चले गए राज्य के सम्पूर्ण अङ्गों में जो मेरी ममता बनी हुई है,मेरा मन वश में

वैश्यपार्थिवौ ॥ ३८ ॥ राजोवाच ॥ ३९ ॥ भगवंस्त्वामहं प्रष्टु-
मिच्छाम्येकं वदस्व तत् ॥ ४० ॥ दुःखाय यन्मे मनसः
स्वचित्ता यत्ततां विना । ममत्वं गतराज्यस्य राज्याङ्गेष्वखिले-
ष्वपि ॥ ४१ ॥ जानतोऽपि यथाज्ञस्य किमेतन्मुनिसत्तम । अयं
च निकृतः पुत्रैर्दारैर्भृत्यैस्तथोज्झितः ॥ ४२ ॥ स्वजनेन च

न होने के कारण यह बात मुझे बहुत दुःख देती है ।।४१।। हे मुनि श्रेष्ठ ! यह जानते हुऐ भी
कि वे अब मेरा नहीं है, अज्ञानी के समान मुझे उस से दुःख है, और यह वैश्य पुत्र-स्त्री

तथा नौकरों से निकाला हुआ है ॥४२॥ कुटुम्बी बन्धुओं ने इस का परित्याग कर दिया है तो भी यह उन के प्रति अत्यन्त हार्दिक स्नेह रखता है इस प्रकार यह और मैं दोनों अत्यन्त

सन्त्यक्तस्तेषु हार्दी तथाप्यति । एवमेष तथाहं च द्वावप्यत्यन्तदु:खितौ ॥ ४३ ॥ दृष्टदोषेऽपि विषये ममत्वाकृष्टमानसौ तत्किमेतन्महाभाग यन्मोहो ज्ञानिनोरपि ॥ ४४ ॥ ममास्य च भवत्येषा विवेकान्धस्य मूढता ॥ ४५ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ४६ ॥ ज्ञानमस्ति समस्तस्य जन्तोर्विषयगोचरे ॥ ४७ ॥ विषयश्च महाभाग याति चैवं पृथक् पृथक् । दिवान्धाः प्राणिन:

दु:खी हैं ॥४३॥ उनके दोषों को जानते हुए भी हम दोनों के मन में उन के लिये मोह है, हे महाभाग ! यह किस कारण से है जो हम जानते हुए भी मोह में फंसे हैं ॥४४॥ विवेक

रहित पुरुषों जैसी यह मूढ़ता मुझ में और इस वैश्य में किस कारण है ॥४५॥ ऋषि बोले ॥४६॥ सब प्राणियों को विषय मार्ग का ज्ञान है ॥४७॥ और हे महाभाग। विषय सब के लिये अलग २ हैं कोई प्रानी दिन में अन्धे हैं और दूसरे रात्रि में अन्धे हैं ॥४८॥ और कुछ की

केचिद्रात्रावन्धास्तथापरे ॥ ४८ ॥ केचिद्दिवा तथा रात्रौ प्राणिनस्तुल्यदृष्टयः । ज्ञानिनो मनुजाः सत्यं किं नु ते न हि केवलम् ॥ ४९ ॥ यतो हि ज्ञानिनः सर्वे पशुपक्षिमृगादयः । ज्ञानं च तन्मनुष्याणां यत्तेषां मृगपक्षिणाम् ॥ ५० ॥ मनुष्याणां च यत्तेषां तुल्यमन्यत्तथोभयोः । ज्ञानेऽपि सति

दृष्टि दिन और रात्रि में एक ही है, यह सच है कि मनुष्यों को ज्ञान है किन्तु केवल उन्हें ही नहीं है ॥४९॥ सब ही पशु पक्षी आदि ज्ञान रखते हैं, जो इन पशु पक्षियों का ज्ञान है वह

ही मनुष्य का ज्ञान है ॥५०॥ जो मनुष्यों का ज्ञान है वह ही पशु आदियों में है अर्थात् साधारण ज्ञान दोनों में बराबर है, यह ज्ञान होने पर भी इन पक्षियों को देखो यह स्वयं

पश्यैतान् पतंगाञ्छावचञ्चुषु ॥ ५१ ॥ कणमोक्षादृतान्मोहा-
त्पीड्यमानानपि क्षुधा । मानुषा मनुजव्याघ्र साभिलाषाः
सुतान्प्रति ॥ ५२ ॥ लोभात्प्रत्युपकाराय नन्वेतान् किं न पश्यसि ।
तथापि ममतावर्ते मोहगर्त्ते निपातिताः ॥ ५३ ॥ महामाया
प्रभावेण संसारस्थितिकारिणा । तन्नात्र विस्मयः कार्यो

भूख से पीड़त होते हुए भी मोह वश बच्चों की चोंच में कितने चाव से अन्न के दाने डाल रहे हैं। हे नर श्रेष्ठ ! यही प्रेम मनुष्यों में भी अपनी सन्तति के लिये पाया जाता है। ॥५१-५२॥ यह सब कुछ लोभ के प्रत्युपकार से रात दिन होता है क्या तुम नहीं देखते कि

संसार की स्थिति बनाय रखने वाली भगवती महामाया के प्रभाव द्वारा ममतामय भंवर से युक्त मोह के गहरे गर्त में गिराये गये हैं । इस लिये इसमें आश्चर्य नहीं करना चाहिये ॥५३-५४॥ यह विष्णु भगवान् की महा माया है जिस के कारण संसार मोह में फँसा है

**योगनिद्रा जगत्पतेः ॥ ५४ ॥ महामाया हरेश्चैषा तया संमोह्यते जगत् । ज्ञानिनामपि चेतांसि देवि भगवती हि सा ॥ ५५ ॥ बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति । तया विसृज्यते विश्वं जगदेतच्चराचरम् ॥ ५६ ॥ सैषा प्रसन्ना वरदा नृणां**

यह भगवती महामाया देवी ज्ञानियों के चित्त को बलपूर्वक खींच कर मोह में डाल देती है वह ही इस सम्पूर्ण चराचर संसार की सृष्टि करती है ॥५५-५६॥ यह वर के देने वाली भगवती देवी प्रसन्न होने पर मुक्ति की दाता है यह ही सर्वोपरि ज्ञान, मुक्ति का निमित्त

और सनातनी है ॥५७॥ यह ही संसार के बन्धन का कारण तथा सम्पूर्ण ईश्वरों की स्वामिनी है ॥५८॥ राजा बोला ॥५९॥ भगवन् ! जिसको आप महामाया कहते हैं वह देवी कौन

भवति मुक्तये । सा विद्या परमा मुक्तेर्हेतुभूता सनातनी ॥ ५७ ॥
संसारबन्धहेतुश्च सैव सर्वेश्वरेश्वरी ॥ ५८ ॥ राजोवाच ॥ ५९ ॥
भगवन् का हि सा देवी महामायेति यां भवान् ॥ ६० ॥ ब्रवीति
कथमुत्पन्ना सा कर्मास्याश्च किं द्विज । यत्प्रभावा च सा
देवी यत्स्वरूपा यदुद्भवा ॥ ६१ ॥ तत्सर्वं श्रोतुमिच्छामि त्वत्तो

है ॥६०॥ कैसे उत्पन्न हुई और क्या उसका काम है ? हे मुने ! उसका स्वभाव स्वरूप और उत्पत्ति सब ही आपसे सुनना चाहता हूं आप मुझे सुनाइये ॥६१-६२॥ ऋषि बोले ॥६३॥ वह भगवती नित्या है और सम्पूर्ण जगत उन्हीं का रूप है उसी के द्वारा यह सब संसार रचा

गया है। ६४॥ तो भी उन का प्रकट होना अनेक प्रकार से होता है सो तुम सुनो, वह भगवती जब देवताओं का काम सिद्ध करने के लिये प्रकट होती है ॥६५॥ उस समय वह

ब्रह्मविदांवर ॥ ६२ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ६३ ॥ नित्यैव सा जगन्मूर्तिस्तया सर्वमिदं ततम् ॥ ६४ ॥ तथापि तत्समुत्पत्तिर्बहुधा श्रूयतां मम । देवानां कार्यसिद्ध्यर्थमाविर्भवति सा यदा ॥ ६५ ॥ उत्पन्नेति तदा लोके सा नित्याप्यभिधीयते । योगनिद्रां यदा विष्णुर्जगत्येकार्णवीकृते ॥ ६६ ॥ आस्तीर्य शेषमभजत्

नित्या होने पर भी उत्पन्ना कहलाती है, जगत के जलमग्न होने पर जब विष्णु भगवान् योग निद्रा में ( कल्प के अन्त में ) शेष शैय्या पर सो रहे थे उस समय उन के कानों की मैल से उत्पन्न दो भयंकर असुर मधु और कैटभ नाम से विख्यात ब्रह्मा जी को मारने के लिये

उद्यत हुये ॥ प्रजापति ब्रह्मा जो विष्णु भगवान् की नाभि कमल पर बैठे थे ॥६६-६८॥
उन दोनों भयानक असुरों को देख कर तथा विष्णु भगवान् को सोया हुआ जान कर चित्त को

कल्पान्ते भगवान् प्रभुः । तदा द्वावसुरौ घोरौ विख्यातौ मधुकैटभौ ॥ ६७ ॥ विष्णुकर्णमलोद्भूतौ हन्तुं ब्रह्माणमुद्यतौ स नाभि कमले विष्णोः स्थितो ब्रह्मा प्रजापतिः ॥ ६८ ॥ दृष्ट्वा तावसुरौ चोग्रौ प्रसुप्तं च जनार्दनम् । तुष्टाव योगनिद्रां तामेकाग्रहृदयस्थितः ॥ ६९ ॥ विबोधनार्थाय हरेर्हरिनेत्रकृता-लयाम् । विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ॥ ७० ॥

एकाग्रकर योगनिद्रा रूपी शक्ति को संतुष्ट करने के लिये स्तुति करने लगे ॥६९॥ जो विष्णु भगवान् की आंखों में व्याप्त थी जिससे योगमाया आँखों से अपना प्रभाव हटाले और विष्णु

भगवान् जग जायें ब्रह्मा ने विश्वेश्वरी जगत के धारण करने वाली, संसार की स्थिति और नाश के करने वाली, ॥७०॥ विष्णु भगवान् के तेज की अनुपम शक्ति निद्रा रूपी भगवती

निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥ ७१ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ ७२ ॥ त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ॥ ७३ ॥ सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधामात्रात्मिका स्थिता । अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्यां विशेषतः ॥ ७४ ॥ त्वमेव संध्या सावित्री

की इस प्रकार स्तुति की ॥७१॥ ब्रह्मा जी ने कहा ॥७२॥ हे भगवती तुम स्वाहा, स्वधा और षट् कार रूप हो, आप स्वर स्वरूपिणी हैं ॥७३॥ और अमृत रूप हैं नित्य अक्षर प्रणव में अकार, उकार, मकार इन तीन मात्राओं के रूप में आप नित्य अर्ध मात्रा हैं जिसका विशेष उच्चारण नहीं किया जा सकता वह भी आप ही हो।७४।देवी ! तुम्हीं संध्या सावित्री तथा जो बिन्दु

रूपा माता हो। आपही सर्वोपरी सारे विश्वको धारण करती तथा उत्पन्न करती हो।७५।आपही इसका पालन करने वाली और भक्षण करने वाली हैं रचना के समय सृष्टि रूपा तथा पालन

त्वं देवी जननी परा। त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ॥ ७५ ॥ त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा। विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ॥ ७६ ॥ तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये। महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ॥ ७७ ॥ महामोहा च भवति महादेवी महासुरी। प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणात्रय विभाविनी ॥ ७८ ॥ काल-

के समय स्थिति रूपा हैं ॥७६॥ और हे जगन्मये अन्त में इस जगत का आप ही संहार करती हैं। आप महाविद्या, महामाया, महामेधा, महास्मृति ॥७७॥ महामोहा, महादेवा और

महासुरी हैं। आप ही तीनों गुणों (सत्व, रजः, तमः, गुण) को उत्पन्न करने वाली सब की प्रकृति हो।।७८।। भयंकर कालरात्रि, महारात्रि भी और मोहरात्रि भी आप ही हैं। तुम्हीं श्री,

रात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा। त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ॥ ७९ ॥ लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च। खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ॥ ८० ॥ शंखिनी चापिनी बाणभुशुण्डी परिघायुधा। सौम्यासौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ॥ ८१ ॥

तुम्हीं ईश्वरी, तुम्हीं ह्री और तुम्हीं बोध स्वरूपा बुद्धि हो।।७९।। लज्जा, पुष्टि, तुष्टि, शान्ति और क्षमा भी तुम्हीं हो। खड्ग धारिणी, शूलधारिणी, घोर रूपा तथा गदा, चक्र, शंख और धनुष धारण करने वाली हो। बाण, भुशुण्डी और परिघ ये भी तुम्हारे अस्त्र हैं तुम सौम्य

और सौम्यतर हो तथा सब सौम्यों से अतीव सुन्दरी हो ॥८०-८१॥ सब परापर देवों में आप सर्वोपरि हो, आप परमेश्वरी हो, हे सर्वस्वरूपे देवि ! कहीं भी जो कोई सत् असत् वस्तु है

परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी । यच्च किञ्चित्क्वचि-द्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ॥ ८२ ॥ तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा । यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ॥ ८३ ॥ सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः । विष्णुःशरीरग्रहणमहमीशान एव च ॥ ८४ ॥ कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ।

॥ ८२ ॥ उन सब की जो शक्ति है वह आप ही हैं ऐसी अवस्था में तुम्हारी स्तुति क्या हो सकती है। जो इस जगत् की सृष्टि, पालन और संहार करते हैं, उन भगवान् को भी

जब तुम ने निद्रा के अधीन कर दिया है, तब तुम्हारी स्तुति करने में यहां कौन समर्थ हो सकता है। मुझ को, भगवान् शङ्कर को तथा भगवान् विष्णु को भी तुम ने ही शरीर धारण

सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ॥ ८५ ॥
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ । प्रबोधं च जगत्स्वामी
नीयतामच्युतो लघु ॥ ८६ ॥ बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ
महासुरौ ॥ ८७ ॥ ऋषिरुवाच ॥८८॥ एवं स्तुता तदा देवी
तामसी तत्र वेधसा ॥ ८९ ॥ विष्णोः प्रबोधनार्थाय निहन्तुं

कराया है, अतः तुम्हारी स्तुति करने की शक्ति किस में है। देवी ! तुम तो अपने इन उदार प्रभावों से ही प्रशंसित हो। ये जो दोनों दुर्धर्ष असुर मधु और कैटभ हैं, इन को मोह में डाल दो और जगदीश्वर भगवान् विष्णु को शीघ्र ही जगा दो। साथ ही इन के भीतर इन

दोनों महान् असुरों को मार डालने की बुद्धि उत्पन्न कर दो ॥८३-८७॥ ऋषि बोले ॥८९॥ हे राजन्! जब ब्रह्मा जी ने वहाँ मधु और कैटभ को मारने के उद्देश्य से भगवान् विष्णु के जगाने के लिये तमोगुण की अधिष्ठात्री देवी योगनिद्रा की इस प्रकार स्तुति की, तब वह

मधुकैटभौ । नेत्रास्य नासिका बाहु हृदयेभ्यस्तथोरसः ॥ ९० ॥ निर्गम्य दर्शने तस्थौ ब्रह्मणोऽव्यक्तजन्मनः । उत्तस्थौ च जगन्नाथस्तया मुक्तो जनार्दनः ॥ ९१ ॥ एकार्णवेऽहि शयनात्ततः स ददृशे च तौ । मधुकैटभौ दुरात्मानावति

भगवान् के नेत्र, मुख, नासिका, बाहु, हृदय और वक्षःस्थल से निकल कर अप्रकट जन्म वाले ब्रह्मा जी की दृष्टि के समक्ष खड़ी हो गई। योगनिद्रा से मुक्त होने पर जगत् के स्वामी भगवान् जनार्दन उस एकार्णव के जल में शेष नाग की शैय्या से जाग उठे। फिर उन्हों ने

उन दोनों असुरों को देखा। वे दुरात्मा मधु और कैटभ अत्यन्त बलवान् तथा पराक्रमी थे और क्रोध से लाल आंखें किये ब्रह्मा जी को खा जाने के लिये उद्योग कर रहे थे। तब

वीर्य पराक्रमौ ॥ १२ ॥ क्रोधरक्तेक्षणावत्तुं ब्रह्माणं जनितोद्यमौ। समुत्थाय ततस्ताभ्यां युयुधे भगवान् हरिः ॥ १३ ॥ पञ्चवर्ष सहस्राणि बाहु प्रहरणो विभुः। तावप्यति बलोन्मत्तौ महामाया विमोहितौ ॥ १४ ॥ उक्तवन्तौ वरोऽस्मत्तो व्रियतामिति केशवम् ॥ १५ ॥ श्री भगवानुवाच ॥ १६ ॥ भवेतामद्य मे तुष्टौ मम वध्यावुभावपि ॥ १७ ॥ किमन्येन

भगवान् विष्णु ने उठकर दोनों के साथ पांच हजार वर्षों तक केवल बाहु युद्ध किया। वे दोनों भी अत्यन्त बल के कारण उन्मत्त हो रहे थे। इधर महामाया ने भी उन्हें मोह में

डाल रखा था इस लिये वे भगवान् विष्णु से कहने लगे हम आप की वीरता से संतुष्ट हैं। तुम हम लोगों से कोई वर मांगो ॥८६-६५॥ श्री भगवान बोले ॥६६॥ यदि तुम दोनों

वरेणात्र एतावद्धि वृतं मम ॥ ६८ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ६६ ॥
वञ्चिताभ्यामिति तदा सर्वमापोमयं जगत् ॥ १०० ॥
विलोक्य ताभ्यां गदितो भगवान् कमलेक्षणः । आवां जहि
न यत्रोर्वी सलिलेन परिप्लुता ॥ १०१ ॥ ऋषिरुवाच ॥ १०२ ॥
तथेत्युक्त्वा भगवता शङ्खचक्रगदाभृता । कृत्वा चक्रेण
वै च्छिन्ने जघने शिरसी तयोः ॥ १०३ ॥

मुझ पर प्रसन्न हो तो अब मेरे हाथ से मारे जाओ। बस इतना ही मैंने वर मांगा है। यहां दूसरे किसी वर से क्या लाभ है ॥६७-६८॥ ऋषि ने कहा ॥६६॥ इस प्रकार धोखे में आ जाने

पर जब उन्होंने सम्पूर्ण जगत में जल ही जल देखा तब भगवान् से कहा कि जहां भूमि जलमय न हो वहां हमको मारो॥१००-१०१॥ऋषि बोले।१०२।शंख चक्र गदाधारी भगवान् विष्णुने ऐसा ही होगा' कहकर जंघा पर इन दोनों के शिर चक्र से काट डाले ॥१०३॥ इस प्रकार ब्रह्मा

एवमेषा समुत्पन्ना ब्रह्मणा संस्तुता स्वयम् । प्रभाव-मस्या देव्यास्तु भूयः शृणु वदामि ते ॥ ऐं ॐ ॥ १०४ ॥

से स्तुति किये जाने पर वह देवी स्वयं उत्पन्न हुई, इस देवी का और प्रभाव सुनो मैं तुम से कहता हूं ॥१०४॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये मधुकैटभवधो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ उवाच १४ । अर्द्ध श्लोकाः २४ । श्लोकाः ६६ । एवमादितः ॥ १०४ ॥

ओं जय जय मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु मम कामा जगदम्बार्पणमस्तु । ऐसा बोल कर जल छोड़ना चाहिये ।

नोटः—अध्याय के अन्त में 'इति' 'अध्याय' तथा वधः शब्द नहीं कहने चाहियें । देखो पृष्ठ ६ ।

---

## हवन के लिये

पहले अध्याय के समाप्त होने पर भोज पत्र में कमल गट्टा से लपेटी हुई १ सुपारी, १ इलायची छोटी, २ लौंग, पान तथा शहद घी में भिगो कर खड़े होकर नीचे लिखे मन्त्र से आहुति दे ।

मन्त्रः- ॐ अम्बे ऽम्बिकेऽम्बालिके न मानयति कश्चन् । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कां पील वासिनीं स्वाहा ॥

इस के उपरान्त नीचे लिखे मन्त्र से तीन वार घृत छोड़ना जाहिये ।

ओं अम्बायै स्वाहा, अम्बिकायै स्वाहा, अम्बालिकायै नमो नमः स्वाहा ।

# द्वितीयोऽध्यायः

## विनियोगः

ॐ अस्य श्री मध्यमचरित्रस्य विष्णु ऋषिः महालक्ष्मी देवता उष्णिक्छन्दः शाकम्भरी शक्तिः दुर्गाबीजं वायुस्तत्त्वं यजुर्वेदःस्वरूपं श्री महालक्ष्मीप्रीत्यर्थं मध्यमचरित्रजपे विनियोगः ।

## ध्यानम्

ॐ अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुष्कुण्डिकां दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् । शूलं पाशसु-

मेधा ऋषि बोले ॥१॥ कि पूर्वकाल में देवताओं और असुरों में पूरे सौ वर्ष तक घोर संग्राम हुआ था। राजा महिषासुर और देवताओं के राजा इन्द्र उसमें देवताओं के राजा थे और

दर्शने च दधतीं हस्तैः प्रवालप्रभां सेवे सैरिभमर्दिनीमिह महा-लक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥

ॐ ह्रीं ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ देवासुरमभूद्युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा। महिषेऽसुराणामधिपे देवानां च पुरन्दरे ॥२॥ तत्रासुरैर्महावीर्यैर्देवसैन्यं पराजितम्। जित्वा च सकलान् देवानिन्द्रोऽभून्महिषासुरः ॥ ३ ॥ ततः पराजिता देवाः पद्मयोनिं प्रजापतिम्।

असुरों के राजा महिषासुर थे ॥२॥ इस युद्ध में बलशाली असुरों ने देवसेना को हरा दिया और सब देवताओं को जीतकर महिषासुर इन्द्र बन बैठा ॥३॥ देव हारकर

कमल से उत्पन्न प्रजापति ब्रह्मा को साथ लेकर महादेव तथा विष्णु के पास गये ।।४।। देवताओं ने महिषासुर के साथ होने वाले युद्ध का सार वृत्तान्त विस्तार के साथ दोनों को

पुरस्कृत्य गतास्तत्र यत्रेश गरुड़ध्वजौ ॥ ४ ॥ यथावृत्तं तयोस्तद्वन्महिषासुरचेष्टितम् । त्रिदशाः कथयामासुर्देवाभिभव विस्तरम् ॥ ५ ॥ सूर्येन्द्राग्न्यनिलेन्दूनां यमस्य वरुणस्य च । अन्येषां चाधिकारान् स स्वयमेवाधितिष्ठति ॥ ६ ॥ स्वर्गान्निराकृताः सर्वे तेन देवगणा भुवि । विचरन्ति यथा मर्त्या महिषेन दुरात्मना ॥ ७ ॥ एतद्वः कथितं सर्वममरारिविचेष्टितम् । शरणं

सुनाया ।।५।। कि महिषासुर असुर ने सूर्य, इन्द्र, अग्नि, चन्द्रमा, यम, वरुण और दूसरे सभी देवताओं के अधिकारों को अपने हाथ में कर लिया।।६।।उस दुरात्मा महिषासुर ने सब देवताओं

को स्वर्ग से निकाल दिया। अतः देवता लोग अब मनुष्योंके समान भूमि पर विचर रहे हैं ॥७॥ दैत्यों ने जो कुछ किया वह सब हमने आप से निवेदन किया। अब हम सब आपकी शरण में

वः प्रपन्नाः स्मो वधस्तस्य विचिन्त्यताम् ॥ ८ ॥ इत्थं निशम्य देवानां वचांसि मधुसूदनः । चकार कोपं शम्भुश्च भ्रुकुटी-कुटिलाननौ ॥ ९ ॥ ततोऽतिकोपपूर्णस्य चक्रिणो वदनात्ततः । निश्चक्राम महत्तेजो ब्रह्मणः शंकरस्य च ॥ १० ॥ अन्येषां चैव देवानां शक्रादीनां शरीरतः । निर्गतं सुमहत्तेजस्त-च्चैक्यं समगच्छत ॥ ११ ॥ अतीव तेजसः कूटं ज्वल-

आए हैं कृपया असुर को वध करने की चिन्ता करें ॥८॥ इस प्रकार देवताओं के वचन सुनकर विष्णु भगवान और महादेव अत्यन्त क्रोधित हुए, भौंहें चढ़ गईं और मुख तमतमा

गया ॥९॥ अत्यन्त क्रोध युक्त भगवान विष्णु, महादेव तथा ब्रह्मा तीनों के मुख से एक बहुत बड़ा तेज निकला ॥१०॥ अन्य इन्द्र आदि देवताओं के शरीरों से भी एक एक

न्तमिव पर्वतम् । ददृशुस्ते सुरास्तत्र ज्वालाव्याप्तदिगन्तरम् ॥ १२ ॥ अतुलं तत्र तत्तेजः सर्वदेवशरीरजम् । एकस्थं तदभून्नारी व्याप्तलोकत्रयं त्विषा ॥ १३ ॥ यदभूच्छाम्भवं तेजस्तेनाजायत तन्मुखम् । याम्येन चाभवन् केशा बाहवो विष्णुतेजसा ॥ १४ ॥ सौम्येन स्तनयोर्युग्मं मध्यं चैन्द्रेण चाभवत् । वारुणेन च जंघोरू नितम्बस्तेजसा भुवः ॥ १५ ॥

बड़ा तेज निकला और वह सब तेज एक स्थान में इकट्ठा हो गया ॥११॥ देवताओं के देखते २ वह तेजपुञ्ज जलते हुए पर्वत के समान हो गया और उसकी ज्वाला की दीप्ति सब

दिशाओं में फैल गई ॥१२॥ सब देवताओं के शरीरों से उत्पन्न वह एकत्र अतुल तेज जो तीनों लोकों को प्रकाश दे रहा था स्त्री रूप हो गया ॥१३॥ शम्भु के तेज में उस स्त्री

ब्रह्मणस्तेजसा पादौ तदङ्गुल्योऽर्कतेजसा । वसूनां च कराङ्गुल्यः कौबेरेण च नासिका ॥ १६ ॥ तस्यास्तु दन्ताः सम्भूताः प्राजापत्येन तेजसा । नयनत्रितयं जज्ञे तथा पावकतेजसा ॥ १७ ॥ भ्रुवौ च सन्ध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च । अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥ १८ ॥ ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम् । तां विलोक्य मुदं प्रापुर-

का मुख, यम के तेज से केश, विष्णु के तेज से बाहु, चन्द्रमा के तेज से दोनों स्तन, इन्द्र के तेज से मध्य भाग, वरुण के तेज से जंघा, पृथवी के तेज से नितम्ब ॥१४-१५॥ ब्रह्मा के तेज

से दोनों चरण, सूर्य के तेज से अंगुलियां, बसुओं के तेज मे हाथों की अंगुलियाँ, कुवेर के तेज से नासिका ॥ १६ ॥ तथा प्रजापति के तेज मे दाँत, अग्नि के तेज से तीनों

मरा महिषार्दिताः ॥ १९ ॥ शूलं शूलाद्विनिष्कृष्य ददौ तस्यै पिनाकधृक् । चक्रं च दत्तवान् कृष्णः समुत्पाद्य स्वचक्रतः ॥ २० ॥ शंखं च वरुणः शक्तिं ददौ तस्यै हुताशनः । मारुतो दत्तवांश्चापं वाणपूर्णौ तथेषुधी ॥ २१ ॥ वज्रमिन्द्रः समुत्पाद्य कुलिशादमराधिपः । ददौ तस्यै सहस्राक्षो घण्टामैरावताद् गजात् ॥ २२ ॥ कालदण्डाद्यमो दण्डं पाशं चाम्बुपतिर्ददौ ।

नेत्र उत्पन्न हुए ॥१७॥ दोनों सन्ध्याओं के तेज से भौंहें और वायु के तेज से दोनों कान उत्पन्न हुए थे । इस प्रकार अन्यान्य देवताओं के तेज से भी उस कल्याणमयी देवी का आविर्भाव हुआ

॥ १८ ॥ सब देवताओं के तेज समूह से उत्पन्न इस देवी को देकर असुर से सताये हुए सभी देवता प्रसन्न हुए ॥ १९ ॥ इसके पश्चात शिवजी महाराज ने अपनी त्रिशूल से एक त्रिशूल

प्रजापतिश्चाक्षमालां ददौ ब्रह्मा कमण्डलुम् ॥ २३ ॥ समस्तरोमकूपेषु निजरश्मीन् दिवाकरः । कालश्च दत्तवान् खड्गं तस्याश्चर्म च निर्मलम् ॥ २४ ॥ क्षीरोदश्चामलं हारमजरे च तथाम्बरे । चूडामणिं तथा दिव्यं कुण्डले कटकानि च ॥ २५ ॥ अर्धचन्द्रं तथा शुभ्रं केयूरान् सर्वबाहुषु । नूपुरौ विमलौ तद्वद् ग्रैवेयकमनुत्तमम् ॥ २६ ॥ अंगुलीयकरत्नानि सम-

निकालकर उस देवी को दिया एवं विष्णु भगवान् ने अपने चक्र से उत्पन्न कर चक्र दिया ॥ २० ॥ वरुण ने शंख और अग्नि ने शक्ति दी, वायु ने धनुष और बाणों से भरपूर चाप

दिया ॥२१॥ देवताओं के राजा इन्द्र ने अपने वज्र से उत्पन्न करके वज्र दिया तथा ऐरावत हाथी से उतार कर एक घण्टा भी प्रदान किया ॥ २२ ॥ यम राज ने काल दण्ड से दण्ड,

स्तास्वंगुलीषु च । विश्वकर्मा ददौ तस्यै परशुं चाति-
निर्मलम् ॥ २७ ॥ अस्त्राण्यनेकरूपाणि तथा भेद्यं च दंशनम् ।
अम्लान पङ्कजां मालां शिरस्युरसि चापराम् ॥ २८ ॥ अदद-
ज्जलधिस्तस्यै पङ्कजं चाति शोभनम् । हिमवान् वाहनं सिंहं
रत्नानि विविधानि च ॥ २१ ॥ ददावशून्यं सुरया पानपात्रं
धनाधिपः ॥ शेषश्च सर्वनागेशो महामणिविभूषितम् ॥ ३० ॥

वरुण ने पाश, प्रजापति ने रुद्राक्ष की माला और ब्रह्मा ने कमण्डल भेंट किया ॥ २३ ॥ सूर्य भगवान् ने देवी के समस्त रोम कूपों में अपनी किरणों को भर दिया, काल ने खड्ग और

चमकती हुई ढाल दी ॥२४॥ समुद्र ने सुन्दर हार, दो नूतन वस्त्र, दिव्य चूड़ामणि, कुण्डल कंकन ॥२५॥ निर्मल अर्धचन्द्र, सब भुजाओं के लिये बाहूबन्द, पैरों में नूपुर, गले के लिये कण्ठा, ॥२६॥ सब अंगुलियों के लिये रत्न जड़ी अंगूठियां दीं। विश्वकर्मा ने एक स्वच्छ कुल्हाड़ा

नागहारं ददौ तस्यै धत्ते यः पृथिवीमिमाम् । अन्यैरपि सुरैर्देवी भूषणैरायुधैस्तथा ॥ ३१ ॥ सम्मानिता ननादोच्चैः साट्टहासं मुहुर्मुहुः । तस्य नादेन घोरेण कृत्स्नमापूरितं नभः ॥ ३२ ॥ अमायतातिमहता प्रतिशब्दो महानभूत् । चुक्षुभुः

भेंट किया ॥२७॥ तथा अनेक प्रकार के अस्त्र और अभेद्य कवच दिये। कमल के खिले हुए सुन्दर फूलों की माला, शिर तथा उर पर धारण करने के लिये ॥२८॥ समुद्र ने सुन्दर कमल का फूल भेंट दिया। हिमालय ने एक सिंह सवारी के लिये तथा अनेक प्रकार के

रत्न दिये ॥२९॥ कुवेर ने मधु से भरा पानपात्र दिया, सब सर्पों के स्वामी शेषनाग ने जो पृथ्वी को धारण कर रहे हैं मणियों से विभूषित ॥३०॥ एक नाग हार दिया, अन्य सभी देवताओं ने भूषणों और अस्त्रों से देवी का ॥३१॥ सम्मान किया, फिर देवी ने पुनः पुनः

सकला लोकाः समुद्राश्च चकम्पिरे ॥ ३३ ॥ चचाल वसुधा चेलुः सकलाश्च महीधराः । जयेति देवाश्च मुदा तामूचुः सिंहवाहिनीम् ॥ ३४ ॥ तुष्टुवुर्मुनयश्चैनां भक्तिनम्रात्ममूर्तयः । दृष्ट्वा समस्तं संक्षुब्धं त्रैलोक्यममरारयः ॥ ३५ ॥ सन्नद्धा-

उच्च स्वर से अट्टहास पूर्वक उच्च स्वर से गर्जना की । उसके घोर नाद से सारा आकाश मण्डल गूंज उठा ॥३२॥ इसकी प्रतिध्वनि भी बहुत भारी हुई जिससे सारे लोक में हल चल मच गई और समुद्र भर में कम्प आ गया॥३३॥पृथ्वी तथा सारे पर्वत डगमगा गये । सारे देवता प्रसन्न

होकर 'सिंह वाहिनी देवी की जय हो' ऐसा बोले।।३४।।भक्ति भाव से झुक कर सब मुनिगण, देवी की स्तुति करने लगे, देवताओं के शत्रु असुरों ने सारी त्रिलोकी को क्षुब्ध देखकर ॥३५॥ अपनी

खिलसैन्यास्ते समुत्तस्थुरुदायुधाः । आः किमेतदिति क्रोधा-दाभाष्य महिषासुरः ॥ ३६ ॥ अभ्यधावत तं शब्दमशेषैर-सुरैर्वृतः । स ददर्श ततो देवीं व्याप्तलोकत्रयां त्विषा ॥ ३७ ॥ पादाक्रांत्या नतभुवं किरीटोल्लिखिताम्बराम् । क्षोभिता-शेषपातालां धनुर्ज्यानिःस्वनेन ताम् ॥ ३८ ॥ दिशो भुज-सहस्रेण समन्ताद् व्याप्य संस्थिताम् । ततः प्रववृते युद्धं

सम्पूर्ण सेनाओं को तैयार किया और अस्त्र-शस्त्र उठा लिये' 'यह क्या है?' ऐसे महिषा-सुर क्रोध से बोल कर ॥३६॥ सब असुरों के साथ जिधर से शब्द आया था दौड़ा, तब उसने

तीनों लोकों को व्याप्त करने वाली उस देवी को देखा ॥३७॥ जिसके चरणों के दबाव से पृथ्वी दबी जा रही थी, माथे का मुकुट आकाश को छू रहा था, धनुष की टङ्कार से पाताल

तया देव्या सुरद्विषाम् ॥ ३९ ॥ शस्त्रास्त्रैर्बहुधामुक्तैरादीपित-दिगन्तरम् । महिषासुरसेनानीश्चिक्षुराख्यो महासुरः ॥४०॥ युयुधे चामरश्चान्यैश्चतुरङ्गबलान्वितः । रथानामयुतैः षड्-भिरुदग्राख्यो महासुरः ॥ ४१ ॥ अयुध्यतायुतानां च सहस्रेण

आदि लोक कम्पायमान थे ॥३८॥ जो अपनी सहस्र भुजाओं से सारी दिशाओं को व्याप्त कर रही थी। तदनन्तर इस देवी के साथ असुरों का युद्ध प्रारम्भ हुआ ॥३९॥ नाना प्रकार के अस्त्र शस्त्रों के प्रहार से सम्पूर्ण दिशाएं उद्भासित होने लगीं। चिक्षुर नामक असुर महिषासुर का सेनापति था। ॥४०॥ तथा चामर चतुरङ्गिणी सेना सहित युद्ध करने लगे, उदग्र नामक महासुर ने साठ हजार रथ लेकर युद्ध किया ॥४१॥ महाहनु नामक असुर एक करोड़ रथ लेकर

तथा असि लोमा महासुर पांच करोड़ रथों से ॥४२॥ और बाष्कल नाम के असुर ने साठ लाख रथों को साथ लेकर युद्ध किया। परिवारित नाम का राक्षस हाथी सवार, घोड़ सवार के

महाहनुः । पञ्चाशद्भिश्च नियुतैरसिलोमा महासुरः ॥ ४२ ॥ अयुतानां शतैः षड्भिर्बाष्कलो युयुधे रणे । गजवाजिसहस्रौघैरनेकैः परिवारितः ॥ ४३ ॥ वृतो रथानां कोट्या च युद्धे तस्मिन्नयुध्यत । बिडालाख्योऽयुतानां च पञ्चाशद्भिरथायुतैः ॥ ४४ ॥ युयुधे संयुगे तत्र रथानां परिवारितः । अन्ये च तत्रायुतशो रथनागहयैर्वृताः ॥ ४५ ॥ युयुधुः संयुगे देव्या

अनेक दलों तथा एक करोड़ रथियों की सेना लेकर युद्ध करने लगा ॥४३॥ बिडाल नाम का महासुर पांच करोड़ रथों को लेकर लड़ा ॥४४॥ अन्य भी सहस्त्रों असुर रथ, हाथीं घोडों

की सेना लेकर ॥४५॥ देवी के साथ इस युद्ध में लड़े। करोड़ो रथ हाथी ॥४६॥ और घोड़ों के साथ महिषासुर युद्ध में पहुंचा वह असुर तोमर, भिन्दिपाल, शक्ति मूसल ॥४७॥ खड्ग, परशु परिघ इत्यादि शस्त्रों से युद्ध करते थे, कोई शक्ति फैंकते थे तो कोई पाश से

सह तत्र महासुराः । कोटिकोटिसहस्रैस्तु रथानां दन्तिनां तथा ॥ ४६ ॥ हयानां च वृतो युद्धे तत्राभून्महिषासुरः । तोमरैर्भिन्दिपालैश्च शक्तिभिर्मुसलैस्तथा ॥ ४७ ॥ युयुधुः संयुगे देव्या खड्गैः परशुपट्टिशैः । केचिच्च चिक्षिपुः शक्तिः केचित्पाशांस्तथापरे ॥ ४८ ॥ देवीं खड्गप्रहारैस्तु ते तां हन्तुं प्रच-

प्रहार करते थे ॥४८॥ अनेक खड्गों के प्रहार से देवी को मारने दौड़े, चण्डिका देवी ने उन शस्त्रास्त्रों को ॥४६॥ अपने शस्त्रास्त्रों की वर्षा करके क्षण भर में काट डाला, थकावट के

चिन्ह से रहित और देवर्षियों से स्तुत्य ॥५०॥ देवी ने असुरों के शरीरों पर अपने शस्त्र छोड़े, देवी का वाहन सिंह भी क्रुद्ध होकर गर्दन हिलाता हुआ ॥५१॥ असुर सेना में ऐसे

क्षुः । सापि देवी ततस्तानि शस्त्राण्यस्त्राणि चण्डिका
॥ ४१ ॥ लीलयैव प्रचिच्छेद निजशस्त्रास्त्रवर्षिणी । अना-
यस्तानना देवी स्तूयमाना सुरर्षिभिः ॥ ५० ॥ मुमोचा-
सुरदेहेषु शस्त्राण्यस्त्राणि चेश्वरी । सोऽपि क्रुद्धो धूतसटो
देव्या वाहनकेसरी ॥ ५१ ॥ चचारासुरसैन्येषु वनेष्विव हुता-
शनः । निःश्वासान् मुमुचे यांश्च युध्यमाना रणेऽम्बिका ॥ ५२ ॥

विचरने लगा जैसे वन में अग्नि । युद्ध में लड़ती हुई अम्बिका ने जिन स्वासों को छोड़ा ॥५२॥ वह तत्क्षण सहस्रों गणों के रूप में बदल गये, और परशु, भिन्दिपाल, खड्ग

तथा पट्टिशों द्वारा असुरों से लड़ने लगे ॥५३॥ देवी की शक्ति से असुरों का संहार करने लगे और ढोल और शंख बजाने लगे ॥५४॥ कुछ ने वहां मृदंग बजाया, तब देवी ने त्रिशूल, गदा

त एव सद्यः सम्भूता गणाः शतसहस्रशः । युयुधुस्ते परशुभिर्भिन्दपालासिपट्टिशैः ॥ ५३ ॥ नाशयन्तोऽसुरगणान्देवीशक्त्युपबृंहिताः । अवादयन्त पटहान् गणाः शंखांस्तथापरे ॥ ५४ ॥ मृदङ्गांश्च तथैवान्ये तस्मिन् युद्धमहोत्सवे । ततो देवी त्रिशूलेन गदया शक्तिवृष्टिभिः ॥ ५५ ॥ खड्गादिभिश्च शतशो निजघान महासुरान् । पातयामास चैवान्यान् घण्टा-

और शक्ति की वर्षा कर ॥५५॥ तथा खड्ग आदि से सैंकड़ों असुरों का हनन किया तथा बहुतों को घण्टे के शब्द से मूर्छित करा ॥५६॥ अन्यों को पाश से बाँध कर पृथ्वी पर खींचा

अनेकों तीक्ष्ण खड्ग की मार से टुकड़े हो गए ॥५७॥ बहुत से गदा के वार से भूमि पर सो गये। कुछ मुसल के द्वारा शीघ्र चोट खाकर रुधिर वमन करने लगे।५८। हुबत सुअर शूल से

स्वनविमोहितान् ॥ ५६ ॥ असुरान् भुवि पाशेन बद्ध्वा चान्यानकर्षयत् । केचिद्द्विधा कृतास्तीक्ष्णैः खड्गपातैस्तथापरे ॥ ५७ ॥ विपोथिता निपातेन गदया भुवि शेरते । वेमुश्च केचिद्रुधिरं मुसलेन भृशं हताः ॥ ५८ ॥ केचिन्निपातिता भूमौ भिन्नाः शूलेन वक्षसि । निरन्तराः शरौघेण कृताः केचिद्रणाजिरे ॥ ५९ ॥ श्येनानुकारिणः प्राणान् मुमुचुस्त्रिदशार्दनाः । केषांचि-

छाती फटने के कारण भूमि पर गिर गये, बाणों से घायल होकर कितने ही युद्ध में सदा के लिये सो गये ॥५९॥ यहां तक कि सेना के प्रायः सभी असुर मृत्यु का ग्रास बने, कुछ की

भुजायें कट गईं कुछ की गर्दन ॥६०॥ बहुतों के शिर कट कर गिर पड़े। कोई मध्य से कट गये, कुछ असुर जंघायें कटने से भूमि पर गिर पड़े, ॥६१॥ देवी ने किन्हीं की एक आंख

द्बाहवश्छिन्नग्रीवास्तथापरे ॥ ६० ॥ शिरांसि पेतुरन्ये-षामन्ये मध्ये विदारिताः । विच्छिन्नजंघास्त्वपरे पेतुरुर्व्यां महासुराः ॥ ६१ ॥ एकबाहक्षिचरणाः केचिद्देव्या द्विधा कृताः । छिन्नेऽपि चान्ये शिरसि पतिताः पुनरुत्थिताः ॥ ६२ ॥ कबन्धा युयुधुर्देव्या गृहीतपरमायुधाः । ननृतुश्चापरे तत्र युद्धे तूर्यलयाश्रिताः ॥ ६३ ॥ कबन्धाश्छिन्नशिरसः खड्ग-

फोड़ी, किन्हीं की एक भुजा और किन्हीं की जंघा काट कर दो टुकड़े किये। अनेक शिर कट कर जा पड़े और पुनः उठकर लड़ने लगे ॥६२॥ रुण्डों ने बड़े २ अस्त्रों के साथ युद्ध किया

अनेक असुर बाजे की लय के साथ नाचते थे ॥६३॥ सिरकटे हुये अनेक असुर खड्ग शक्ति दुधारी तलवार हाथ में लिये देवी को ठहरो ! ठहरो !! मुख से बोलते थे ॥६४॥ वह

शक्त्यृष्टिपाणयः । तिष्ठ तिष्ठेति भाषन्तो देवीमन्ये महासुराः ॥ ६४ ॥ पातितैः रथनागाश्वैरसुरैश्च वसुन्धरा । अगम्या साभवत्तत्र यत्राभूत्स महारणः ॥ ६५ ॥ शोणितौघा महानद्यः सद्यस्तत्र प्रसुस्त्रवुः । मध्ये चासुरसैन्यस्य वारणासुरवाजिनाम् ॥ ६६ ॥ क्षणेन तन्महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका । निन्ये क्षयं यथा वह्निस्तृणदारुमहाचयम् ॥ ६७ ॥ स च सिंहो

युद्धस्थल रथ, हाथी घोड़े तथा असुरों के गिरने से अगम्य (जहां चला न जाये) हो गया ॥६५॥ तत्काल ही युद्ध में असुर सेना के हाथी, घोड़े और असुरों के रक्त की नदियां

वह गईं ॥६६॥ असुरों की उस विशाल सेना को क्षणभर में जगदम्बा ने ऐसे नष्ट कर दिया जैसे अग्नि घास और लकड़ी के ढेर को जला देती है ॥६७॥ देवी का वाहन सिंह गर्दन के बाल हिलाता हुआ गर्जना करता था मानों वह शत्रुओं के प्राण ही खींच लेता

महानादमुत्सृजन्धुतकेसरः । शरीरेभ्योऽमरारीणामसूनिव विचिन्वति ॥ ६८ ॥ देव्या गणैश्च तैस्तत्र कृतं युद्धं महासुरैः । यथैषां तुतुषुर्देवाः पुष्पवृष्टिमुचो दिवि ॥ॐ॥ ॥ ६९ ॥

था ॥६८॥ तथा देवी के गणों ने असुरों के साथ जो युद्ध किया तो देवताओं ने प्रसन्न हो कर उन पर पुष्प वर्षा की ॥६९॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये महिषासुर सैन्यवधो नाम द्वितीयोऽध्यायः ॥२॥ उवाच १ । श्लोकाः ६८ । एवम् ६९ । एवमादितः १७३ ॥

ॐ जय जय मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु मम कामाः जगदम्बार्पणमस्तु । ऐसा बोल कर जल छोड़ना चाहिये ।

नोट :-अध्याय के अन्त में 'इति' 'अध्याय' तथा वधः शब्द नहीं कहने चाहियें। देखो पृष्ठ ६ ।

---

## हवन के लिये

दूसरे अध्याय के समाप्त होने पर भोजपत्र में १ कमल गट्टा, १ सुपारी, १ इलायची छोटी, २ लौंग, पान तथा गुग्गल घी में भिगो कर खड़े हो कर नीचे लिखे मन्त्र से आहुति दे ।

मन्त्रः- ॐ अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन् । ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां काँ पील वासिनीम् स्वाहा ॥

इसके उपरान्त नीचे लिखे मन्त्र से स्रुवे से तीन बार घृत छोड़ना चाहिये।

ॐ अम्बायै स्वाहा अम्बिकायै स्वाहा अम्बालिकायै नमो नमः स्वाहा

---

# तृतीयोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ उद्यद्भानुसहस्रकान्तिमरुणक्षौमां शिरो मालिका रक्तालिप्त पयोधरां जपवटीं विद्यामभीतिं वराम् । हस्ताब्जैर्दधतीं त्रिनेत्रविलसद्वक्त्रारविन्दश्रियं देवीं बद्धहिमांशुरत्नमुकुटां वन्देऽरविन्दस्थिताम् ॥

जिन के अङ्गों की कान्ति उदयकाल के सहस्रों सूर्यों के समान है, जो लाल रंग की साड़ी पहने हुए हैं, जिन के गले में मुण्डमाला शोभा पा रही है और दोनों स्तनों पर चन्दन का लेप लगा है। जो अपने हाथों में जपमालिका विद्या, अभय और वर नामक मुद्राएँ

धारण किये हुए हैं। तीन नेत्रों से सुशोभित मुखारविन्द की बड़ी शोभा हो रही है। जिन के मस्तक पर चन्द्रमा के साथ ही रत्नमय मुकुट बंधा है तथा वे कमल के आसन पर विराजमान हैं। ऐसी देवी को मैं भक्ति पूर्वक प्रणाम करता हूँ।

ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ निहन्यमानं तत्सैन्यमवलोक्य महासुरः। सेनानीश्चिक्षुरः कोपाद्ययौ योद्धुमथाम्बिकाम् ॥ २ ॥ स देवीं शरवर्षेण ववर्ष समरेऽसुरः। यथा मेरुगिरेः शृङ्गं

मेधा ऋषि बोले ॥१॥ इस प्रकार सेना को नष्ट हुये देख कर महिषासुर की सेना का सेनापति चिक्षुर क्रोध में भर देवी से लड़ने चला ॥२॥ उस ने देवी के ऊपर इस तरह बाणों की वर्षा की जैसे मेघ मेरु शिखर पर जल की वर्षा करता है ॥३॥ तब देवी ने लीलामात्र से उसके बाणों को काटकर अपने बाणों से उसके घोड़ों और सारथियों को मार दिया ॥४॥ तुरन्त ही उसका धनुष और ऊंची लहराती हुई ध्वजा को काट डाला। धनुष कट जाने पर उस के अंगों

को अपने बाणों से बींध डाला ॥५॥ धनुष, घोड़े, सारथी तथा रथ के नष्ट हो जाने पर वह असुर खड्ग व ढाल लेकर देवी की ओर दौड़ा ॥६॥ अपनी तीखी धार वाली खड्ग से

तोयवर्षेण तोयदः ॥ ३ ॥ तस्य छित्वा ततो देवी लीलयैव शरोत्करान् । जघान तुरगान् बाणैर्यन्तारं चैव वाजिनाम् ॥ ४ ॥ चिच्छेद च धनुः सद्यो ध्वजं चातिसमुच्छ्रितम् । विव्याध चैव गात्रेषु छिन्नधन्वानमाशुगैः ॥ ५ ॥ स छिन्नधन्वा विरथो हताश्वो हतसारथिः । अभ्यधावत तां देवीं खड्गचर्मधरोऽसुरः ॥ ६ ॥ सिंहमाहत्य खड्गेन तीक्ष्णधारेण मूर्धनि । आज

सिंह के शिर पर चोट कर के देवी के बाईं भुजा पर भी अत्यन्त वेग से प्रहार किया ॥७॥ हे राजन् ! भुजा से लग कर असुर की खड्ग टूट गई तब क्रोध से आंखें लाल कर उसने शूल

उठाया ॥८॥ और उस असुर ने शूल को भद्रकाली के ऊपर चलाया, आकाश से आते हुए सूर्य के समान उस शूल को तेज से प्रकाशमान ॥९॥ देखकर देवी ने अपना शूल

घान भुजे सव्ये देवीमप्यतिवेगवान् ॥ ७ ॥ तस्याः खड्गो भुजं प्राप्य पफाल नृपनन्दन । ततो जग्राह शूलं स कोपा दरुण लोचनः ॥ ८ ॥ चिक्षेप च ततस्तत्तु भद्रकाल्यां महासुरः । जाज्वल्यमानं तेजोभी रविबिम्बमिवांबरात् ॥ ९ ॥ दृष्ट्वा तदापतच्छूलं देवीशूलममुञ्चत । तच्छूलं शतधा तेन नीतं स च महासुरः ॥ १० ॥ हते तस्मिन्महावीर्ये महि-

छोड़ा जिसने शूल के सैंकड़ों टुकड़े कर असुर को मार दिया ॥१०॥ महिषासुर के महाबली सेनापति चिक्षुर के मरने पर हाथी पर सवार हो कर चामर नामक असुर सम्मुख आया ॥११॥

उसने ही देवी पर शक्ति का प्रहार किया परन्तु देवी ने उसे हुंकार से निस्तेज कर भूमि पर गिरा दिया ॥१२॥ शक्ति टूट कर भूमि पर गिरी देखकर असुर ने क्रोध में आकर शूल चलाया

षस्य, चमूपतौ । आजगाम गजारूढश्चामरस्त्रिदशार्दनः ॥ ११ ॥ सोऽपि शक्तिं मुमोचाथ देव्यास्तामम्बिका द्रुतम् । हुङ्काराभिहतां भूमौ पातयामास निष्प्रभाम् ॥ १२ ॥ भग्नां शक्तिंनिपतितां दृष्ट्वा क्रोधसमन्वितः । चिक्षेप चामरः शूलं बाणै-स्तदपि साच्छिनत् ॥ १३ ॥ ततः सिंहः समुत्पत्य गजकुम्भा-न्तरे स्थितः । बाहुयुद्धेन युयुधे तेनोच्चै स्त्रिदशारिणा ॥ १४ ॥

जिसको देवी ने बाणों से काट डाला।१३। इसके पश्चात सिंह उछल कर, हाथी के मस्तक पर बैठ असुरों से युद्ध करने लगा ॥१४॥ युद्ध करते करते दोनों हाथी के ऊपर से नीचे गिर पड़े और

अत्यन्त क्रोध में भर एक दूसरे पर भयंकर प्रहार करने लगे ॥१५॥ तत्पश्चात् सिंह ने कूद कर अपने हाथ के वार से चामर का शिर अलग कर दिया ॥१६॥ उदग्र को देवी ने शिला

युद्ध्यमानौ ततस्तौ तु तस्मान्नागान्महीं गतौ । युयुधातेऽति संरब्धौ प्रहारैरतिदारुणैः ॥ १५ ॥ ततो वेगात् खमुत्पत्य निपत्य च मृगारिणा । करप्रहारेण शिरश्चामरस्य पृथक्कृतम् ॥ १६ ॥ उदग्रश्च रणे देव्या शिलावृक्षादिभिर्हतः । दन्तमुष्टितलैश्चैव करालश्च निपातितः ॥ १७ ॥ देवी क्रुद्धा गदापातैश्चूर्णया— मास चोद्धतम् । वाष्कलं भिन्दिपालेन बाणैस्ताम्रं तथान्ध-

और वृक्ष आदि से मार दिया तथा कराल ने दन्त, घूंसा आदि और लातों की मार से प्राण छोड़ दिये ॥१७॥ क्रोध में भरी हुई देवी ने गदा मारकर उद्धत का कचूमर निकाल दिया वाष्कल

का भिन्दिपाल से आम्र तथा अन्धक का बाणों द्वारा ॥१८॥ तीन नेत्रों वाली परमेश्वरी ने त्रिशूल से उग्रास्य, उग्रवीर्य, महाहनु का वध किया ॥१९॥ तलवार से विडाल का शिर काट

कम् ॥ १८ ॥ उग्रास्यमुग्रवीर्यं च तथैव च महाहनुम् । त्रिनेत्रा च त्रिशूलेन जघान परमेश्वरी ॥ १९ ॥ विडालस्यासिना कायात्पातयामास वै शिरः । दुर्धरं दुर्मुखं चोभौ शरैर्निन्ये यमक्षयम् ॥ २० ॥ एवं संक्षीयमाणे तु स्वसैन्ये महिषासुरः । माहिषेण स्वरूपेण त्रासयामास तान् गणान् ॥ २१ ॥ कांश्चित्तुण्डप्रहारेण खुरक्षेपैस्तथापरान् । लांगूलताडितांश्चान्या-

कर गिरा दिया, दुर्धर व दर्मुख दोनों को बाणों से यमद्वार पहुंचाया ॥२०॥ इस प्रकार अपना सेना का नाश होते देखकर महिषासुर भैंसे का रूप धर कर देवी के गणों को डराने लगा ॥२१॥

किन्हीं को मुख से, कुछको खुरों से, बहुतों को पूंछ से और अनेकों को सींगों से मार गिराया ॥२२॥ बहुत से गणों को वेग से, किन्हीं को नाद से, कुछ को चक्कर देकर अनेकों तथा अन्यों

ञ्छृङ्गाभ्यां च विदारितान् ॥ २२ ॥ वेगेन कांश्चिदपरान्नादेन भ्रमणेन च । निःश्वासपवनेनान्यान पातयामास भूतले ॥ २३ ॥ निपात्य प्रमथानीकमभ्यधावत सोऽसुरः । सिंहं हन्तुं महादेव्याः कोपं चक्रे ततोऽम्बिका ॥ २४ ॥ सोऽपि कोपान्महावीर्यः खुरक्षुराणमहीतलः । शृङ्गाभ्यां पर्वतानुच्चाँश्चिक्षेप च ननाद च ॥ २५ ॥ वेगभ्रमणविक्षुराणा मही तस्य व्यशीर्यत ।

को सांस की वायु के द्वारा भूमि पर गिरा दिया ॥२३॥ पराक्रमी महिषासुर सेना को इस तरह गिरा कर देवी के सिंह को मारने चला। तब देवी क्रोधित हुई ॥२४॥ महाबली असुर भी क्रोध

में भर खुरों से भूमि खोदने लगा तथा अपने सींगों से ऊंचे २ पर्वतों को फैंककर गरजने लगा ॥२५॥ असुर के वेग पूर्वक घूमने से पृथ्वी फटने लगी पूँछ से ताडित समुद्र का जल सब ओर

लाँगूलेनाहतश्चाब्धिः प्लावयामास सर्वतः ॥ २६ ॥ धुतशृङ्ग—विभिन्नाश्च खराडं खराडं ययुर्धनाः । श्वासानिलास्ताः शतशो निपेतुर्नभसोऽचलाः ॥ २७ ॥ इति क्रोधसमाध्मात-मापतन्तं महासुरम् । दृष्ट्वा सा चरािडका कोपं तद्वधाय तदाकरोत् ॥ २८ ॥ सा त्तिप्त्वा तस्य वै पाशं तं बबन्ध महा-सुरम् । तत्याज माहिषं रूपं सोऽपि बद्धो महामृधे ॥ २९ ॥

फैलने लगा ॥२६॥ बादल सींगों के हिलाने से टुकड़े टुकड़े हो गये और स्वास की वायु से सैंकड़ों पर्वत गिर पड़े ॥२७॥ इस प्रकार क्रोध से झटकते हुए उस महिषासुर को देखकर देवी ने उसे

मारने के लिये क्रोध किया ॥२८॥ और अपनी पाश फैंककर महिषासुर को बाँध लिया, तब उस ने अपना भैंसे का रूप त्याग दिया ॥२९॥ और सिंह का रूप धारण कर लिया, ज्योंहि देवी उस

ततः सिंहोऽभवत्सद्यो यावत्तस्याम्बिका शिरः । छिनत्ति ताव-त्पुरुषः खड्गपाणिरदृश्यत ॥ ३० ॥ तत एवाशु पुरुषं देवी चिच्छेद सायकैः । तं खड्गचर्मणा सार्द्धं ततः सोऽभून्महा गजः ॥ ३१ ॥ करेण च महासिंहं तं चकर्ष जगर्ज च । कर्ष-तस्तु करं देवी खड्गेन निरकृन्तत ॥ ३२ ॥ ततो महासुरो भूयो माहिषं वपुरास्थितः । तथैव क्षोभयामास त्रैलोक्यं

का शिर काटने लगी त्यों ही खड्ग हाथ में लिये वह पुरुष रूप में दीखने लगा ॥३०॥ देवी ने उसको शीघ्र ही बाणों से बींध डाला तो वह ढाल और तलवार लिये बहुत बड़ा हाथी बन

गया ॥३१॥ तथा सूंड से सिंह को खींचा और गरजा, इस प्रकार खींचते हुए देवी ने उसकी सूंड काट डाली ॥३२॥ महिषासुर ने पुनः भैंसे का रूप धारण कर लिया और

सचराचरम् ॥ ३३ ॥ ततः क्रुद्धा जगन्माता चण्डिका पानमुत्तमम् । पपौ पुनः पुनश्चैव जहासारुणलोचना ॥ ३४ ॥ ननर्द चासुरः सोऽपि बलवीर्यमदोद्धतः । विषाणाभ्यां च चिक्षेप चण्डिकां प्रति भूधरान् ॥ ३५ ॥ सा च तान् प्रहितांस्तेन चूर्णयन्ती शरोत्करैः । उवाच तं मदोद्धतमुखरागा

पहले की तरह तीनों लोक के चर अचर सब प्राणियों को व्याकुल कर दिया ॥३३॥ इस पर क्रोध में भरी हुई जगत माता चण्डिका बारम्बार उत्तम मधु का पान करने और लाल आंखें करके हंसने लगी ॥३४॥ अपनी शक्ति के मद से उन्मत्त हुआ वह असुर भी गरजने लगा और सींगों

से पर्वतों को उठा उठा कर देवी पर फैंकने लगा ॥ ३५॥ देवी ने उसके फैंके हुए पर्वतों को बाणों से चूर चूर कर दिया और मधु के मद से रक्त मुखी देवी ने स्पष्ट शब्दों में असुर को कहा ॥ ३६॥

कुलाचरम् ॥ ३६ ॥ देव्युवाच ॥ ३७ ॥ *गर्ज गर्ज क्षणं मूढ मधु यावत्पिबाम्यहम् । मया त्वयि हतेऽत्रैव गर्जिष्यन्त्याशु देवताः ॥ ३८ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३९ ॥ एवमुक्त्वा समुत्पत्य सारूढा तं महासुरम् । पादेनाक्रम्य कण्ठे च शूलेनैनमताडयत्

देवी बोली ॥३७॥ हे मूढ़ ! मैं जब तक मधु पीती हूं तब तक तू क्षण भर के लिए और गर्ज ले। इसी स्थल पर मेरे द्वारा तेरे मरने पर शीघ्र ही देवता गर्जना करेंगे ॥३८॥ मेधा ऋषि बोले ॥३९॥

*हवन में यहां शहद की आहुति देनी।

ऐसा कहकर देवी उछल कर असुर के ऊपर जा बैठी और पैर से दबा शूल से उसके कण्ठ में आघात किया ॥४०॥ महिषासुर भी देवी के पैरों से दबा हुआ देवी की शक्ति के सामने शिथिल

ऽयत् ॥ ४० ॥ ततः सोऽपि पदाक्रान्तस्तया निजमुखात्ततः ।
अर्धनिष्क्रान्त एवासीद्देव्या वीर्येण संवृतः ॥ ४१ ॥ अर्धनिष्क्रा-
न्त एवासौ युध्यमानो महासुरः । तया महासिना देव्या
शिरश्छित्त्वा निपातितः ॥ ४२ ॥ ततो हाहाकृतं सर्वं दैत्यसैन्यं
ननाश तत् । प्रहर्षं च परं जग्मुः सकला देवतागणाः ॥ ४३ ॥

हो गया और किसी तरह आधा शरीर निकाल लड़ने लगा ॥४१॥ आधे शरीर से इस प्रकार लड़ते हुए देवी ने तलवार से महिषासुर का शिर काट कर गिरा दिया ॥४२॥ यह

तुष्टुवुस्तां सुरा देवीं सह दिव्यैर्महर्षिभिः । जगुर्गन्धर्वपतयो ननृतुश्चाप्सरोगणाः ॥ ४४ ॥

देख हाहाकार करती हुई दैत्यों की सारी सेना भाग गई और सारे देवता अत्यन्त प्रसन्न हुए ॥४३॥
तथा सब देवों और ऋषियों ने देवी की स्तुति की, गन्धर्व गाने और अप्सरायें नाचने लगीं ॥४४॥

इति श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये महिषासुरवधो नाम तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ उवाच ३ । श्लो० ४१ । एवमादितः ४४ ॥ २१७ ॥

ॐ जय जय मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु मम कामाः जगदम्बार्पणमस्तु । ऐसा बोल कर जल छोड़ना चाहिये ।

# — चतुर्थोऽध्यायः —

अथ ध्यानम् ॥ ॐ कालाभ्राभां कटाक्षैररिकुलभयदां मौलिबद्धेन्दुरेखां शंखं चक्रं कृपाणं त्रिशिखमपि करै रुद्वहन्तीं त्रिनेत्राम् । सिंहस्कन्धाधिरूढां त्रिभुवनमखिलं तेजसा पूरयन्तीं ध्यायेद् दुर्गां जयाख्यां त्रिदशपरिवृतां सेवितां सिद्धिकामैः ॥

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ शक्रादयः सुरगणा निहतेऽतिवीर्ये तस्मिन्दुरात्मनि सुरारिबले च देव्या । तां तुष्टुवुः प्रणति-

जिनके अङ्गों की कांति काले मेघ के समान श्याम है और जो अपने कटाक्षों से शत्रु-समूह को भय प्रदान करती हैं । जिन के मस्तक पर आबद्ध चन्द्रमा की रेखा शोभायमान है,

और जिनके हाथ में शङ्ख, चक्र, कृपान और त्रिशूल है और जिनके तीन नेत्र हैं, जो सिंह पर चढ़ी हुई हैं और जो अपने तेज से तीनों लोकों को परिपूर्ण कर रही हैं, देवता जिन्हें सब ओर से घेरे रहते हैं, और सिद्धि के इच्छुक पुरुष जिनकी सेवा करते हैं उन जया नाम वाली दुर्गा देवी का मैं ध्यान करता हूं।

मेधा ऋषि बोले ॥१॥ देवी के द्वारा महाबली दुष्ट महिषासुर के सेना सहित मारे जाने पर इन्द्र आदि सभी देवता प्रसन्न होकर शिर, कण्ठ और गर्दन झुका कर प्रणाम कर उत्तम वाणियों से स्तुति करने लगे ॥२॥ जिस देवी ने इस सम्पूर्ण जगत को अपनी

नम्रशिरोधरांसा वाग्भिः प्रहर्षपुलकोद्‌गमचारुदेहाः ॥ २ ॥
देव्या यया ततमिदं जगदात्मशक्त्या निश्शेषदेवगणशक्ति-

शक्ति से व्याप्त कर रखा है, जो सम्पूर्ण देवों की शक्ति का समुदाय है जो समस्त देवों और महर्षियों की पूज्य है उस अम्बिका देवी को हम भक्ति से युक्त हो नमस्कार करते हैं, वह हमारा

कल्याण करे ॥३॥ जिसके अनुभव प्रभाव और बल का विष्णु ब्रह्मा और शिवजी भी वर्णन नहीं कर सकते वह चण्डिका देवी सारे संसार के पालन और अशुभ भय के नाश के लिये

समूहमूर्त्या ॥ तामम्बिकामखिलदेवमहर्षिपूज्यां भक्त्या नताः स्म विदधातु शुभानि सा नः ॥ ३ ॥ यस्याः प्रभावमतुलं भगवाननन्तो ब्रह्मा हरश्च न हि वक्तुमलं बलं च । सा चण्डिकाखिलजगत्परिपालनाय नाशाय चाशुभभयस्य मतिं करोतु ॥ ४ ॥ या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भवनेष्वलक्ष्मीः पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः । श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य

प्रेरित हो ॥४॥ जो पुण्यात्मा पुरुषों के घरों में लक्ष्मी रूप से, पापियों के यहां दरिद्रता रूप से, ज्ञानियों के हृदय में बुद्धि रूप से, सत्पुरुषों में श्रद्धा रूप से, कुलांगनाओं में लज्जा के समान हो।

हे देवी! हम सब आपके सामने नत मस्तक हैं इस संसार की पालना करो ॥५॥ हे देवी तेरे इस अचिन्त्य रूप का, असुरों की नाशक तेरी शक्ति तथा संग्राम में होने वाले तुम्हारे चरित्रों को

लज्जा तां त्वां नताःस्म परिपालय देवि विश्वम् ॥ ५ ॥ किं वर्णयाम तव रूपमचिन्त्यमेतत् किं चातिवीर्यमसुरक्षयकारि-भूरि । किं चाहवेषु चरितानि तवाद्भुतानि सर्वेषु देव्यसुर-देवगणादिकेषु ॥ ६ ॥ हेतुः समस्त जगतां त्रिगुणापि दोषैर्न ज्ञायसे हरिहरादिभिरप्यपारा । सर्वाश्रयाखिलमिदं जगदंश भूतमव्याकृता हि परमा प्रकृतिस्त्वमाद्या ॥ ७ ॥ यस्याः समस्त

हम कैसे वर्णन करें ॥६॥ त्रिगुण स्वरूप होने पर भी आप सारे जगत की उत्पत्ति में कारण हो तथा दोषों से मुक्त होने के कारण विष्णु, महादेव आदि भी आपका पार नहीं पाते, आप सब का

आश्रय हो, यह सारा जगत आपका अंश भूत है, आप विकार रहित और अनादि शील तथा परम प्रकृति हो ॥७। हे देवी ! तुम स्वाहा और स्वधा हो, सब यज्ञों में जिस के

सुरता समुदीरणेन तृप्तिं प्रयाति सकलेषु मखेषु देवि । स्वाहासि वै पितृगणस्य च तृप्तिहेतुरुच्चार्यसे त्वमत एव जनैः स्वधा च ॥ ८ ॥ या मुक्तिहेतुरविचिन्त्य महाव्रता त्वमभ्यस्यसे सुनियतेन्द्रियतत्त्वसारैः । मोक्षार्थिभिर्मुनिभिरस्तसमस्तदोषैर्विद्यासि सा भगवति परमा हि देवी ॥ ९ ॥ शब्दात्मिका सुविमलर्ग्यजुषां निधानमुद्गीथर-

उच्चारण से देवता तृप्ति लाभ करते हैं वह स्वाहा आप ही हैं और पितरों की तृप्ति का कारण स्वाहा रूप भी आप ही हैं ॥८॥ हे देवी ! आप मुक्ति का कारण और अचिन्त्य ब्रह्मज्ञान

रूपा महाव्रता हो। राग द्वेष आदि रोगों से रहित,तत्ववेत्ता, जितेन्द्रिय तथा मोक्ष के इच्छुक मुनि आप का अभ्यास करते हैं इस लिये आप सर्वोपरि हो ॥९॥ आप शब्द-स्वरूपा हैं, पवित्र ऋग्वेद और यजुर्वेद तथा उद्गीथ के रमणीय पदों के पाठ वाले सामवेद की आश्रय हो,

भ्यपदपाठवतां च साम्नाम् । देवी त्रयी भगवती भवभाव-नाय वार्त्ता च सर्व जगतां परमार्त्ति हन्त्री ॥ १० ॥ मेधासि देवि विदिताखिलशास्त्रसारा दुर्गासि दुर्गभवसागरनौरसङ्गा । श्रीः कैटभारिहृदयैककृताधिवासा गौरी त्वमेव शशिमौलिकृत-प्रतिष्ठा ॥ ११ ॥ ईषत्सहासममलं परिपूर्णचन्द्रबिम्बानुकारि

आप देवी, वेदत्रयी और छः ऐश्वर्यों से युक्त हो, प्राणियों के लिये आजीविका तथा संसार की विपत्तियों को हरण करने वाली हो ॥१०॥ हे देवी! जिस से सम्पूर्ण शास्त्रों के तत्त्व का

ज्ञान होता हैवह मेधा शक्ति आप ही हैं तथा दुर्गम संसार सागर से पार होने के लिये नौकारूप दुर्गा देवी भी आप हैं, कैटभ के शत्रु भगवान् विष्णु के हृदय में वास करने वाली लक्ष्मी

कनकोत्तमकान्तिकान्तम् । अत्यद्भुतं प्रहृतमात्तरुषा तथापि वक्त्रं विलोक्य सहसा महिषासुरेण ॥ १२ ॥ दृष्ट्वा तु देवि कुपितं भ्रुकुटि करालमुद्यच्छशाङ्कसदृशच्छवि यन्न सद्यः । प्राणान्मुमोच महिषस्तदतीव चित्रं कैर्जीव्यते हि कुपितान्तक-दर्शनेन ॥ १३ ॥ देवि प्रसीद परमा भवति भवाय सद्यो विनाशयसि

तथा शिव के वाम भाग में विराजने वाली गौरी देवी भी आप हीं हैं ॥११॥ आप का मन्द २ मुस्कराते हुए पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान निर्मल तथा सुवर्ण के समान कान्तिमान मुख को देखकर महिषासुर ने क्रोध से प्रहार किया यह कितना आश्चर्य है (अर्थात् वह बड़ा

क्रूर था) ॥१२॥ हे देवी ! उदय काल के चन्द्रमा की भांति लाल तथा तिरछी भौंहों से भयानक क्रोध से युक्त मुख को देखकर महिषासुर ने तत्क्षण प्राणों का त्याग नहीं किया जिसमें अत्यन्त आश्चर्य है क्योंकि कुपित यमराज को देखकर कौन जी सकता है ॥१३॥ हे देवि !

कोपवती कुलानि । विज्ञातमेतदधुनैव यदस्तमेतन्नीतं बलं सुविपुलं महिषासुरस्य ॥ १४ ॥ ते संमता जनपदेषु धनानि तेषां तेषां यशांसि न च सीदति धर्मवर्गः । धन्यास्त एव निभृतात्मजभृत्यदारा येषां सदाभ्युदयदा भवती प्रसन्ना ॥ १५ ॥

आप प्रसन्न हों। आप संसार के लिए हितकारिणी है, परन्तु कुपित हो कर शीघ्र ही कुलों को नष्ट कर देती हो, आपने महिषासुर के महान बल को शीघ्र नष्ट कर दिया इसी से हम ने अब आपके इस स्वभाव को जाना ॥१४॥ हे कल्याण कारिणी देवी ! जिनपर आप प्रसन्न

होती हो वे ही संसार में कुशल हैं, वे ही धन और यश से युक्त हैं, उन्हीं में धर्म के सारे लक्षण मिलते हैं, वे ही धन्य हैं तथा पुत्र, स्त्री और भृत्यों से भरपूर होते हैं ॥१५॥ हे देवि! ऐसे सत्पुरुष सदैव सम्पूर्ण धार्मिक कामों को आदर पूर्वक करते हैं और आप की कृपा से

धर्म्याणि देवि सकलानि सदैव कर्माण्यत्यादृतः प्रतिदिनं सुकृती करोति । स्वर्गं प्रयाति च ततो भवतीप्रसादाल्लोक-त्रयेऽपि फलदा ननु देवि तेन ॥ १६ ॥ दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि । दारिद्र्य-

स्वर्ग को प्राप्त होते हैं इस लिये हे देवि आप तीनों लोकों में उत्तम फल देने वाली हो ॥१६॥ हे दुर्गे जो आप का स्मरण करते हैं आप उनके सम्पूर्ण दुःखों को दूर करती हो, और स्वस्थ पुरुषों को स्मरण करने पर श्रेष्ठ बुद्धि देती हो, दरिद्रों का दुख और भय हरने वाली तुम्हारे सिवा

कौन है। निश्चय आप सब प्राणियों का कल्याण करने के लिये दया से युक्त रहती हो ॥१७॥ असुरों के मरने से संसार को सुख मिले तथा चिरकाल तक जो उन्हों ने नरक

दुःखभयहारिणि का त्वदन्या सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥ १७ ॥ एभिर्हतैर्जगदुपैति सुखं तथैते कुर्वन्तु नाम नरकाय चिराय पापम् । संग्राममृत्युमधिगम्य दिवं प्रयान्तु मत्वेति नूनमहितान्विनिहंसि देवि ॥ १८ ॥ दृष्ट्वैव किं न भवति प्रकरोति भस्म सर्वासुरानरिषु यत्प्रहिणोषि शस्त्रम् । लोकान् प्रयान्तु रिपवोऽपि हि शस्त्रपूता इत्थं मतिर्भवति तेष्वपि

प्राप्ति के लिये पाप किया है युद्ध में मर कर वे स्वर्ग में जायें यह सोचकर ही आप असुरों का वध करती हैं ॥१८॥ हे देवि ! आप असुरों को दृष्टि से भस्म कर सकती थी उन

पर अस्त्र शस्त्र चलाने की आवश्यकता न थी। शस्त्रों से पवित्र होकर यहशत्रु भी उत्तम लोकों को प्राप्त हो इस प्रकार उन के प्रति भी आप का विचार अत्यन्त उत्तम रहता है ॥१६॥

तेऽतिसाध्वी ॥ १९ ॥ खड्गप्रभानिकरविस्फुरणैस्तथोग्रैः शूला-
ग्रकान्तिनिवहेन दृशोऽसुराणाम् । यन्नागता विलयमंशु-
मदिन्दुखण्डयोग्यानननं तव विलोकयतां तदेतत् ॥ २० ॥
दुर्वृत्तवृत्तशमनं तव देवि शीलं रूपं तथैतदविचिन्त्यमतुल्य-
मन्यैः । वीर्यं च हन्तृ हृतदेवपराक्रमाणां वैरिष्वपि प्रकटि-
तैव दया त्वयेत्थम् ॥ २१ ॥ केनोपमा भवतु तेऽस्य पराक्रम-

किरणों से सुशोभित अर्ध चन्द्रमा के समान आपके मुख को देखते हुए भी आप के खड्ग की उग्र दीप्ति पुँज और त्रिशूल के अग्र भाग की कांति समूह से असुरों की आँखों

की ज्योति नष्ट नहीं हुई ॥२०॥ हे देवि आप का स्वभाव व रूप दुराचारियों को सदाचारी बनाने वाला और अचिन्त्य है क्यों कि कोई उस की समता नहीं कर सकता, तथा आप की शक्ति देवों के पराक्रम को हरन करने वाले असुरों को नष्ट करती है इस प्रकार आप की

स्य रूपं च शत्रुभयकार्यतिहारि कुत्र । चित्ते कृपा समर-निष्ठुरता च दृष्टा त्वय्येव देवि वरदे भुवन त्रयेऽपि ॥ २२ ॥
त्रैलोयमेतदखिलं रिपुनाशनेन त्रातं त्वया समरमूर्धनि तेऽपि हत्वा । नीता दिवं रिपुगणा भयमप्यपास्तमस्माक-मुन्मदसुरारिभवं नमस्ते ॥ २३ ॥ *शूलेन पाहि नो देवि पाहि

दया शत्रुओं पर भी प्रकट करती है ॥२१॥ हे वरदायिनी देवि ! तीनों लोकों में किसके साथ

---

* हवन में २४, २५, २६, २७, श्लोक को पढ़कर आहुति न देवें केवल इन ४ श्लोकों के स्थान पर 'श्री महालक्ष्म्यैः स्वाहा' ऐसा कहकर कौलडोडी की आहुति दें।

आप के इस पराक्रम की तुलना की जाए, आप के समान शत्रुओं के लिये भय दायक तथा मनोहर स्वरूप किसका है, हृदय में कृपा, परन्तु युद्ध में निष्ठुरता आप के मन में देवी ॥२२॥

खड्गेन चाम्बिके । घण्टास्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ २४ ॥ प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे । भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ २५ ॥ सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते । यानि चात्यर्थघोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ २६ ॥ खड्गशूल गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके । करपल्लवसंगीनि

शत्रुओं का नाश करके सारी त्रिलोकी की आप ने रक्षा की है, तथा शत्रुओं को मार कर स्वर्ग को पहुंचाया है और राक्षसों से हमारा भय दूर किया, आपको नमस्कार है ॥२३॥

हे अम्बिके देवि ! शूल, खड्ग, घण्टाके शब्द, तथा धनुष की टङ्कार से हमारी रक्षा करो ॥२४॥ हे चण्डिके ! पूर्व और पश्चिम, दक्षिण तथा उत्तर चारों दिशाओं में अपने त्रिशूल को घुमाकर हमारी रक्षा करो ॥२५॥ तीनों लोकों में आप के जो सौम्य तथा अत्यन्त भयङ्कर रूप

तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ २७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ २८ ॥ एवं स्तुता सुरैर्दिव्यैः कुसमैर्नन्दनोद्भवैः । अर्चिता जगतां धात्री तथा गन्धानुलेपनैः ॥ २९ ॥ भक्त्या समस्तैस्त्रिदशैर्दिव्यैर्धूपैस्तु-धूपिता । प्राह प्रसाद सुमुखी समस्तान् प्रणतान् सुरान् ॥ ३० ॥ देव्युवाच ॥ ३१ ॥ व्रियतां त्रिदशाः सर्वे यदस्मत्तोऽभिवा-

विचरते हैं उन से हमारी और संसार की रक्षा करो ॥२६॥ हे अम्बिके ! खड्ग, शूल और गदा आदि जितने भी अस्त्र आप के हाथ में हैं उन के द्वारा सब ओर से हमारी रक्षा करो ॥२७॥

ऋषि बोले ॥२८॥ जब देवों ने जगत के धारण करने वाली देवी का नन्दन बन के पुष्पों तथा गन्ध लेपन द्वारा पूजन और प्रार्थना की ॥२९॥ और सारे देवताओं ने भक्ति पूर्वक

ञ्छितम् ॥ ३२ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३३ ॥ भगवत्या कृतं सर्वं न किंचिदवशिष्यते ॥ ३४ ॥ यदयं निहतः शत्रुरस्माकं महिषासुरः । यदि चापि वरो देयस्त्वयास्माकं महेश्वरि ॥ ३५ ॥ संस्मृता संस्मृता त्वं नो हिंसेथाः परमापदः । यश्च मर्त्यः स्तवैरेभिस्त्वां स्तोष्यत्यमलानने ॥ ३६ ॥ तस्य वित्तर्द्धिविभवैर्धन-

धूप से धूपित की तो देवी ने प्रसन्न मुख से सारे विनम्र देवों से कहा ॥३०॥ देवी बोली ॥३१॥ देवताओ ! अपना इच्छित वर हमसे मांगो ॥३२॥ देव बोले ॥३३॥ आपने हमारी सब इच्छा पूर्ण कर दी, अब कुछ करना शेष नहीं रहा ॥३४॥ क्योंकि आप ने हमारे शत्रु महिषासुर को

मारा, फिर भी हे महेश्वरी यदि आप वर देना चाहती हैं ॥३५॥ तो आप कृपा करके जब भी हम आप का स्मरण करें आप हमारे सब कष्टों को दूर करें और जो मनुष्य इन स्तोत्रों से आपकी

दारादिसम्पदाम् । वृद्धयेऽस्मत्प्रसन्ना त्वं भवेथाः सर्वदाम्बिके ॥ ३७ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३८ ॥ इति प्रसादिता देवैर्जगतोऽर्थे तथाऽऽत्मनः । तथेत्युक्त्वा भद्रकाली बभूवान्तर्हिता नृप ॥ ३९ ॥ इत्येतत्कथितं भूप सम्भूता सा यथा पुरा । देवी देव शरीरेभ्यो जगत्त्रयहितैषिणी ॥ ४० ॥ पुनश्च गौरी देहात्सा समुद्भूता यथाभवत् । वधाय दुष्टदैत्यानां तथा

स्तुति करे ॥३६॥ उसके ऐश्वर्य धन तथा स्त्री और सम्पदा की सदा वृद्धि हो और हे अम्बिके! हम पर सदा प्रसन्न रहो ।३७। ऋषि बोले ।३८। राजन्! देवताओं ने जब अपने

तथा जगत के कल्याण के लिये भद्रकाली देवी को प्रसन्न किया तो 'ऐसा ही होगा' कहकर वह अन्तर्ध्यान हो गई ॥३९॥ हे राजन् ! जिस तरह संसार की हितैषिणी देवी देव शरीरों से पहिले समय में प्रकट हुई थी वह सब तुम्हारे से कहा ॥४०॥ फिर जिस प्रकार पार्वती के शरीर से दुष्ट दैत्यों और शुम्भ, निशुम्भ के वध के लिये वह देवों का उपकार करने वाली प्रकट हुई ॥४१॥ संसार की रक्षा के लिये वह भी सुनो मैं तुम से कहता हूं ॥४२॥

शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ४१ ॥ रक्षणाय च लोकानां देवानामुपकारिणी । तच्छृणुष्व मयाख्यातं यथावत्कथयामि ते ॥ ह्रीं ॐ॥ ॥ ४२ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शक्रादिस्तुतिर्नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥४॥ उवाच ५ । अर्धश्लो० २ । श्लो० ३५ । एवम् ४२ । एवमादितः २५१ ॥

# अथ पञ्चमोऽध्यायः

ॐ अस्य श्रीउत्तरचरित्रस्य रुद्रऋषिः महासरस्वतीदेवता, अनुष्टुप्छन्दः भीमा शक्तिः, भ्रामरी बीजं सूर्यस्तत्त्वं सामवेदः स्वरूपं महासरस्वतीप्रीत्यर्थे उत्तरचरित्रपाठे (हवने) विनियोगः ॥ ३ ॥

## ॥ अथ ध्यानम् ॥

ॐ घराटाशूलहलानि शंखमुसले चक्रं धनुः सायकं हस्ताब्जैर्दधतीं घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ॥ गौरदेह

समुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महापूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दनीम्* ।

ऋषि बोले ।१।- राजन् ! पूर्व काल में शुम्भ तथा निशुम्भ नामक आसुरों नेइन्द्र के हाथ से तीनों लोकों का राज्य तथा यज्ञ का देवों का भाग अपने बल और अहंकार से हरण कर लिय।

ॐ क्लीं ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ पुरा शुम्भनिशुम्भाभ्यामसुराभ्यां शचीपतेः । त्रैलोक्यं यज्ञभागाश्च हृता मदबलाश्रयात् ॥ २ ॥ तावेव सूर्यतां तद्वदधिकारं तथैन्दवम् । कौबेरमथ याम्यं च

॥२॥ वे दोनों स्वयं ही सूर्य, चन्द्रमा, कुवेर, यम और वरुण के अधिकारों का उपयोग करने लगे ॥ ३॥ वायु तथा अग्नि का कार्य भी उन्होंने स्वयं किया और सब देवताओं को अपमानित,

---

* इस का अर्थ पृष्ठ ६२ पर देखें।

राज्य भ्रष्ट, पराजित तथा अधिकार हीन करके स्वर्ग से निकाल दिया। उन दोनों असुरों से अपमानित देवताओं ने अपराजिता देवी का स्मरण किया ॥४-५॥ देवी ने हमें वर दिया था

चक्राते वरुणस्य च ॥ ३ ॥ तावेव पवनर्द्धिं च चक्रतुर्वह्निकर्म च । ततो देवा विनिर्धूता भ्रष्टराज्याः पराजिताः ॥ ४ ॥ हृताधिकारास्त्रिदशास्ताभ्यां सर्वे निराकृताः । महासुराभ्यां तां देवीं संस्मरन्त्यपराजिताम् ॥ ५ ॥ तयास्माकं वरो दत्तो यथापत्सु स्मृताखिलाः । भवतां नाशयिष्यामि तत्क्षणात्परमापदः ॥ ६ ॥ इति कृत्वा मतिं देवा हिमवन्तं नगेश्वरम् । जग्मुस्तत्र ततो

विपत्ति में जब तुम स्मरण करोगे तो मैं तुरन्त ही तुम्हारी विपत्तियों को नष्ट करूँगी ॥६॥ ऐसा निश्चय कर सारे देवता पर्वतराज हिमालय पर गये और वहाँ पर विष्णु माया की स्तुति

करने लगे ॥७॥ देवता बोले ॥८॥ देवी, महादेवी शिवा को हमारा निरन्तर नमस्कार है। हमारा प्रकृति एवं भद्रा को नमस्कार है ॥९॥ रौद्रा, नित्या, गौरी एवं धात्री को नमस्कार है

देवीं विष्णुमायां प्रतुष्टुवुः ॥ ७ ॥ देवा ऊचुः ॥ ८ ॥ नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताःस्मताम् ॥ ९ ॥ रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमोनमः । ज्योत्स्नायै चेन्दु रूपिरायै सुखायै सततं नमः ॥ १० ॥ कल्याणयै प्रणातां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कूर्म्यै नमोनमः । नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाणयै ते नमोनमः ॥ ११ ॥ दुर्गायै

ज्योत्स्नामयी, चन्द्ररूपिणी एवं सुख स्वरूपा देवी को हम प्रणाम करते हैं ॥१०॥ कल्याणी, वृद्धि, एवं सिद्धि रूपा देवी को हम बार बार नमस्कार करते हैं। नैर्ऋति (राक्षसों की लक्ष्मी)

राजाओं की लक्ष्मी और शिवपत्नी को हम नमस्कार करते हैं ॥११॥ दुर्गा, संकट हरने वाली सर्वकारिणी (सब की सार भूता), ख्याती, कृष्णा तथा धूम्रा देवी को हमारा सदैव प्रणाम

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै । ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥ १२ ॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमोनमः । नमो जगत् प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमोनमः ॥ १३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता । नमस्तस्यै ॥ १४ ॥ नमस्तस्यै ॥ १५ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ १६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते नमस्तस्यै ॥ १७ ॥ नमस्तस्यै ॥ १८ ॥ नम-

है ॥१२॥ अतिसौम्या व रौद्रा को हम नमस्कार करते हैं, संसार की प्रतिष्ठा रूपिणी तथा कृति (कार्य) रूपिणी देवी को हम नमस्कार करते हैं ॥१३॥ जो देवी सब भूतों में विष्णुमाया

के नाम से पुकारी जाती है उन के लिये हमारा नमस्कार है ॥१४॥ उन को नमस्कार है ॥१५॥ उनको बारम्बार नमस्कार है ॥१६॥ जो देवी सब प्राणियों में चेतना कहलाती है उनको

स्तस्यै नमोनमः ॥ १९ ॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ २० ॥ नमस्तस्यै ॥ २१ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ २३ ॥ नमस्तस्यै ॥ २४ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ २६ ॥

नमस्कार, उन को नमस्कार, उन को बारम्बार नमस्कार है ॥१७-१९॥ जो देवी सब प्राणियों में बुद्धिरूप से स्थित है उनके लिये नमस्कार, उन को नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ॥२०-२२॥ जो देवी सब प्राणियों में निद्रारूप से विद्यमान है उसके लिये नमस्कार, उनको

नमस्कार, उनको बारम्बार नमस्कार है ।।२३-२५।। जो देवी सब प्राणियों में क्षुधारूप से रहती है उनके लिये नमस्कार है, उनको नमस्कार उनको बारम्बार नमस्कार है ।।२६-२८।। जो देवी सब

नमस्तस्यै ॥ २७ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ २८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ २९ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३० ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ३१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ३२ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३३ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ३४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता-

प्राणियों में छायारूप से स्थित है उनको हमारा बारम्बार नमस्कार है ।।२९-३१।। जो देवी सब प्राणियों में शक्तिरूप से स्थित हैं उनको हम बारम्बार नमस्कार करते हैं ।।३२-३४।। जो देवी सब प्राणियों में तृष्णा रूप से स्थित है उनको हमारा बारम्बार नमस्कार हैं ।।३५-३७।

जो देवी सब प्राणियों में क्षमा रूप से स्थित है उनको हमारा बारम्बार नमस्कार है ॥३८-४०॥
जो देवी सब प्राणियों में जाति प रूसे स्थित है उनको हमारा बारम्बार नमस्कार है ॥४१-४३॥

नमस्तस्यै ॥ ३५ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३६ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ३७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ३८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ३९ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ४० ॥ या देवी सर्व-भूतेषु जातिरूपेण संस्थिताः । नमस्तस्यै ॥ ४१ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४२ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ४३ ॥ या देवी सर्वभूतेषु लज्जा-रूपेण संस्थिता नमस्तस्यै ॥ ४४ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४५ ॥ नमस्तस्यै

जो देवी सब प्राणियों में लज्जा रूप से स्थित है उनको हमारा बारम्बार नमस्कार है ॥४४-४६॥
जो देवी सब प्राणियों में शांति रूप से स्थित है उनको बारम्बार नमस्कार है ॥४७-४९॥ जो देवी

सब प्राणियों में श्रद्धा रूप से स्थित है उनको पुनः पुनः नमस्कार है ॥५०-५२॥ जो देवी सब प्राणियों में कान्ति रूप से स्थित है उनको पुनः पुनः नमस्कार है ॥५३-५५॥ जो देवी सब

नमोनमः ॥ ४६ ॥ या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै ॥ ४७ ॥ नमस्तस्यै ॥ ४८ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ४९ ॥
या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
॥ ५० ॥ नमस्तस्यै ॥ ५१ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ५२ ॥
या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ५३ ॥

प्राणियों में लक्ष्मी रूप से स्थित है उसको बारम्बार नमस्कार है ॥५६-५८॥ जो देवी सब प्राणियों में वृत्ति रूप से स्थित है उसको बार बार नमस्कार है ॥५९-६१॥ जो देवी सब प्राणियों में स्मृति रूप से स्थित है उसको बार बार नमस्कार है ॥६२-६४॥ जो देवी सब

प्राणियों में दया रूप से स्थित है उसको अनेकशः नमस्कार है ॥६५-६७॥ जो देवी सब प्राणियों में तुष्टि रूप से स्थित है उसको बार बार नमस्कार है ॥६८-७०॥ जो देवीसब

नमस्तस्य ॥ ५४ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ५५ ॥ या देवी सर्व-भूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ५६ ॥ नमस्तस्यै ॥ ५७ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ५८ ॥ या देवी सर्वभूतेषु वृत्ति-रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ५९ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६० ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ६१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ६२ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६३ ॥ नमस्तस्यै

प्राणियों में माता रूप से स्थित है उसको बार बार नमस्कार है ॥७१-७३॥ जो देवी सब प्राणियों में भ्रान्ति रूप से स्थित है उसको बार बार नमस्कार है ॥७४-७६॥ जो देवी सब

इन्द्रिय व प्राणियों की अधिष्ठात्री तथा सब प्राणियों में निरन्तर व्याप्त रहती है उसको बारम्बार नमस्कार है ॥७७॥ जो देवी चेतना रूप से सारे जगत् में व्याप्त होकर स्थित है उसको बारम्बार

नमोनमः ॥ ६४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ६५ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६६ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ६७ ॥ या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ६८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ६९ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ७० ॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ७१ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७२ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ७३ ॥ या देवी

नमस्कार है ॥७८-८०॥ इच्छित फल की प्राप्ति के निमित्त पूर्वकाल में देवों ने जिसकी स्तुति की तथा देवों के स्वामी इन्द्र ने बहुत दिनों तक जिसकी सेवा की वह कल्याण की साधक

ईश्वरी हमारी विपत्तियों को नष्ट कर कल्याण को प्राप्त कराये ॥८१॥ उद्धत दैत्यों से सताये हुए

सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै ॥ ७४ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७५ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ७६ ॥ इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या । भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो-नमः ॥ ७७ ॥ चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद् व्याप्य स्थिता जगत् । नमस्तस्यै ॥ ७८ ॥ नमस्तस्यै ॥ ७९ ॥ नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ८० ॥ स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण

हम सभी देवता जिस ईशा (देवी) को इस समय नमस्कार करते हैं तथा जो भक्ति से युक्त विनम्र पुरुषों द्वारा स्मरण की जाने पर तत्काल ही सम्पूर्ण विपत्तियों को दूर कर देती है वह

हमारे संकट दूर करे ॥८२॥ ऋषि कहते हैं ॥८३॥ हे राजन् ! इस तरह देवों से स्तुति करने पर पार्वती गङ्गा के जल में स्नान करने के लिये आईं ॥८४॥ और देवताओं से पूछा — आप

दिनेषु सेविता । करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥ ८१ ॥ या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितैरस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते । या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ८२ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ८३ ॥ एवं स्तवादियुक्तानां देवानां तत्र । पार्वती स्नातु-मभ्याययौ तोये जाह्नव्या नृपनन्दन* ॥ ८४ ॥ साब्रवीत्तान्

लोग किस की स्तुति कर रहे हो ? तब उसी समय पार्वती के शून्य शरीर से प्रकट होकर शिवा देवी बोली ॥८५॥ युद्ध में शुम्भ तथा निशुम्भ से तिरस्कृत तथा पराजित होने से सब देवों ने

मेरी स्तुति की है ॥८६॥ पार्वती के शरीर कोश से अम्बिका का प्रादुर्भाव हुआ था इस लिये वह सब लोकों में 'कौशिकी' नाम से पुकारी जाती है ॥८७॥ उसके प्रकट होने पर पार्वती

सुरान् सुभ्रूर्भवद्भिः स्तूयतेऽत्र का । शरीरकोशतश्चास्याः समुद्भूताब्रवीच्छिवा ॥ ८५ ॥ स्तोत्रमेतत् क्रियते शुम्भदैत्यनिराकृतैः । देवैः समस्तैः समरे निशुम्भेन पराजितैः ॥ ८६ ॥ शरीरकोशाद्यत्तस्याः पार्वत्या निःसृताम्बिका । कौशिकीति समस्तेषु ततो लोकेषु गीयते ॥ ८७ ॥ तस्यां विनिर्गतायां तु कृष्णाभूत्सापि पार्वती । कालिकेति समाख्याता

देवी का शरीर काले रंग का हो गया तभी से कालिका नाम से प्रसिद्ध हुई और हिमालय पर रहने लगी ॥८८॥ तदनन्तर शुम्भ और निशुम्भ के चण्डमुण्ड ने सुन्दर रूप से युक्त अम्बिका देवी

को देखा ॥८६॥ उन्होंने शुम्भ से जाकर कहा 'महाराज' कोई अत्यन्त सुन्दर स्त्री हिमालय को प्रकाशमान कर रही है ॥९०॥ किसी ने कहीं भी ऐसा उत्तम रूप नहीं देखा है । असुरेश्वर !

हिमाचलकृताश्रया ॥ ८८ ॥ ततोऽम्बिकां परं रूपं बिभ्राणां सुमनोहरम् । ददर्श चण्डो मुण्डश्च भृत्यौ शुम्भ-निशुम्भयोः ॥ ८९ ॥ ताभ्यां शुम्भाय चाख्याता अतीव सुमनोहरा । काप्यास्ते स्त्री महाराज भासयन्ती हिमाचलम् । ॥ ९० ॥ नैव तादृक् क्वचिद्रूपं दृष्टं केनचिदुत्तमम् । ज्ञायतां

'वह कौन है' यह जान कर उसे ग्रहण करो ॥९१॥ वह अत्यन्त कोमलाङ्गी, स्त्री रत्न हैं । अपनी श्री अङ्गों की प्रभा से सब दिशाओं में प्रकाश फैला रही है । हे दैत्येन्द्र ! अभी वह वहां है आप उसको देखिये ॥९२॥ जो रत्न, मणि, हाथी, घोड़े आदि त्रिलोकी में उत्तम हैं वे सब आप के

यहाँ हैं ॥६३॥ हाथियों में रत्नभूत ऐरावत हाथी, पारिजात का वृक्ष तथा उच्चैः श्रवा नामक घोड़ा यह सब आप ने इन्द्र से छीन लिये हैं॥६४॥ हंसयुक्त तथा रत्न जड़ित ब्रह्मा का अद्भुतविमान भी

काप्यसौ देवी गृह्यतां चासुरेश्वर ॥ ११ ॥ स्त्रीरत्नमतिचार्वङ्गी द्योतयन्ती दिशस्त्विषा । सा तु तिष्ठति दैत्येन्द्र तां भवान्द्रष्टुमर्हति ॥ १२ ॥ यानि रत्नानि मणयो गजाश्वादीनि वै प्रभो । त्रैलोक्ये तु समस्तानि साम्प्रतं भान्ति ते गृहे ॥ १३ ॥ ऐरावतः समानीतो गजरत्नं पुरन्दरात् । पारिजाततरुश्चायं तथैवोच्चैः श्रवा हयः ॥ १४ ॥ विमानं हंससंयुक्तमेतत्तिष्ठति

लाकर अपने आपने गृह में रखा है ॥६५॥ कुबेर से महापद्म नामक निधि लाये, समुद्र ने कमल की सुन्दर फूलों की माला आपको दी ॥६६॥ सुवर्ण के समान चमकता हुआ वरुण का

है। फिर यह कल्याण रूपी स्त्री रत्न आप क्यों नहीं ग्रहण करते ॥१००॥ ऋषि बोले ॥१०१॥ शुम्भ ने चण्ड मुण्ड के ऐसे वचन सुन कर महासुर सुग्रीव को दूत रूप से भेजा और कहा

शुम्भस्याब्धिजाताश्ज समस्ता रत्नजातयः । वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ॥ ९९ ॥ एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते । स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥ १०० ॥ ऋषिरुवाच ॥ १०१ ॥ निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्डमुण्डयोः । प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ॥ १०२ ॥ इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम ।

॥१०२॥ मेरी आज्ञा है इस प्रकार ऐसे कहना और वहाँ जाकर जैसे वह प्रीति पूर्वक आ सके वैसे तू ने प्रयत्न करना ॥१०३॥ जहाँ अत्यन्त रमणीय पर्वत स्थान पर वह देवी थी वहाँ जाकर

है। फिर यह कल्याण रूपी स्त्री रत्न आप क्यों नहीं ग्रहण करते ॥१००॥ ऋषि बोले ॥१०१॥ शुम्भ ने चण्ड मुण्ड के ऐसे वचन सुन कर महासुर सुग्रीव को दूत रूप से भेजा और कहा

शुम्भस्याब्धिजाताश्च समस्ता रत्नजातयः। वह्निरपि ददौ तुभ्यमग्निशौचे च वाससी ॥ ९९ ॥ एवं दैत्येन्द्र रत्नानि समस्तान्याहृतानि ते। स्त्रीरत्नमेषा कल्याणी त्वया कस्मान्न गृह्यते ॥ १०० ॥ ऋषिरुवाच ॥ १०१ ॥ निशम्येति वचः शुम्भः स तदा चण्डमुण्डयोः। प्रेषयामास सुग्रीवं दूतं देव्या महासुरम् ॥ १०२ ॥ इति चेति च वक्तव्या सा गत्वा वचनान्मम।

॥१०२॥ मेरी आज्ञा है इस प्रकार ऐसे कहना और वहाँ जाकर जैसे वह प्रीति पूर्वक आ सके वैसे तू ने प्रयत्न करना ॥१०३॥ जहाँ अत्यन्त रमणीय पर्वत स्थान पर वह देवी थी वहाँ जाकर

उससे नम्र और मधुर वाणी से बोला ॥१०४॥ दूत बोला ॥१०५॥ तीनों लोकों के स्वामी दैत्येश्वर शुम्भ ने मुझ दूत को आप के पास भेजा है ॥१०६॥ सब देवों में जिस की आज्ञा

यथा चाभ्येति सम्प्रीत्या तथा काय त्वया लघु ॥ १०३ ॥
स तत्र गत्वा यत्रास्ते शैलोद्देशेऽतिशोभने । सा देवी तां
ततः प्राह श्लक्ष्णं मधुरया गिरा ॥ १०४ ॥ दूत उवाच ॥ १०५ ॥
देवि दैत्येश्वरः शुम्भस्त्रैलोक्ये परमेश्वरः । दूतोऽहं प्रेषित-
स्तेन त्वत्सकाशमिहागतः ॥ १०६ ॥ अव्याहताज्ञः सर्वासु
यः सदा देवयोनिषु । निर्जिताखिलदैत्यारिः स यदाह

का उल्लंघन कभी नहीं होता, जिस ने सब दैत्यों के शत्रुओं को जीत लिया है उसने जो कहा है वह आप सुनो ॥१०७॥ सम्पूर्ण त्रिलोकी मेरे अधिकार में है, देव हमारे अधीन हैं, यज्ञ

के सारे भागों को अलग अलग हम खाते हैं ॥१०८॥ तीनों लोकों में जितने श्रेष्ठ रत्न हैं वह हमारे अधिकार में हैं तथा इन्द्र का वाहन ऐरावत हाथी को छीन लाये हैं ॥१०६॥

शृणुष्व तत् ॥ १०७ ॥ मम त्रैलोक्यमखिलं मम देवा वशानुगाः । यज्ञभागानहं सर्वानुपश्नामि पृथक् पृथक् ॥ १०८ ॥ त्रैलोक्ये वररत्नानि मम वश्यान्यशेषतः । तथैव गजरत्नं च हृत्वा देवेन्द्रवाहनम् ॥ १०९ ॥ क्षीरोदमथनोद्भूतमश्वरत्नं ममामरैः । उच्चैः श्रवससंज्ञं तत्प्रणिपत्य समर्पितम् ॥ ११० ॥ यानि चान्यानि देवेषु गन्धर्वेषूरगेषु च । रत्नभूतानि भूतानि-

समुद्र मंथन से प्राप्त उच्चैःश्रवा नामक अश्व रत्न देवों ने सप्रणाम समर्पित किया ॥११०॥ हे सुन्दरी ! इनके अतिरिक्त अन्य जितने रत्न देवों, गंधर्वों तथा नागों के पास थे वे सब हमारे पास

आ गए हैं ॥१११॥ हे देवी ! हम तुम्हें संसार की स्त्रियों में रत्न मानते हैं अतः तुम भी हमारे पास आ जाओ; रत्नों का उपभोग करने वाले हम भी हैं॥११२॥ मुझे व मेरे छोटे भाई

तानि मय्येव शोभने ॥ १११ ॥ स्त्रीरत्नभूतां त्वां देवि लोके मन्यामहे वयम् । सा त्वमस्मानुपागच्छ यतो रत्नभुजो वयम् ॥ ११२ ॥ मां वा ममानुजं वापि निशुम्भमुरु विक्रमम् । भज त्वं चञ्चलापाङ्गि रत्नभूतासि वै यतः ॥ ११३ ॥ परमैश्वर्यमतुलं प्राप्स्यसे मत्परिग्रहात् । एतद् बुद्ध्या समालोच्य

महापराक्रमी निशुम्भ को प्राप्त कर आनन्द करो क्योंकि हे चँचल कटाक्ष वाली तुम रत्न रूप हो ॥११३॥ हमें स्वीकार करने से परम ऐश्वर्य प्राप्त करोगी अपनी बुद्धि से विचार कर हमारे पास आ जाओ ॥११४॥ ऋषि बोले ॥११५॥ दूत के यों कहने पर दुर्गा भगवती, भद्रा देवी

जिसने सारा संसार धारण कर रखा है, अन्तःकरण में हँसती हुई गम्भीरता से बोली ।।११६।।
देवी बोली ।।११७।। हे दूत ! तूने सत्य कहा, इस में कुछ भी मिथ्या नहीं है शुम्भ निशुम्भ

मत्परिग्रहतां व्रज ॥ ११४ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ११५ ॥ इत्युक्ता सा तदा देवी गम्भीरान्तःस्मिता जगौ । दुर्गा भगवती भद्रा ययेदं धार्यते जगत्* ॥ ११६ ॥ देव्युवाच ॥ ११७ ॥ सत्यमुक्तं त्वया नात्र मिथ्या किञ्चित्त्वयोदितम् । त्रैलोक्याधिपतिः शुम्भो निशुम्भश्चापि तादृशः ॥ ११८ ॥ किं त्वत्र यत्प्रतिज्ञातं मिथ्या तत्क्रियते कथम् । श्रूयतामल्पबुद्धित्वात्प्रतिज्ञा

निस्सन्देह तीनों लोकों के स्वामी हैं ।।११८।। किन्तु इस विषय में मैंने जो पहले प्रतिज्ञा कर ली है उसे मिथ्या कैसे करूँ ? अल्प बुद्धि के कारण मैंने पहले जो प्रतिज्ञा की थी उस को

* इस श्लोक को पढ़ कर हवन में वर्चे की आहुति दें।

सुन ॥११९॥ जो मुझ पर युद्ध में विजय प्राप्त कर मेरे अभिमान को तोड़े अथवा मेरे सदृश बलवान् हो वह मेरा पति होगा ॥१२०॥ इसलिये शुम्भ वा निशुम्भ में से कोई एक महासुर आ

या कृता पुरा ॥ ११९ ॥ यो मां जयति संग्रामे यो मे दर्पं व्यपोहति । यो मे प्रतिबलो लोके स मे भर्ता भविष्यति ॥ १२० ॥ तदागच्छतु शुम्भोऽत्र निशुम्भो वा महासुरः । मां जित्वा किं चिरेणात्र पाणिं गृह्णातु मे लघु ॥ १२१ ॥ दूत उवाच ॥ १२२ ॥ अवलिप्तासि मैवं त्वं देवि ब्रूहि ममाग्रतः । त्रैलोक्ये कः पुमांस्तिष्ठेदग्रे शुम्भनिशुम्भयोः

जाये और मुझे जीत कर तत्काल मेरा पाणिग्रहण करले, इस में देर क्या है ॥१२१॥ दूत बोला ॥१२२॥ हे देवि ! अभिमान से मेरे सामने ऐसा मत कहो, त्रिलोकी में से शुम्भ और निशुम्भ

के सामने कौन ठहर सकता है ॥१२३॥ उनके अतिरिक्त दूसरे दैत्यों के सामने भी सारे देव युद्ध में नहीं ठहर सकते। तो फिर तू अकेली स्त्री कैसे ठहर सकती है ॥१२४॥ इन्द्र आदि

॥ १२३ ॥ अन्येषामपि दैत्यानां सर्वे देवा न वै युधि । तिष्ठन्ति सम्मुखे देवि किं पुनः स्त्री त्वमेकिका ॥ १२४ ॥ इन्द्राद्याः सकला देवास्तस्थुर्येषां न संयुगे। शुम्भादीनां कथं तेषां स्त्री प्रयास्यासि संमुखम् ॥ १२५ ॥ सा त्वं गच्छ मयैवोक्ता पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः । केशाकर्षणनिर्धूतगौरवा मा गमिष्यसि ॥ १२६ ॥ देव्युवाच ॥ १२७ ॥ एवमेतद्बली शुम्भो निशुम्भ-

सारे देवता जिन शुम्भ आदिकों के सामने नहीं ठहर सके उनके सामने आप कैसे जाओगी ॥१२५॥ इसलिये मेरे कहने से तुम शुम्भ निशुम्भ के पास चलो अथवा केश पकड़ कर खींचते हुए

(अपमानितहोकर) तुम्हें जाना पड़ेगा ॥१२६॥ देवी बोली ॥१२७॥ ठीक है शुम्भ निशुम्भ ऐसे ही बलवान और वीर्यवान् हैं परन्तु क्या करूँ बिना विचारे मैं पहिले प्रतिज्ञा कर चुकी

श्चातिवीर्यवान् । किं करोमि प्रतिज्ञा मे यदनालोचिता पुरा ॥ १२८ ॥ स त्वं गच्छमयोक्तं ते यदेतत्सर्वमादृतः । तदाचक्ष्वा-सुरेन्द्राय स च युक्तं करोतु तत् ॥ ॐ ॥ १२९ ॥

इति श्री मार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्या दूतसंवादो नाम पञ्चमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ उवाच १ । त्रिपान्मंत्राः ६६ । श्लो० ५४ । एवम् १२९ । एवमादितः ३८८

हूं ॥१२८॥ इस लिये तुम जाओ और मेरा सब कथन आदर पूर्वक दैत्यराज से कह दो इस पर वह जो उचित समझे करें ॥१२९॥

# अथ षष्ठोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ नागाधीश्वरविष्टरां फणिफणोत्तंसोरुरत्नावलीं भास्वद्-देहलतां दिवाकरनिभां नेत्रत्रयोद्भासिताम् । मालाकुम्भकपा-लनीरजकरां चन्द्रार्धचूडां परां सर्वज्ञेश्वरभैरवाङ्कनिलयां पद्मावतीं चिन्तये ॥ ६ ॥

जो नागराज के आसन पर विराजमान हैं और जिन की देह नागों के फणों में सुशोभित होने वाली मणियों की माला से उद्भासित है। सूर्य के समान जिन का तेज है, तीन नेत्र जिन की शोभा बढ़ा रहे हैं। जिन के हाथों में माला, कुम्भ, कपाल और कमल है तथा जिन

के मस्तक में अर्द्ध चन्द्र का मुकुट सुशोभित है और जो सर्व ईश्वर भैरव के अङ्क में निवास करने वाली परमोत्कृष्ट पद्मावती देवी है उन का मैं ध्यान करताहूँ ।

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ इत्याकर्ण्य वचो देव्याः स दूतोऽमर्षपूरितः । समाचष्ट समागम्य दैत्यराजाय विस्तरात् ॥ २ ॥ तस्य दूतस्य तद्वाक्यमाकर्ण्यासुरराट् ततः । सक्रोधः प्राह

ऋषि बोले ॥१॥ देवी के शब्द सुन दूत क्रोध से भर लौट गया और दैत्यराजको सब समाचार विस्तार पूर्वक सुना दिया ॥२॥ दूत के वचनों को सुनकर दैत्यराज क्रोध के आवेश में सेनापति धूम्रलोचन से बोले ॥३॥ हे धूम्रलोचन तू शीघ्र सेना सहित जा और उस दुष्टा को शक्ति से बाल खींचते हुए ले आ ॥४॥ उसकी रक्षा करने के लिए यदि कोई दूसरा देव, गन्धर्व या यक्ष आए तो उसे भी अवश्य मार डालना ॥५॥ ऋषि बोले ॥६॥ वह दैत्य धूम्र-

लोचन शुम्भ की आज्ञा पाकर असुरों की साठ हजार सेना के साथ तुरन्त चल दिया ॥७॥ वहाँ पहुंच और हिमाचल पर स्थित उस देवी को देख उच्च स्वर से बोला कि शुम्भ निशुम्भ के

दैत्यानामधिपं धूम्रलोचनम् ॥ ३ ॥ हे धूम्रलोचनाशु त्वं स्वसैन्यपरिवारितः । तामानय बलाद् दुष्टां केशाकर्षण-विह्वलाम् ॥ ४ ॥ तत्परित्राणदः कश्चिद्यदि वोत्तिष्ठतेऽपरः । स हन्तव्योऽमरो वापि यक्षो गन्धर्व एव वा ॥ ५ ॥ ऋषि-रुवाच ॥ ६ ॥ तेनाज्ञप्तस्ततः शीघ्रं स दैत्यो धूम्रलोचनः । वृतः षष्ट्या सहस्राणामसुराणां द्रुतं ययौ ॥ ७ ॥ स दृष्ट्वा

पास चलो ॥८॥ यदि इस समय प्रसन्नता पूर्वक आप मेरे स्वामी के पास नहीं चलेगीं तो मैं बलपूर्वक केश से खींचते हुए ले चलूंगा ॥९॥ देवी बोली ॥१०॥ तुम दैत्यराज के भेजे हु

आये हो, तुम स्वयं भी बलवान् हो और तुम्हारे साथ विशाल सेना भी है इस लिए यदि मुझे बल पूर्वक ले चलोगे तो मैं क्या कर सकती हूं ॥११॥ ऋषि बोले ॥१२॥ देवी के ऐसा कहने पर

तां ततो देवीं तुहिनाचलसंस्थिताम् । जगादोच्चैः प्रयाहीति मूलं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ८ ॥ न चेत्प्रीत्याद्य भवती मद्भर्तारमुपैष्यति । ततो बलान्नयाम्येष केशाकर्षणविह्वलाम् ॥ ९ ॥ देव्युवाच ॥ १० ॥ दैत्येश्वरेण प्रहितो बलवान् बलसंवृतः । बलान्नयसि मामेवं ततः किं ते करोम्यहम् ॥ ११ ॥ ऋषिरुवाच ॥ १२ ॥ *इत्युक्तः सोऽभ्यधावत्तामसुरो धूम्रलोचनः ।

धूम्र लोचन देवी पर झपटा तब देवी ने हुंकार से भस्म कर दिया ॥१३॥ इस पर असुरों की

---

* हवन में इस श्लोक के साथ सुरमां की आहुति दें।

महा सेना क्रोधित हो और अम्बिका ने एक दूसरे पर तीच्ण बाणों, शक्ति तथा फरसों की वर्षा आरम्भ की ॥१४॥ ऐसा देख देवी का सिंह क्रुद्ध हो तीव्र नाद करके गर्दन के बाल हिलाता

हुङ्कारेणैव तं भस्म सा चकाराम्बिका ततः ॥ १३ ॥ अथ क्रुद्धं महासैन्यमसुराणां तथाम्बिका । ववर्ष सायकैस्तीक्ष्णैस्तथा शक्तिपरश्वधैः ॥ १४ ॥ *ततो धुतसटः कोपात्कृत्वा नादं सुभैरवम् । पपातासुरसेनायां सिंहो देव्याः स्ववाहनः ॥ १५ ॥ कांश्चित् करप्रहारेण दैत्यानास्येन चापरान् । आक्रम्य चाधरेणान्यान् स जघान महासुरान् ॥ १६ ॥

हुआ असुर सेना पर टूट पड़ा ॥१५॥ अनेकों असुरों को पंजे के वार से, कितनों को मुँह से,

---

* हवन में इस श्लोक के साथ गुग्गल की आहुति दें ।

अन्यों को झपट से मार दिया ॥१६॥ सिंह ने कितनों के पेट नखों से फाड़े तथा थप्पड़ मार कर कितनों के सिर धड़ से पृथक् कर दिए ॥१७॥ केसरी ने अनेक असुरों की भुजा व सिर

केषाञ्चित्पाटयामास नखैः कोष्ठानि केसरी । तथा तलप्रहारेण शिरांसि कृतवान् पृथक् ॥ १७ ॥ विच्छिन्नबाहुशिरसः कृतास्तेन तथापरे । पपौ च रुधिरं कोष्ठादन्येषां धुतकेसरः ॥ १८ ॥ क्षणेन तद्बलं सर्वं क्षयं नीतं महात्मना । तेन केसरिणा देव्या वाहनेनातिकोपिना ॥ १९ ॥ श्रुत्वा तमसुरं देव्या निहतं धूम्रलोचनम् । बलं च क्षयितं कृत्स्नं

अलग २ कर डाले और बहुत के पेट चीर कर रक्त पान किया ॥१८॥ अत्यन्त क्रोध में भर कर देवी के वाहन केसरी ने सारी असुर सेना को क्षण भर में नष्ट कर दिया ॥१९॥ धूम्रलोचन

तथा सारी सेना को देवी तथा उस के सिंह से नष्ट हुआ सुन ॥२०॥ दैत्यराज शुम्भ के क्रोध से अधर ओष्ठ फड़कने लगे उसने चण्ड मुण्ड महादैत्यों को आज्ञा दी ॥२१॥ हे चण्ड !

देवीकेसरिणा ततः ॥ २० ॥ चुकोप दैत्याधिपतिः शुम्भः प्रस्फुरिताधरः । आज्ञापयामास च तौ चण्डमुण्डौ महासुरौ ॥ २१ ॥ हे चण्ड हे मुण्ड बलैर्बहुभिः परिवारितौ । तत्र गच्छत गत्वा च सा समानीयतां लघु ॥ २२ ॥ केशेष्वाकृष्य बद्ध्वा वा यदि वः संशयो युधि । तदाशेषायुधैः सर्वैरसुरैर्विनिहन्यताम् ॥ २३ ॥ तस्यां हतायां दुष्टायां

और हे मुण्ड ! तुम दोनों बहुत बड़ी सेना ले कर उस देवि को शीघ्र अपने हाथ लाओ ॥२२॥ बाल पकड़ कर, अथवा बाँधकर, और यदि इस में तुम्हें सन्देह हो तो सब लोग

सम्पूर्ण अस्त्रों के प्रयोग से उस को मार डालो ॥२३॥ उस दुष्टा और सिंह को मार कर शीघ्र ही लौटना परन्तु हो सके तो दोनों को पकड़ कर लाना ॥२४॥

सिंहे च विनिपातिते । शीघ्रमागम्यतां बद्ध्वा गृहीत्वा तामथाम्बिकाम् ॥ ॐ ॥ २४ ॥

इति श्री मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भनिशुम्भसेनानी धूम्रलोचनवधो नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ उवाच ४ । श्लो० २० । एवम् २४ । एवमादितः ॥ ४१२ ॥

# अथ सप्तमोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ ध्यायेयं रत्नपीठे शुककलपठितं शृणवतीं श्यामलाङ्गीं
न्यस्तैकाङ्घ्रिसरोजे शशिशकलधरां वल्लकीं वादयन्तीम् ।
कह्लाराबद्धमालां नियमितविलसच्चोलिकां रक्तवस्त्रां मातङ्गीं
शंखपात्रां मधुरमधुमदां चित्रकोद्भासिभालाम् ॥

जो देवी रत्नमय सिंहासन पर बैठकर पढ़ते हुए तोते का मधुर शब्द सुन रही है। जिन के शरीर का वर्ण श्याम है। जिन के मस्तक पर अर्ध चन्द्र है, और जिन का एक पैर कमल पर रखा हुआ है। जो कह्लार पुष्पों की माला पहने हुए है और जो वीणा बजा रही है।

जिन के अङ्ग में कसी हुई चोली शोभा पा रही है। जो लाल रङ्ग की साड़ी पहने हाथ में शङ्खमय पात्र लिए हुए है। जिन के शरीर पर मधु का हल्का २ नशा जान पड़ता है और जिन के माथे में बिंदी शोभा दे रही है उस मातङ्गी देवी का मैं ध्यान करता हूं।

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ आज्ञप्तास्ते ततो दैत्याश्चण्डमुण्ड-पुरोगमाः । चतुरङ्गबलोपेता ययुरभ्युद्यतायुधाः ॥ २ ॥ ददृशुस्ते ततो देवीमीषद्धासां व्यवस्थिताम् । सिंहस्योपरि

ऋषि बोले ॥१॥ शुम्भ की आज्ञा पाकर चण्ड मुण्ड चतुरंगिनी सेना के साथ अस्त्र शस्त्र से सुसज्जित हो कर चल दिये ॥२॥ उन्होंने हिमालय के स्वर्णमय शिखर पर सिंह के ऊपर बैठी मन्द मुसकराहट युक्त देवी को देखा ॥३॥ वे देवी को देखकर ढाल तलवार ले तथा पास पहुंच उसे पकड़ने के लिये प्रयत्न करने लगे ॥४॥ इस पर देवी को शत्रुओं के प्रति अत्यन्त

क्रोध उत्पन्न हुआ यहां तक कि उस कोप से देवी का मुख काला हो गया ।।५।। ललाट में भौवें टेढ़ी हो गईं और वहां से तुरन्त विकराल मुखी काली देवी तलवार हाथ में लिए प्रगट

शैलेन्द्रशृङ्गे महति काञ्चने ॥ ३ ॥ ते दृष्ट्वा तां समादातु-मुद्यमं चक्रुरुद्यताः । आकृष्टचापासिधरास्तथान्ये तत्स-मीपगाः ॥ ४ ॥ ततः कोपं चकारोच्चैरम्बिका तानरीन्प्रति । कोपेन चास्या वदनं मषीवर्णमभूत्तदा ॥ ५ ॥ भ्रुकुटीकुटिला त्तस्या ललाटफलकाद्द्रुतम् । काली करालवदना विनि-ष्क्रान्तासिपाशिनी ॥ ६ ॥ विचित्रखट्वाङ्गधरा नरमाला-

हुई ।।६।। जो विचित्र खट्वांग धारण किए, नर मुण्डों की माला से विभूषित चीते का चर्म ओढ़े मांस रहित शरीर वाली अत्यन्त डरावनी थी। जो मुख को बहुत फैलाए और जीभ को

बाहिर निकाले हुए थी उन के रक्त वर्ण नेत्र अन्दर को गड़े हुए थे सब दिशाओं को मुख किये उच्च नाद कर रही थी ॥८॥ वह देवी महासुरों को मारती हुई वेग से झपटी और असुरों की

विभूषणा । द्वीपिचर्मपरीधाना शुष्कमांसाति भैरवा ॥ ७ ॥
अतिविस्तार वदना जिह्वाललनभीषणा । निमग्ना रक्तनयना
नादापूरितदिङ्मुखा ॥ ८ ॥ सा वेगेनाभिपतिता घातयन्ती
महासुरान् । सैन्ये तत्र सुरारीणामभक्षयत तद्बलम् ॥ ९ ॥
पार्ष्णिग्राहाङ्कुशग्राहियोधघण्टासमन्वितान् । समादायै-
कहस्तेन मुखे चिक्षेपवारणान् ॥ १० ॥ तथैव योधं तुरगै रथं

सेना को भक्षण करने लगी ॥९॥ वे पार्श्व रक्षकों, अंकुशधारी महावतों, योद्धाओं और घण्टा सहित हाथियों को एक ही हाथ से पकड़ कर मुख में डाल लेती थी ॥१०॥ इसी प्रकार

घोड़े, रथ और सारथी सब को एक साथ मुँह में डाल कर दांतों से चबाने लगी ॥११॥ किसी को बालों से और किसी को गर्दन से पकड़ती, किसी को पैरों से कुचलती और किसी को छाती

सारथिना सह । निक्षिप्य वक्त्रे दशनैश्चर्वयन्त्यतिभैरवम् ॥ ११ ॥ एकं जग्राह केशेषु ग्रीवायामथचापरम् । पादेनाक्रम्य चैवान्यमुरसान्यमपोथयत् ॥ १२ ॥ तैर्मुक्तानि च शस्त्राणि महास्त्राणि तथासुरैः । मुखेन जग्राह रुषा दशनैर्मथितान्यपि ॥ १३ ॥ बलिनां तद्बलं सर्वमसुराणां दुरात्मनाम् । ममर्दाभक्षयच्चान्यानन्यांश्चाताडयत्तथा ॥ १४ ॥

से धक्का देती ॥१२॥ असुरों के द्वारा छोड़े हुए अस्त्र शस्त्र मुख में पकड़ दांतों से मसल डाला ॥१३॥ दुष्ट तथा बली असुरों का वह सारा बल मर्दन करके, भक्षण करके, ताड़ना करके ॥१४॥

तलवार से मारकर, खवट्वाङ्ग से ताड़ना करके और दांतों से नोच कर नष्ट कर डाला ॥१५॥ असुरों की वह सारी सेना क्षण भर में मार डाली, यह देख चण्ड अत्यन्त क्रोधित हुआ और

असिना निहताः केचित्केचित्खट्वाङ्गताडिताः । जग्मुर्विनाशमसुरा दन्ताग्राभिहतास्तथा ॥ १५ ॥ क्षणेन तद्बलं सर्वमसुराणां निपातितम् । दृष्ट्वा चण्डोऽभिदुद्राव तां कालीमतिभीषणाम् ॥ १६ ॥ शरवर्षैर्महाभीमैर्भीमाक्षीं तां महासुरः । छादयामास चक्रैश्च मुण्डः क्षिप्तैः सहस्रशः ॥ १७ ॥ तानि चक्राण्यनेकानि विशमानानि तन्मुखम् ।

काली की ओर झपटा ॥१६॥ महादैत्य मुण्ड ने भयङ्कर बाणों की वर्षा से तथा हजारों चक्रों से उन भयानक नेत्रों वाली देवी को आच्छादित कर दिया ॥१७॥ वे अनेकों चक्र देवी के

मुख में प्रविष्ट होते हुए जान पड़े जैसे सूर्य के बहुतेरे मण्डल बादलों में प्रवेश कर रहेहों ॥१८॥ तब देवी हँसी और बडे क्रोध में भर भैरव नाद करके, भयानक मुख किये, दांत निकाले

बभुर्यथार्कबिम्बानि सुबहूनि घनोदरम् ॥ १८ ॥ ततो जहासातिरुषा भीमं भैरवनादिनी । काली करालवक्त्रान्तर्दुर्दर्श दशनोज्ज्वला ॥ १९ ॥ उत्थाय च महासिंहं देवी चण्डमधावत । गृहीत्वा चास्य केशेषु शिरस्तेनासिनाच्छिनत् ॥ २० ॥ अथ मुण्डोऽभ्यधावत्तां दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । तमप्यपातयद्भूमौ सा खड्गाभिहतं रुषा ॥ २१ ॥ हतशेषं ततः-

॥१९॥ तथा तलवार उठा 'हं' का उच्चारण करती हुई चण्ड पर दौड़ी और उस के केश पकड कर शिर तलवार से काट डाला ॥२०॥ चण्ड को मरा देख मुण्ड उसकी ओर दौड़ा देवी ने

*हवन में इस श्लोक के साथ सलारा की आहुति दें।

उसे भी भूमि पर गिरा दिया और तलवार से मार दिया ॥२१॥ जो सेना मरने से बची, महापराक्रमी चण्ड और मुण्ड को मरा देखकर भयभीत हो चारों ओर भाग गई ॥२२॥

सैन्यं दृष्ट्वा चण्डं निपातितम् । मुण्डं च सुमहावीर्यं दिशो भेजे भयातुरम् ॥ २२ ॥ शिरश्चण्डस्य काली च गृहीत्वा मुण्डमेव च । प्राह प्रचण्डाट्टहासमिश्रमभ्येत्य चण्डिकाम् ॥ २३ ॥ मया तवात्रोपहृतौ चण्डमुण्डौ महापशू । युद्धयज्ञे स्वयं शुम्भं निशुम्भं च हनिष्यसि ॥ २४ ॥ ऋषिरुवाच ॥ २५ ॥ तावानीतौ ततो दृष्ट्वा चण्डमुण्डौ महासुरौ ।

तदनन्तर काली ने चण्ड और मुण्ड का शिर लेकर चण्डिका के पास जाकर प्रचण्ड हँसी के साथ कहा ॥२३॥ मैंने चण्ड और मुण्ड नामक दो पशुओं को तुम्हें भेंट किया है, अब युद्ध

रूपी यज्ञ में शुम्भ और निशुम्भ का स्वयं ही वध करना ॥२४॥ ऋषि बोले ॥२५॥ उन दोनों महासुर चण्ड और मुण्ड को देखकर चण्डी ने कल्याणमयी कालीं देवी से कहा ॥२६॥ देवि !

उवाच कालीं कल्याणीं ललितं चण्डिका वचः ॥ २६ ॥
यस्माच्चण्डं च मुण्डं च गृहीत्वा त्वमुपागता । चामुण्डेति
ततो लोके ख्याता देवी भविष्यसि ॥ ॐ ॥ २७ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये चण्डमुण्डवधोनाम सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥

उवाच २ । श्लो० २५ । एवम् २७ । एवमादितः ४३१ ॥

तुम चण्ड और मुण्ड का शिर लेकर मेरे पास आई हो इसलिये संसार में चामुण्डा नाम से तुम्हारी प्रसिद्धि होगी ॥इति॥

# अष्टमोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ अरुणां करुणातरङ्गिताक्षीं धृतपाशांकुशबाणचापहस्ताम् । अणिमादिभिरावृतां मयूखैरहमित्येव विभावये भवानीम् ॥ ८ ॥

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ चण्डे च निहते दैत्ये मुण्डे च विनि-

जिनके शरीर का रंग लाल है, जिनके नेत्रों में करुणा लहरा रही है तथा हाथों में पाश, अङ्कुश, बाण और धनुष है मैं उस अणिमा आदि सिद्धिमयी किरणों से आवृत भवानी का ध्यान करता हूँ।

ऋषि बोले ॥१॥ चण्ड-मुण्ड असुरों तथा बहुत भारी सेना के मारे जाने पर दैत्यराज ॥२॥ प्रतापी शुम्भ ने क्रोध के वशीभूत हो सारी सेना को युद्ध के लिए कूच करने की आज्ञा दी

पातिते । बहुलेषु च सैन्येषु क्षयितेष्वसुरेश्वरः ॥ २ ॥ ततः कोपपराधीनचेताः शुम्भः प्रतापवान् । उद्योगं सर्वसैन्यानां दैत्यानामादिदेश ह ॥ ३ ॥ अद्य सर्वबलैर्दैत्याः षडशीति-रुदायुधाः कम्बूनां चतुरशीतिर्निर्यान्तु स्वबलैर्वृताः ॥ ४ ॥ कोटिवीर्याणि पञ्चाशदसुराणां कुलानि वै । शतं कुलानि धौम्राणां निर्गच्छन्तु ममाज्ञया ॥ ५ ॥ कालका दौर्हृदा

॥३॥ उदायुद्ध नामक छयासी असुर तथा कम्बू नामी चौरासी दैत्य अपने समस्त सैन्य बल से आज ही प्रस्थान करें ॥४॥ पचास कोटी वीर्य कुल के तथा सौ धौम्र कुल के असुर मेरी आज्ञा

से जाये ॥५॥ कालक, दौहृद और मौर्य तथा कालकेय असुर मेरी आज्ञा से शीघ्र सज-
कर युद्ध के लिये जायें।।६॥ कठोर शासन करने वाला असुर राजा शुम्भ यह आज्ञा देकर सहस्रों

मौर्याः कालकेयास्तथासुराः । युद्धाय सज्जा निर्यान्तु आज्ञया
त्वरिता मम ॥ ६ ॥ इत्याज्ञाप्यासुरपतिः शुम्भो भैरवशासनः ।
निर्जगाम महासैन्यसहस्रै र्बहुभिर्वृतः ॥ ७ ॥ आयान्तं चण्डि-
का दृष्ट्वा तत्सैन्यमतिभीषणम् । ज्यास्वनैः पूरयामास
धरणीगगनान्तरम् ॥ ८ ॥ ततः सिंहो महानादमतीव कृतवान्
नृप । घंटास्वनेन तन्नादमम्बिका चोपबृंहयत् ॥ ९ ॥

बड़ी बड़ी सेना के साथ युद्ध के लिए प्रस्थित हुआ ॥७॥ उस की अत्यन्त भयंकर सेना आती
देख देवी ने अपने धनुष की टंकार से सारे आकाश को गुन्जा दिया ॥८॥ हे राजन् ! देवी

के सिंह ने भी बहुत तीव्र गर्जना की, फिर अम्बिका ने घण्टा बजा कर उस शब्द को और भी बढ़ा दिया ॥९॥ धनुष कीं टंकार, सिंह की दहाड़ और घण्टे के शब्द से सारी दिशायें गूँज उठीं।

धनुर्ज्यासिंहघंटानां नादापूरितदिङ्मुखा । निनादैर्भीषणैः काली जिग्ये विस्तारिताननना ॥ १० ॥ तं निनादमुपश्रुत्य दैत्य-सैन्यैश्चतुर्दिशम् । देवी सिंहस्था काली सरोषैः परिवारिताः ॥ ११ ॥ एतस्मिन्नन्तरे भूप विनाशाय सुरद्विषाम् । भवायामरसिंहानामतिवीर्यबलान्विताः ॥ १२ ॥ ब्रह्मेशगुहविष्णूनां तथेन्द्रस्य च शक्तयः । शरीरेभ्यो विनिष्क्रम्य तद्रूपैश्चण्डिकां

उसी समय काली भी मुख फैलाकर भयंकर नाद करने लगी ॥१०॥ इस गर्जना को सुन दैत्य सेना ने क्रोध से भर चारों ओर से देवी, सिंह तथा काली को घेर लिया ॥११॥ हे राजन् !

इसी समय असुरों के नाश के लिए तथा देवों के कल्याण के लिए ब्रह्मा, शिव, कार्तिकेय, विष्णु तथा इन्द्र आदि देवों की शक्तियाँ जो अत्यन्त बल से सम्पन्न थीं उनके शरीरों से निकल कर उन्हीं के रूप में देवी के पास पहुंची ॥१२-१३॥ जिस देवता का जैसा रूप, आभूषण और वाहन था उसी के समान ही उनकी शक्तियाँ असुरों से युद्ध करने आईं ॥१४॥ ब्रह्मा की

ययुः ॥ १३ ॥ यस्य देवस्य यद्रूपं यथाभूषणवाहनम् । तद्वदेव हि तच्छक्तिरसुरान् योद्धुमाययौ ॥ १४ ॥ हंसयुक्तविमानाग्रे साक्ष सूत्रकमण्डलुः । आयाता ब्रह्मणः शक्तिर्ब्रह्माणी साभिधीयते

शक्ति ब्रह्माणी, हँस युक्त विमान में बैठ कर रुद्राक्ष की माला तथा हाथ में कमंडलु लिये आई ॥१५॥ महादेव की शक्ति माहेश्वरी बैल पर सवार हो त्रिशूल और वर धारण किये सर्पों का कंकण पहन तथा चन्द्ररेखा से सुशोभित हो आई ॥१६॥ कार्तिकेय जी की शक्ति रूपा जगदम्बिका मोर पर सवार हो हाथ में शक्ति लिए दैत्यों से युद्ध करने के लिए आई ॥१७॥

इसी प्रकार भगवान् विष्णु की शक्ति वैष्णवी गरुड पर चढ़ शंख, चक्र, गदा, शार्ङ्ग, खड्ग हाथ में लिये आई ॥१८॥ महा वाराह का रूप धारण करने वाली विष्णु भगवान् की शक्ति

॥ १५ ॥ माहेश्वरी वृषारूढ़ा त्रिशूलवरधारिणी । महाहिवलया प्राप्ता चन्द्ररेखा विभूणा ॥ १६ ॥ कौमारी शक्तिहस्ता च मयूर-वरवाहना । योद्धुमभ्याययौ दैत्यानम्बिका गुहरूपिणी ॥ १७ ॥ तथैव वैष्णवी शक्तिर्गरुडोपरिसंस्थिता । शंखचक्रगदाशार्ङ्ग खड्गहस्ताभ्युपाययौ ॥ १८ ॥ यज्ञवाराहमतुलं रूपं या बिभ्रतो हरेः । शक्तिः साप्याययौ तत्र वाराहीं बिभ्रतीं तनुम् ॥ ११ ॥

वाराही भी आई ॥१९॥ नारसिंहीशक्ति भी नृसिंह के तुल्य शरीर धारण करके आई जिसकी गर्दन के बालों के झटके से तारे भी हिलने लगते थे ॥२०॥ इन्द्र की शक्ति इन्द्राणी हजार

आँखों से शोभित गजराज पर सवार हो वज्र हाथ में ले इन्द्र के समान रूप धारण कर आई ॥२१॥ तदनन्तर उन देव शक्तियों के मध्य खड़े होकर भगवान् शिवजी ने चण्डिका से

नारसिंही नृसिंहस्य बिभ्रती सदृशं वपुः । प्राप्ता तत्र सटाक्षेपक्षिप्तनक्षत्रसंहतिः ॥ २० ॥ वज्रहस्ता तथैवैन्द्री गजराजोपरिस्थिता । प्राप्ता सहस्रनयना यथा शक्रस्तथैव सा ॥ २१ ॥ ततः परिवृतस्ताभिरीशानो देवशक्तिभिः । हन्यन्तामसुराः शीघ्रं मम प्रीत्याह चण्डिकाम् ॥ २२ ॥ ततो देवीशरीरात्तु विनिष्क्रान्तातिभीषणा । चण्डिका शक्तिरत्युग्रा शिवाशत-

कहा कि मेरी प्रसन्नता इसी में है कि असुरों को शीघ्र मारो ॥२२॥ तब चण्डिका देवी के शरीर से अत्यन्त भयानक तथा उग्र सौ शिवाओं के समान नाद करने वाली शक्ति प्रकट हुई

॥२३॥ उसे अपराजिता देवी ने धूम्र वर्ण जटाओं से युक्त भगवान् शिव से कहा कि आप दूत बन कर शुम्भ निशुम्भ के पास जायें ॥२४॥ अत्यन्त अभिमानी शुम्भ निशुम्भ तथा दूसरे

निनादिनी ॥ २३ ॥ सा चाह धूम्र जटिलमीशानमपराजिता । दूत त्वं गच्छ भगवन् पार्श्वं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ २४ ॥ ब्रूहि शुम्भं निशुम्भं च दानवावतिगर्वितौ । ये चान्ये दानवास्तत्र युद्धाय समुपस्थिताः ॥ २५ ॥ त्रैलोक्यमिन्द्रो लभतां देवाः सन्तुः हविर्भुज । यूयं प्रयात पातालं यदि जीवितुमिच्छथ ॥ २६ ॥ बलावलेपादथ चेद्भवंतो युद्धकांक्षिणः । तदागच्छत

असुरों को जो युद्ध के लिए उपस्थित हैं कहो ॥२५॥ यदि तुम जीवित रहना चाहते हो तो पाताल को चले जाओ इन्द्र को त्रिलोकी का राज्य मिल जाये और देव यज्ञ भाग भोगें ॥२६॥

यदि आप बल के अभिमान से लड़ना चाहते हैं तो जाओ जिससे हमारी योगिनियां म्हारे माँस से तृप्त हों ॥२७॥ क्योंकि शिवजी को देवी ने स्वयं दूत कार्य के लिए नियुक्त किया

तृप्यन्तु मच्छिवाः पिशितेन वः ॥ २७ ॥ यतो नियुक्तो दौत्येन तया देव्या शिवःस्वयम् । शिवदूतीति लोकेऽस्मिंस्ततः सा ख्यातिमागता ॥ २८ ॥ तेऽपि श्रुत्वा वचो देव्याः शर्वा ख्यातं महासुराः । अमर्षापूरिता जग्मुर्यत्र कात्यायनी स्थिता ॥ २९ ॥ ततः प्रथममेवाग्रे शरशक्त्यृष्टिवृष्टिभिः । ववर्षुरुद्धतामर्षास्तां देवीममरारयः ॥ ३० ॥ सा च तान् प्रहि-

इसलिये वह संसार में शिवदूती नाम से प्रसिद्ध हुई ॥२८॥ शिव द्वारा देवी के वचन सुन सारे महासुर अभिमान के साथ कात्यायनी की ओर बढ़े ॥२९॥ क्रोध में भरे उद्धत असुरों ने पहिले

ही से बाण, शक्ति और ऋष्टि की देवी पर वर्षा कर दी ॥३०॥ देवो ने उनके चलाये बाण, शूल, शक्ति और पाश आदि अस्त्रों को अपने बाणों से काट कर गिरा दिया ॥३१॥ फिर काली

तान् बाणाञ्छूलशक्तिपरश्वधान् । चिच्छेद लीलयाध्मात धनुर्मुक्तैर्महेषुभिः ॥ ३१ ॥ तस्याग्रतस्तथा काली शूलपात—विदारितान् । खट्वाङ्ग पोथितांश्चारीन् कुर्वती व्यचरत्तदा ॥ ३२ ॥ कमण्डलु जलाक्षेपहतवीर्यान् हतौजसः । ब्रह्माणी चाकरोच्छ-त्रून् येन येन स्म धावति ॥ ३३ ॥ माहेश्वरी त्रिशूलेन तथा चक्रेण वैष्णवी । दैत्याञ्जघान कौमारी तथा शक्त्याति—

उनके आगे होकर असुरों को त्रिशूल से चीरती और खट्वाङ्ग से कुचलती हुई विचरने लगी ॥३२॥ ब्रह्माणी इधर उधर घूमकर कमण्डलु के जल से शत्रुओं को शक्तिहीन निस्तेज करने लगी

॥३३॥ माहेश्वरी ने त्रिशूल से, वैष्णवी ने चक्र से, कौमारी ने शक्ति से दैत्यों का हनन किया॥३४॥ इन्द्राणी के वज्र प्रहार से सैंकड़ों दैत्य दानव रक्त गिराते हुए पृथ्वी पर जा पड़े ॥३५॥ वाराही

कोपना ॥ ३४ ॥ ऐन्द्री कुलिशपातेन शतशो दैत्यदानवाः । पेतुर्विदारिता पृथ्व्यां रुधिरौघप्रवर्षिणः ॥ ३५ ॥ तुण्डप्रहार—विध्वस्ता दंष्ट्राग्रक्षतवक्षसः । वाराहमूर्त्या न्यपतंश्चक्रेण च विदारिताः ॥ ३६ ॥ नखैर्विदारितांश्चान्यान् भक्षयन्ती महासुरान् । नारसिंही चचाराजौ नादापूर्णदिगम्बरा ॥ ३७ ॥ चण्डाट्टहासैरसुराः शिवदूत्यभिदूषिताः । पेतुः पृथिव्यां पतितांस्तांश्च-

शक्ति ने कितनों को अपनी थोथड़ी के वार से व्यथित, दन्ताग्र से छाती घायल कराकर तथा चक्र के प्रहार से अनेकों असुरों को नष्ट किया ॥३६॥ नारसिंही ने भी नखों से चीरकर अनेक असुरों

को भक्षण कर अपने नाद से आकाश व दिशाओं को गुंजाती हुई युद्धभूमि में घूमने लगी ॥३७॥
शिवदूती के तीव्र अट्टहासों के द्वारा असुर भूमि पर गिरने लगे और वह उनको खाने लगी ॥३८॥

खादाथ सा तदा ॥ ३८ ॥ इति मातृगणं क्रुद्धं मर्दयन्तं महासुरान् । दृष्ट्वाभ्युपायैर्विविधैर्नेशुर्देवारिसैनिकाः ॥ ३९ ॥ पलायनपरान् दृष्ट्वा दैत्यान् मातृगणार्दितान् । योद्धुमभ्याययौ क्रुद्धो रक्तबीजो महासुरः ॥ ४० ॥ रक्तबिंदुर्यदा भूमौ पतत्यस्य शरीरतः । समुत्पतति मेदिन्यां तत्प्रमाणास्तदासुरः ॥ ४१ ॥ युयुधे स गदापाणिरिन्द्रशक्त्या महासुरः । ततश्चै-

इस प्रकार जगन्मातायें क्रुद्ध हो असुरों को मसलने लगीं, असुर सैनिक अनेक रीति से असुरों को नष्ट होते हुए देख भाग खड़े हुए॥३९॥ तथा मातृगणों से पीड़ित दैत्यों को भागते देख रक्त

बीज नामक महा असुर क्रोध में भरकर युद्ध करने आया ॥४०॥ जितनी रक्त की बून्दें उसके शरीर से भूमि पर गिरतीं उतने ही असुर उत्पन्न हो जाते थे ॥४१॥ वह महासुर गदा हाथ में लेकर

न्द्री स्ववज्रेण रक्तबीजमताडयत् ॥ ४२ ॥ कुलिशेनाहतस्याशु बहु सुस्राव शोणितम् । समुत्तस्थुस्ततो योधास्तद्रूपास्तत्पराक्रमाः ॥ ४३ ॥ यावन्तः पतितास्तस्य शरीराद्रक्तबिन्दवः । तावन्तः पुरुषा जातास्तद्वीर्यबलविक्रमाः ॥ ४४ ॥ ते चापि युयुधुस्तत्र पुरुषा रक्तसम्भवाः । समं मातृभिरत्युग्रशस्त्रपातातिभीषणम् ॥ ४५ ॥ पुनश्च वज्रपातेन क्षतमस्य शिरो यदा ।

इन्द्र शक्ति से लड़ने लगा, इस पर ऐन्द्री ने अपने वज्र से उसपर प्रहार किया ॥४२॥ वज्र की चोट से उसके शरीर से बहुत रुधिर गिरा जिससे उतनी ही संख्या में रक्त बीज के पराक्रम के तुल्य

ही योधा उत्पन्न हो गए ॥४३॥ उसके शरीर से जितनीं रक्तबिन्दु भूमि पर पड़ीं उतने ही पुरुष उसके बल, वीर्य और पराक्रम के समान उत्पन्न हो गए ॥४४॥ रक्त से उत्पन्न होने वाले

ववाह रक्तं पुरुषास्ततो जाताः सहस्रशः ॥ ४६ ॥ वैष्णावी समरे चैनं चक्रेणाभिजघान ह । गदया ताडयामास ऐन्द्री तमसुरेश्वरम् ॥ ४७ ॥ वैष्णावीचक्रभिन्नस्य रुधिरस्रावसम्भवैः । सहस्रशो जगद्व्याप्तं तत्प्रमाणैर्महासुरः ॥ ४८ ॥ शक्त्या जघान कौमारी वाराही च तथासिना । माहेश्वरी त्रिशूलेन रक्त-बीजं महासुरम् ॥ ४९ ॥ स चापि गदया दैत्यः सर्वा एवाहनत

पुरुष भी भयंकर अस्त्र-शस्त्रों की वर्षा करते हुए देवियों के साथ भीषण युद्ध करने लगे ॥४५॥ फिर वज्र के प्रहार से इन्द्राणी ने जब उसका शिर फोड़ दिया तो फिर बहुत रक्त बहा और

उससे हज़ारों पुरुष उत्पन्न हो गए ।।४६।। वैष्णवी ने चक्र से उसपर प्रहार किया और ऐन्द्री ने उस असुर राज पर गदा से चोट मारी ।।४७।। वैष्णवी के चक्र की चोट से जो रक्त बहा

पृथक् । मातृः कोपसमाविष्टो रक्तबीजो महासुरः ॥ ५० ॥ तस्याहतस्य बहुधा शक्तिशूलादिभिर्भुवि । पपात यो वै रक्तौघस्तेनासञ्छतशोऽसुराः ॥ ५१ ॥ तैश्चासुर सृक्सम्भूतैर-सुरैः सकलं जगत् । व्याप्तमासीत्ततो देवा भयमाजग्मु-रुत्तमम् ॥ ५२ ॥ तान्विषण्णान् सुरान् दृष्ट्वा चण्डिका प्राह सत्वरा । उवाच कालीं चामुंडे विस्तीर्णं वदनं कुरु ॥ ५३ ॥

उससे हजारों महासुर उत्पन्न होकर संसार में भर गए ।।४८।। कौमारी ने शक्ति से तथा वाराही ने तलवार से और माहेश्वरी ने त्रिशूल से प्रहार किया ।।४९।। क्रोध में भर रक्त बीज

ने भी गदा से सब देवियों पर वार किया ॥५०॥ रक्त बीज के शरीर में शक्ति, शूल आदि शस्त्रों के लगने से जो रक्त निकला उससे सैंकड़ों असुर उत्पन्न हो गये ॥५१॥ असुर के

मच्छस्त्रपातसम्भूतान् रक्तबिन्दून्महासुरान् । रक्तबिन्दोः प्रतीच्छ त्वं वक्त्रेणानेन वेगिना ॥ ५४ ॥ *भक्षयन्ती चर रणे तदुत्पन्नान्महासुरान् । एवमेष क्षयं दैत्यः क्षीणरक्तो गमिष्यति ॥ ५५ ॥ भक्ष्यमाणास्त्वया चोग्रा न चोत्पत्स्यन्ति चापरे । इत्युक्त्वा तां ततो देवी शूलेनाभिजघान तम् ॥ ५६ ॥ †मुखेन काली जगृहे रक्तबीजस्य शोणितम् । ततोऽसावा

रक्त से उत्पन्न हुए असुरों से सारा जगत व्याप्त हो गया जिससे देवता बहुत डरे ॥५२॥ देवताओं को खिन्न देखकर चण्डिका काली से बोली, हे चामुण्डे ! अपने मुख को फैलाओ

---

* † हवन में इस श्लोक के साथ लाल चन्दन की आहुति दें।

॥५३॥ मेरे अस्त्रों के लगने से निकले रक्त बिन्दुओं तथा रक्त बिन्दुओं से उत्पन्न असुरों को शीघ्र ही अपने मुख में ॥५४॥ भक्षण करती हुई युद्ध में विचर, इस प्रकार यह असुर

जघानाथ गदया तत्र चण्डिकाम् ॥ ५७ ॥ न चास्या वेदनां चक्रे गदापातोऽल्पिकामपि । तस्याहतस्य देहात्तु बहु सुस्राव शोणितम् ॥ ५८ ॥ यतस्ततस्तद्वक्त्रेण चामुण्डा सम्प्रतीच्छति । मुखे समुद्गता येऽस्या रक्तपातान्महा-सुराः ॥ ५९ ॥ तांश्चखादाथ चामुण्डा पपौ तस्य च शोणितम् । देवी शूलेन वज्रेण बाणैरसिभिर्ऋष्टिभिः ॥ ६० ॥ जघान

रक्त से क्षीण हो जाएगा ॥५५॥ तुझ से भक्षण किये जाने पर और उत्पन्न न होंगे, यह कह कर चण्डिका ने रक्त बीज को शूल मारना आरम्भ किया ॥५६॥ शूल के लगने से जो

रक्त गिरा उसे काली ने अपने मुख में लिया, असुर ने भी अपनी गदा से चण्डिका पर प्रहार किया ॥५७॥ असुर की गदा के प्रहार से देवी के शरीर में कुछ भी पीड़ा नहीं हुई,

रक्तबीजं तं चामुण्डापीतशोणितम् । स पपात महीपृष्ठे शस्त्रसङ्घसमाहतः ॥ ६१ ॥ नीरक्तश्च महीपाल रक्तबीजो महासुरः । ततस्ते हर्षमतुलमवापुस्त्रिदशा नृप ॥ ६२ ॥ तेषां मातृगणो जातो ननर्तासृङ्मदोद्धतः ॥ ॐ ॥ ६३ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये

परन्तु असुर के शरीर से बहुत रक्त निकला ॥५८॥ असुर के शरीर से जो रक्त निकला चामुण्डा चारों ओर से उस को अपने मुख में लेती और जो असुर उससे उपजता ॥५९॥ उन्हें वहीं भक्षण कर लेती इस तरह चामुण्डा ने उसका रक्त पी लिया और चण्डिका ने

शूल, वज्र, बाण, तलवार और ऋष्टि आदि से ॥६०॥ रक्त बीज को जिसका चामुण्डा ने रक्तपान कर लिया था मारा वह शस्त्रों की चोट से भूमि पर जा पड़ा ॥६१॥ हे राजन् ! महासुर रक्तबीज इस प्रकार रक्त रहित हो गया और देवता अपार हर्ष को प्राप्त हुए ॥६२॥ जगन्मातायें असुरों का रक्त पी-पी कर उद्धत हो नृत्य करने लगीं ॥६३॥ इति ॥

रक्तबीजवधो नामाष्टमो ऽध्यायः ॥८॥ उवाच १ । अर्ध० श्लोक १ । श्लो० ६१ । एवम् ६३ । एवमादितः ५०२ ॥

# अथ नवमोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ बन्धूककांचननिभं रुचिराक्षमालां पाशांकुशौ च वरदां निजबाहुदण्डैः । बिभ्राणमिन्दुशकलाभरणां त्रिनेत्रमर्धाम्बिकेशमनिशं वपुराश्रयामि ॥१॥

जिसका वर्ण बन्धूक- पुष्प और सुवर्ण के समान रक्त-पीत मिश्रित है। जो अपनी भुजाओं में सुन्दर अक्षमाला, पाश, अङ्कुश और वरद मुद्रा धारण करता है, अर्धचन्द्र जिसका आभूषण है और जो तीन नेत्रों से सुशोभित है उस अर्धनारीश्वर श्रीविग्रह की मैं निरन्तर शरण लेता हूँ।

ॐ राजोवाच ॥ १ ॥ विचित्रमिदमाख्यातं भगवन् भवता मम ।

राजा सुरथ ने कहा ॥१॥ कि यह आपने रक्तबीज के वध से सम्बन्धित देवी चरित्र का अद्भुत माहात्म्य मुझे बतलाया है ॥२॥ रक्तबीज के मारे जाने का शुम्भ

देव्याश्चरितमाहात्म्यं रक्तबीजवधाश्रितम् ॥ २ ॥ भूयश्चेच्छाम्यहं श्रोतुं रक्तबीजे निपातिते । चकार शुम्भो यत्कर्म निशुम्भश्चातिकोपनः ॥ ३ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ४ ॥ चकार कोपमतुलं रक्तबीजे निपातिते । शुम्भासुरो निशुम्भश्च हतेष्वन्येषु चाहवे ॥ ५ ॥ हन्यमानं महासैन्यं विलोक्यामर्षमुद्वहन् । अभ्यधावन्निशुम्भोऽथ मुख्ययासुरसेनया ॥ ६ ॥ तस्याग्रतस्तथा पृष्ठे पार्श्वयोश्च महा-

और निशुम्भ ने जो काम किया मैं अब उसको सुनना चाहता हूँ ॥३॥ ऋषि बोले ॥४॥ रक्तबीज तथा अन्य असुरों के मरने पर शुम्भ और निशुम्भ अत्यन्त क्रोधित हुए ॥५॥

अपनी महान सेना का वध देख क्रोध में भर निशुम्भ असुरों की मुख्य सेना को साथ ले लड़ने चला ॥६॥ निशुम्भ के आगे पीछे दायें बायें बड़े २ असुर क्रोध में भरे ओष्ठ चबाते

सुराः । संदष्टौष्ठपुटाः क्रुद्धाः हन्तुं देवीमुपाययुः ॥ ७ ॥ आजगाम महावीर्यः शुम्भोऽपि स्वबलैर्वृतः । निहन्तुं चण्डिकां कोपात्कृत्वा युद्धं तु मातृभिः ॥ ८ ॥ ततो युद्धमतीवासीद्देव्या शुम्भनिशुम्भयोः । शरवर्षमतीवोग्रं मेघयोरिव वर्षतोः ॥ ९ ॥ चिच्छेद ताञ्छरांस्ताभ्यां चण्डिका स्वशरोत्करैः । ताडयामास चांगेषु शस्त्रौघैरसुरेश्वरौ ॥ १० ॥ निशुम्भो निशितं खड्गं चर्म

हुए देवी को मारने चले ॥७॥ अत्यन्त शक्तिशाली शुम्भ भी अपनी सेना को साथ ले सब देवियों से युद्ध करके चण्डिका को मारने के लिये आ पहुंचा ॥८॥ शुम्भ और निशुम्भ का

देवी के साथ भारी युद्ध हुआ, वर्षा के समान दोनों ओर से बाणों की वर्षा हुई ॥६॥ असुरों के बाणों को चण्डिका ने अपने बाणों से काट डाला और दोनों असुरों पर बाणों से वार

चादाय सुप्रभम् । अताडयन्मूर्ध्नि सिंहं देव्या वाहनमुत्तमम् ॥ ११ ॥ ताडिते वाहने देवी क्षुरप्रेणासिमुत्तमम् । निशुम्भस्याशु चिच्छेद चर्म चाप्यष्टचन्द्रकम् ॥ १२ ॥ छिन्ने चर्मणि खड्गे च शक्तिं चिक्षेप सोऽसुरः । तामप्यस्य द्विधाचक्रे चक्रेणाभिमुखागताम् ॥ १३ ॥ कोपाध्मातो निशुम्भोऽथ शूलं जग्राह दानवः । आयातं मुष्टिपातेन देवी तच्चाप्यचूर्णयत् ॥ १४ ॥ आविध्याथ

किया ॥१०॥ निशुम्भ ने अपनी तीक्ष्ण तलवार तथा चमकती हुई ढाल लेकर देवी के श्रेष्ठ वाहन सिंह के शिर पर प्रहार किया ॥११॥ सिंह पर हुए प्रहार को देख देवी ने क्षुरप्र नामक

अस्त्र से असुर की तलवार तथा अष्ट चन्द्रक ढाल काट डाली ॥१२॥ खड्ग और ढाल के कट जाने पर असुर ने शक्ति से वार किया जिसको देवी ने चक्र के द्वारा सम्मुख आते ही काट

गदां सोऽपि चिक्षेप चण्डिकां प्रति । सापि देव्या त्रिशूलेन भिन्ना भस्मत्वमागता ॥ १५ ॥ ततःपरशुहस्तं तमायान्तं दैत्य-पुङ्गवम् । आहत्य देवी बाणौघैरपातयत भूतले ॥ १६ ॥ तस्मि-न्निपतिते भूमौ निशुम्भे भीमविक्रमे । भ्रातर्यतीव संक्रुद्धः प्रययौ हन्तुमम्बिकाम् ॥ १७ ॥ स रथस्थस्तथात्युच्चैर्गृहीतपरमा-युधैः । भुजैरष्टाभिरतुलैर्व्याप्याशेषं बभौ नभः ॥ १८ ॥ तमा-

डाला ॥१३॥ निशुम्भ ने क्रोध से भर शूल से प्रहार किया, देवी ने घूंसा मारकर उसको चूर-चूर कर दिया ॥१४॥ तब असुर ने चण्डिका पर गदा चलाई, देवी ने त्रिशूल के द्वारा उसको

तोड़कर भस्म कर दिया ॥१५॥ तब परशू हाथ में ले निशुम्भ देवी पर झपटा, उस को आते देख देवी ने उसको बाणों की वर्षा कर भूमि पर गिरा दिया ॥१६॥ बहुत पराक्रम वाले

यान्तं समालोक्य देवी शंखमवादयत् । ज्याशब्दं चापि धनुषश्चकारातीव दुःसहम् ॥ १९ ॥ पूरयामास ककुभो निजघराट्या स्वनेन च । समस्तदैत्यसैन्यानां तेजोवधविधायिना ॥ २० ॥ ततः सिंहो महानादैस्त्याजितेभमहामदैः । पूरयामास गगनं गां तथैव दिशो दश ॥ २१ ॥ ततः काली समुत्पत्य गगनं क्ष्मामताडयत् । कराभ्यां तन्निनादेन प्राक्स्वनास्ते तिरोहिताः

निशुम्भ के भूमि में गिरने पर शुम्भ अत्यन्त क्रुद्ध होकर अम्बिका को मारने चला ॥१७॥ वे रथ में बैठ बड़े २ अस्त्रशस्त्र को धारण कर अपनी बलवती आठों भुजाओं को सारे

आकाश में फैलाकर युद्ध करने को चला ॥१८॥ उसको आते देख देवी ने शंख बजाया, और अत्यन्त असह्य धनुष की प्रत्यंचा की टंकार की ॥१९॥ दैत्यों की सेना का तेज नष्ट करने वाले

॥ २२ ॥ अट्टाट्टहासमशिवं शिवदूती चकार ह । तैः शब्दैरसुरा-
स्त्रेसुःशुम्भः कोपं परं ययौ ॥ २३ ॥ दुरात्मंस्तिष्ठ तिष्ठेति व्या-
जहाराम्बिका यदा । तदा जयेत्यभिहितं देवैराकाशसंस्थितैः
॥ २४ ॥ शुम्भेनागत्य या शक्तिर्मुक्ता ज्वालातिभीषणा । आया-
न्ती वह्निकूटाभा सा निरस्ता महोल्कया ॥ २५ ॥ सिंहनादेन
शुम्भस्य व्याप्तं लोकत्रयान्तरम् । निर्घातनिःस्वनो घोरो

घण्टे के शब्द ने सारी दिशाओं को भर दिया ॥२०॥ इस के उपरान्त सिंह ने मस्त हाथियों के मद को दूर करने वाले अपने महानाद से आकाश, दिशाओं और उपदिशाओं को भर

दिया ॥२१॥ काली ने आकाश की ओर उछलकर दोनों हाथ पृथ्वी पर मारे जिस से इतना महान् शब्द उत्पन्न हुआ कि पहले शब्द उस में छिप गये ॥२२॥ शिवदूती ने भयङ्कर अट्ट-हास का शब्द किया इन शब्दों से असुरों की सेना डर गई जिससे शुम्भ बड़ा क्रोधित हुआ

जितवानवनीपते ॥ २६ ॥ शुम्भमुक्ताञ्छरान्देवी शुम्भस्त-त्प्रहिताञ्छरान् । चिच्छेद स्वशरैरुग्रैः शतशोऽथ सहस्रशः ॥ २७ ॥ ततः सा चण्डिका क्रुद्धा शूलेनाभिजघान तम् । स तदाभिहतो भूमौ मूर्च्छितो निपपात ह ॥ २८ ॥ ततो निशुम्भः

॥२३॥ जब अम्बिका ने शुम्भ से कहा कि, दुष्ट 'ठहर' तब आकाश से देवों ने जय का शब्द उच्चारण किया ॥२४॥ शुम्भ ने अग्नि के समान चमकती हुई भीषण शक्ति छोड़ी उसको आती देख देवी ने महोल्का द्वारा काट दिया ॥२५॥ शुम्भ ने सिंह के समान गरजना की जो तीनों लोक में

हो गई। हे ! राजन् उसी समय मारो मारो का इतना प्रबल शब्द हुआ कि जिसने पहले शब्द को दबा दिया ॥२६॥ शुम्भ के छोड़े हुए सैंकड़ों हज़ारों शस्त्रों को देवी ने तथा देवी के छोड़े

सम्प्राप्य चेतनामात्तकार्मुकः। आजघान शरैर्देवीं कालीं केसरिणं तथा ॥ २९ ॥ पुनश्च कृत्वा बाहूनामयुतं दनुजेश्वरः। चक्रायुधेन दितिजश्छादयामास चण्डिकाम् ॥ ३० ॥ ततो भगवती क्रुद्धा दुर्गा दुर्गार्तिनाशिनी। चिच्छेद तानि चक्राणि स्वशरैः सायकांश्च तान् ॥३१॥ ततो निशुम्भो वेगेन गदामादाय चण्डि-

हुओं को शुम्भ ने काट डाला ॥२७॥ तब चण्डिका ने क्रुद्ध होकर उस पर शूल का प्रहार किया उससे वह मूर्छित हो भूमि पर गिर पड़ा ॥२८॥ इतने में निशुम्भ सचेत हो गया और शस्त्र ग्रहण कर काली देवी और सिंह पर प्रहार किये ॥२९॥ फिर अपनी दस हज़ार भुजायें

बनाकर सब भुजाओं से चक्र चला देवी को ढाँप दिया ॥३०॥ इस पर विपत्तियों के नाश करने वाली दुर्गा ने क्रुद्ध होकर अपने बाणों से सब चक्रों को काट दिया ॥३१॥ तब निशुम्भ शीघ्र के साथ गदा लेकर दैत्य सेना से घिरा हुआ चण्डिका को मारने झपटा

काम् । अभ्यधावत वै हन्तुं दैत्यसेनासमावृतः ॥ ३२ ॥ तस्यापतत एवाशु गदां चिच्छेद चण्डिका । खड्गेन शितधारेण स च शूलं समाददे ॥ ३३ ॥ शूलहस्तं समायान्तं निशुम्भमम-

॥३२॥ आती हुई गदा को ही चण्डिका देवी ने अपनी पैनी खड्ग से काट दिया। इस पर असुर ने शूल उठाया ॥३३॥ देवों को कष्ट देने वाले निशुम्भ को शूल हाथ में लिए हुए आता देख चण्डिका ने फुरती से अपना शूल उसकी छाती में मारा ॥३४॥ शूल की चोट से छाती फटने पर अत्यन्त वीर्य और बल से युक्त दूसरा पुरुष चण्डिका से ठहर ऐसे कहता हुआ

निकल पड़ा ॥३५॥ उसके निकलते ही हँसते हुए खड्ग से देवी ने उसका शिर काट डाला और वह भूमि पर जा पड़ा ॥३६॥ इसके पश्चात् सिंह अपने दांतों से असुरों के शिर

र्दनम् । हृदि विव्याध शूलेन वेगाविद्धेन चण्डिका ॥ ३४ ॥
भिन्नस्य तस्य शूलेन हृदयान्निःसृतोऽपरः । महाबलो महा-
वीर्यस्तिष्ठेति पुरुषो वदन् ॥ ३५ ॥ तस्य निष्क्रामतो देवी प्रहस्य
स्वनवत्ततः । शिरश्चिच्छेद खड्गेन ततोऽसावपतद्भुवि ॥ ३६ ॥
ततःसिंहश्चखादोग्रं दंष्ट्राक्षुण्णशिरोधरान् । असुरांस्तांस्तथा
काली शिवदूती तथापरान् ॥ ३७ ॥ कौमारीशक्तिनिर्भिन्नाः

व होठों को चबाने लगा और दूसरी ओर काली व शिवदूती भी भक्षण करने लगी ॥३७॥ कौमारी की शक्ति ने अनेक असुरों को नष्ट कर दिया तथा ब्रह्माणी ने मन्त्र पढ़ जल के

द्वारा असुरों को मारा ॥३८॥ माहेश्वरी की त्रिशूल द्वारा बहुत असुर पृथ्वी पर जा पड़े उधर वाराही ने अपनी तुंड द्वारा चूर्ण कर भूमि पर गिरा दिया॥३९॥ वैष्णवी ने चक्र के द्वारा दानवों

केचिन्नेशुर्महासुराः । ब्रह्माणीमन्त्रपूतेन तोयेनान्ये निराकृताः ॥ ३८ ॥ माहेश्वरीत्रिशूलेन भिन्नाः पेतुस्तथापरे । वाराहीतुण्ड-घातेन केचिच्चूर्णीकृता भुवि ॥ ३९ ॥ खण्डं खण्डं च चक्रेण वैष्णव्या दानवाःकृताः । वज्रेण चैन्द्रीहस्ताग्रविमुक्तेन तथापरे ॥ ४० ॥ केचिद्विनेशुरसुराः केचिन्नष्टा महाहवात् । भक्षिताश्चा परे काली शिवदूती मृगाधिपैः ॐ ॥ ४१ ॥

के टुकड़े किए और एन्द्री ने वज्र से बहुतों को समाप्त किया॥४०॥ कितने ही असुर युद्ध

में मरे, कितने ही युद्ध के भय से मरे, कुछ काली, सिंह और शिवदूती ने भक्षण किये ॥४१॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये निशुम्भवधो नाम नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ उवाच २ । श्लो० ३९ । एवम् ४१ । एवमादितः ५४३ ॥



# अथ दशमोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ उत्तप्तहेमरुचिरां रविचन्द्रवह्निनेत्रां धनुश्शरयुतां-कुशपाशशूलम् । रम्यैर्भुजैश्च दधतीं शिवशक्तिरूपां कामेश्वरीं हृदि भजामि धृतेन्दुलेखाम् ॥ १० ॥

जो अपने सुन्दर हाथों में धनुष, अङ्कुश, पाश और शूल धारण किए हुए है और सूर्य, चन्द्रमा और अग्नि जिस के तीन नेत्र हैं। जिस ने मस्तक पर अर्द्ध चन्द्र धारण किया हुआ है उस शिवशक्ति भगवती कामेश्वरी का मैं हृदय में ध्यान करता हूं ॥१०॥

ऋषि बोले ॥१॥ राजन् ! प्राणों से प्रिय भाई निशुम्भ को सेना सहित मरा देखकर शुम्भ

ने कुपित होकर कहा॥२॥दुष्टदुर्गे ! तू बल के अभिमान में आकर झूठमूठ का घमंड दिखा दूसरों के बल का सहारा लेकर लड़ती है और अभिमान करती है ॥३॥ देवी बोली ॥४॥ ओ दुष्ट !

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ निशुम्भं निहतं दृष्ट्वा भ्रातरं प्राणसम्मितम् । हन्यमानं बलं चैव शुम्भः क्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥ २ ॥ बलावलेपाद्दुष्टे त्वं मा दुर्गे गर्वमावह । अन्यासां बलमाश्रित्य युद्ध्यसे याति मानिनी ॥ ३ ॥ देव्युवाच ॥ ४ ॥ एकैवाहं जगत्यत्र द्वितीया का ममापरा । पश्यैता दुष्ट मय्येव विशन्त्यो मद्विभूतयः ॥ ५ ॥ ततःसमस्तास्ता देव्यो ब्रह्माणीप्रमुखालयम् ।

मैं एक ही हूँ ! इस संसार में मेरे सिवा दूसरी कौन है। यह सब मेरी तो विभूतियाँ हैं, अतः मुझ में ही प्रवेश करती है ॥५॥ इस पर ब्रह्मणी से लेकर सभी देवियां उसके शरीर में लीन हो गईं और

अकेली अम्बिका रह गई ॥६॥ देवी बोली ॥७॥ अब तक मैं अपनी ऐश्वर्य-शक्ति से अनेक रूपों में खड़ी थी। उन रूपों को समेट कर इस समय मैं अकेली खड़ी हूँ अतः स्थिर हो जाओ ॥८॥

तस्या देव्यास्तनौ जग्मुरेकैवासीत्तदाम्बिका ॥ ६ ॥ देव्युवाच ॥ ७ ॥ अहं विभूत्या बहुभिरिह रूपैर्यदा स्थिता । तत्संहृतं मयैकैव तिष्ठाम्याजौ स्थिरो भव ॥ ८ ॥ ऋषिरुवाच ॥ ९ ॥ ततः प्रववृते युद्धं देव्याः शुम्भस्य चोभयोः । पश्यतां सर्वदेवानामसुराणां च दारुणम् ॥ १० ॥ शरवर्षैः शितैः शस्त्रैस्तथास्त्रैश्चैव दारुणैः । तयोर्युद्धमभूद्भूयः सर्वलोकभयं

ऋषि बोले ॥९॥ तदनन्तर देवी और शुम्भ का देवों और असुरों के सामने भयंकर युद्ध होने लगा ॥१०॥ बाणों तथा दूसरे अस्त्र शस्त्रों के द्वारा दोनों के बीच सारे संसार में भय उत्पन्न

करने वाला युद्ध हुआ ॥११॥ जो सैंकड़ों दिव्य अस्त्र अम्बिका ने चलाये शुम्भ ने अपने अस्त्रों से उन्हें काट दिया ॥१२॥ और जिन दिव्य अस्त्रों को असुरों ने छोड़ा परमेश्वरी ने अपनी लीला

करम् ॥ ११ ॥ दिव्यान्यस्त्राणि शतशो मुमुचे यान्यथाम्बिका । बभञ्ज तानि दैत्येन्द्रस्तत्प्रतीघातकर्तृभिः ॥ १२ ॥ मुक्तानि तेन चास्त्राणि दिव्यानि परमेश्वरी । बभञ्ज लीलयैवोग्रहुङ्कारोच्चारणादिभिः ॥ १३ ॥ ततः शरशतैर्देवीमाच्छादयत सोऽसुरः । सापि तत्कुपिता देवी धनुश्चिच्छेद चेषुभिः ॥ १४ ॥ छिन्ने धनुषि दैत्येन्द्रस्तथा शक्तिमथाददे । चिच्छेद देवि

से भयङ्कर हूंकार शब्द के उच्चारण आदि करके तोड़ डाला ॥१३॥ इस पर असुर ने सैंकड़ों बाण छोड़कर देवी को आच्छादित कर दिया। क्रोध में भरी हुई उस देवी ने भी बाण मार कर उसका

धनुष काट दिया ।।१४।। धनुष कट जाने पर शुम्भ ने शक्ति उठाई किन्तु देवी ने चक्र से उसके हाथ में स्थित शक्ति को भी काट दिया ।।१५।। तब दैत्यों का अधिपति शुम्भ चमकती हुई ढाल

चक्रेण तामप्यस्य करे स्थिताम् ॥ १५ ॥ ततः खड्गमुपादाय शतचन्द्रं च भानुमत् । अभ्यधावत्तदा देवीं दैत्यानामधिपेश्वरः ॥ १६ ॥ तस्यापतत एवाशु खड्गं चिच्छेद चण्डिका । धनुर्मुक्तैः शितैर्बाणैश्चर्म चार्ककरामलम् ॥ १७ ॥ हताश्वः स तदा दैत्यश्छिन्नधन्वा विसारथिः । जग्राह मुद्गरं घोरमम्बिकानिधनोद्यतः ॥ १८ ॥ चिच्छेदापततस्तस्य मुद्गरं निशितैः

तलवार लेकर देवी की ओर झपटा ।।१६।। चण्डिका ने उसके आते ही धनुष से बाण तोड़ा, उसकी ढाल और सूर्य के समान चमकती हुई तलवार को भी काट डाला ।।१७।। घोड़ों व सारथी के

मरने और धनुष के कटने पर शुम्भ मुद्गर लेकर अम्बिका को मारने को उद्यत हुआ ॥१८॥ इस प्रकार आते हुए असुर की मुद्गर को देवी ने अपने तीक्ष्ण बाणों से काट

शरैः। तथापि सोऽभ्यधावत्तां मुष्टिमुद्यम्य वेगवान् ॥ १९ ॥
स मुष्टिं पातयामास हृदये दैत्यपुङ्गवः। देव्यास्तं चापि सा
देवी तलेनोरस्यताडयत् ॥२०॥ तलप्रहाराभिहतो निपपात
महीतले। स दैत्यराजः सहसा पुनरेव तथोत्थितः ॥ २१ ॥ उत्पत्य
च प्रगृह्योच्चैर्देवीं गगनमास्थितः। तत्रापि सा निराधारा युयुधे
तेन चंडिका ॥ २२ ॥ नियुद्धं खे तदा दैत्यश्चण्डिका च परस्परम्।

दिया। इस पर वह वेग से घोंसा तान कर दौड़ा ॥१९॥ और हृदय पर जा मारा, देवी ने उसकी छाती पर भी थप्पड़ मारा ॥२०॥ थप्पड़ की चोट से व्यथित होकर वह दैत्यराज

भूमि पर जा पड़ा परन्तु तुरन्त उठ खड़ा हुआ ॥२१॥ और देवी को उठा आकाश की ओर उछल गया, चण्डिका ने आकाश में निराधार होते हुए भी उससे युद्ध किया ॥२२॥

चक्रतुः प्रथमं सिद्धमुनिविस्मयकारकम् ॥ २३ ॥ ततो नियुद्धं सुचिरं कृत्वा तेनाम्बिका सह। उत्पात्य भ्रामयामास चिक्षेप धरणीतले ॥ २४ ॥ स क्षिप्तो धरणीं प्राप्य मुष्टिमुद्यम्य वेगितः अभ्यधावत दुष्टात्मा चण्डिकानिधनेच्छया ॥ २५ ॥ तमायान्तं ततो देवी सर्वदैत्यजनेश्वरम्। जगत्यां पातयामास भित्त्वा शूलेन वक्षसि ॥ २६ ॥ स गतासुः पपातोर्व्यां देवीशूलाग्रविक्षतः।

आकाश में चण्डिका और शुम्भ ने आपस में, सिद्ध तथा मुनियों को चकित करने वाला युद्ध किया ऐसा युद्ध पहले न हुआ था ॥२३॥ अम्बिका ने असुर के साथ देर तक युद्ध

करके ऊपर को उठा घुमाकर भूतल पर फैंक दिया ॥२४॥ वह दुष्ट असुर फैंका हुआ भूमि पर गिर कर घूंसा तान वेग से चण्डिका को मारने की इच्छा से दौड़ा ॥२५॥ असुरराज

चालयन् सकलां पृथ्वीं साब्धिद्वीपां सपर्वताम् ॥ २७ ॥ ततः प्रसन्नमखिलं हते तस्मिन् दुरात्मनि । जगत्स्वास्थ्यमतीवाप निर्मलं चाभवन्नभः ॥ २८ ॥ उत्पातमेघाःसोल्का ये प्रागासंस्ते शमं ययुः । सरितो मार्गवाहिन्यस्तथासंस्तत्र पातिते ॥ २९ ॥ ततो देवगणाः सर्वे हर्षनिर्भरमानसाः । बभूवुर्निहते तस्मिन् गन्धर्वा ललितं जगुः ॥ ३० ॥ अवादयंस्तथैवान्ये ननृतुश्चाप्सरो-

को आता देख देवी ने शूल से उसकी छाती तोड़ भूमि में गिरा दिया ॥२६॥ देवी के शूल से घायल हो असुर प्राण छोड़ भूमि पर जा पड़ा उसके गिरने से पृथ्वी, समुद्र तथा पर्वत

आदि हिल गए ॥२७॥ उस दुष्ट असुर के मरने पर सारे संसार को प्रसन्नता हुई और आकाश निर्मल हो गया ॥२८॥ असुर के गिरने पर जो मेघ के तथा उल्कापात आदि उत्पात हुए वह सब शांत हो गए और नदियाँ मार्ग में बहने लगीं ॥२९॥ असुर के मरने पर सब देवी तथा गन्धर्वों को अत्यन्त प्रसन्नता हुई ॥३०॥ बाजे बजाये गए, अप्सरायें नाचने लगीं, शुद्ध वायु चली तथा सूर्यकी प्रभा अत्यन्त सुन्दर हो गई ॥३१॥ यज्ञ की अग्नियां फिर प्रज्वलित होनेलगीं और असुरके भयसे जो हाहाकार मचा हुआ था सब दिशाओंमे शांत हो गया॥३२॥

गणाः । ववुः पुण्यास्तथा वाताः सुप्रभोऽभूद्दिवाकरः ॥ ३१ ॥
जज्वलुश्चाग्नयः शान्ताः शान्तादिग्जनितस्वनाः ॐ ॥ ३२ ॥
इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये शुम्भवधो नाम दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ उवाच ४ । अर्ध १ । श्लो० २७ । एवम् ३२ । एवमादितः ॥ ५७५ ॥

# अथ एकादशोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

बालरविद्युतिमिन्दुकिरीटां तुङ्गकुचां नयनत्रययुक्ताम् ।
स्मेरमुखीं वरदांकुशपाशभीतिकरां प्रभजे भुवनेशीम् ॥ ११ ॥

जिसके हाथों में वरद, अङ्कुश, पाश और उभय मुद्रा शोभा पा रही है। जिसके मुख पर सदा मुसकान रहती है। जिस के स्तन उभरे हुए हैं और जिसके तीन नेत्र हैं, जिसके मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट है और जिसके अङ्गों की शोभा प्रभात काल के सूर्य के सदृश है। मैं उस भुवनेश्वरी देवी का ध्यान करता हूं ॥११॥

ऋषि बोले ॥१॥ देवी के द्वारा महासुर के मारे जाने पर इन्द्र और अग्नि के साथ सब देवता इष्ट फल प्राप्त होने से प्रसन्न मुख हो सब दिशाओं को प्रकाशित करते हुए कात्यायनी

की स्तुति करने लगे।।२।। हे शरणागतों के कष्ट निवारण करने वाली देवि ! प्रसन्न हो, सारे संसार की माता ! प्रसन्न हो, हे संसार की ईश्वरि ! प्रसन्न हो और संसार की रक्षा

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ देव्या हते तत्र महासुरेन्द्रे सेन्द्राः सुरा वह्निपुरोगमास्ताम् । कात्यायनीं तुष्टुवुरिष्टलाभाद्विकाशिव-क्त्राब्जविकाशिताशाः ॥ २ ॥ देवि प्रपन्नार्त्तिहरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य । प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥ ३ ॥ आधारभूता जगतस्त्वमेका महीस्वरूपेण यतः स्थितासि । अपां स्वरूपा स्थितया त्वयैतदाप्यायते

करो तुम चराचर की ईश्वरी हो ॥३॥ जगत की एक मात्र आधार तुम हो क्योंकि तुम ही पृथ्वी रूप धारण कर स्थित हो, तथा हे अनुपम शक्ति से युक्त देवि ! जल रूप हो कर तुम

ही सारे जगत को व्याप्त कर रही हो ॥४॥ हे देवि! तुम अनन्त वीर्यवाली, विष्णु की शक्ति तथा विश्व को उत्पन्न करने वाली सर्वोपरि माया हो, तुमने इस सारे संसार को मोह में

कृत्स्नमलंघ्यवीर्ये ॥ ४ ॥ त्वं वैष्णवी शक्तिरनन्तवीर्या विश्वस्य बीजं परमा सिमाया । संमोहितं देवि समस्तमेतत् त्वं वै प्रसन्ना भुवि मुक्तिहेतुः ॥ ५ ॥ विद्याः समस्तास्तव देवी भेदाः स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु । त्वयैकया पूरितमम्बयैतत का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः ॥ ६ ॥ सर्वभूता यदा देवी स्वर्गमुक्ति-

फँसाया हुआ है जब तुम प्रसन्न होती हो तब ही मुक्ति मिलती है ॥५॥ हे देवि सारी विद्यायें तथा संसार की सम्पूर्ण स्त्रियें तुम्हारे ही विभाग हैं, तुम से ही यह संसार पूर्ण है, हे अम्बे, तुम्हारी क्या स्तुति हो सकती है, तुम स्तुति से परे हो ॥६॥ हे देवि तुम सब में विद्यमान

हो स्वर्ग व मुक्ति के देने वाली हो, प्राणी किन शब्दों से तुम्हारी स्तुति करें ॥७॥ तुम बुद्धि रूप से सब प्राणियों के हृदय में निवास करती हो तथा स्वर्ग और मोक्ष के देने वाली

प्रदायिनी । त्वं स्तुता स्तुतये का वा भवन्तु परमोक्तयः ॥ ७ ॥
*सर्वस्य बुद्धिरूपेण जनस्य हृदि संस्थिते । स्वर्गापवर्गदे देवि नारायणि नमोऽस्तुते ॥ ८ ॥ कलाकाष्ठादिरूपेण परिणामप्रदा-यिनि । विश्वस्योपरतौ शक्ते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ९ ॥

नारायणी देवी हो, तुम्हें नमस्कार है ॥८॥ हे नारायणि ! विश्व का संहार करने के लिए तुम ही क्षण, मुहूर्त आदि का रूप होकर हर वस्तु में परिणाम (परिवर्तन) की ओर लेजाने वाली हो, तुम्हें नमस्कार है ॥९॥ हे मंगल स्वरूपिणि ! तुम सब मंगलों को देने वाली हो, हे शिवे ! सब

* इस मन्त्रसे हवन में पायसादि की आहुति देनी प्रारम्भ करनी चाहिये और २६ श्लोक तक देते रहना चाहिये।

प्रयोजनों को सिद्ध करने वाली, शरणागत वत्सला, तीन नेत्रों वाली एवं नारायणी हो, तुम्हें नमस्कार हो ।।१०।। संसार के धारण और नाश करने के लिए तुम ही आदि शक्ति

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके । शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तुते ॥ १० ॥ सृष्टिस्थितिविनाशानां शक्तिभूते सनातनि । गुणाश्रये गुणमये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ ११ ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राण परायणे । सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १२ ॥ हंसयुक्त विमानस्थे

हो, हे नारायणी ! हे गुणाश्रय तथा गुण मय ! तुम्हें नमस्कार है ।।११।। शरण में आए हुए दीनों तथा पीड़ितों की रक्षा करने वाली तथा सबकी पीडा को दूर करने वाली नारायणि देवि ! तुम्हें नमस्कार है ।।१२।। ब्रह्माणी का रूप धारण कर हंसयुक्त विमान में बैठने वाली, कुशा जल

छिड़कने वाली नारायणि देवि तुम्हें नमस्कार है।१३।हे माहेश्वरी का रूप धारण करने वाला त्रि-
शूल चक्र और सर्प धारण करने वाली तथा महा वृषभ पर चढ़ने वाली नारायणि देवि तुम्हें

ब्रह्माणी रूपधारिणि ।- कौशाम्भःक्षरिके देवि नारायणि
नमोऽस्तुते ॥ १३ ॥ त्रिशूलचन्द्राहिधरे महावृषभवाहिनि । माहे-
श्वरीस्वरूपेण नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १४ ॥ मयूर कुक्कुटवृते
महाशक्तिधरेऽनघे । कौमारीरूपसंस्थाने नारायणि नमो-
ऽस्तु ते ॥ १५ ॥ शंखचक्रगदाशारंगगृहीतपरमायुधे । प्रसीद

नमस्कार है ॥१४॥ हे कौमारी का रूप धर हंस पर चढ़ने और महाशक्ति को धारण करने
वाली पाप रहित नारायणी देवी तुम्हें नमस्कार है ॥१५॥ हे वैष्णवी रूप में शंख, चक्र, गदा,
शार्ङ्ग नामक उत्तम आयुधों को धारण करने वाली नारायणि देवि तम प्रसन्न होओ, तुम्हें नमस्कार

है ॥१६॥ हे वाराह रूप धारण कर उग्र महाचक्र हाथ में ले, दाढ़ों पर से पृथ्वी को उठाने वाली नारायणि देवि तुम्हें नमस्कार है ॥१७॥ उग्र नृसिंह रूप धारण कर असुरों का वध करने

वैष्णवीरूपे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १६ ॥ गृहीतोग्रमहाचक्रे दंष्ट्रोद्धृतवसुन्धरे । वाराहरूपिणि शिवे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १७ ॥ नृसिंहरूपेणोग्रेण हन्तुं दैत्यान् कृतोद्यमे । त्रैलोक्य-त्राणसहिते नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १८ ॥ किरीटिनि महावज्रे सहस्रनयनोज्ज्वले । वृत्रप्राणहरे चैन्द्रि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ १९ ॥ शिवदूतीस्वरूपेण हतदैत्यमहाबले । घोररूपे महारावे

वाली तथा त्रिलोकी की रक्षा करने वाली नारायणि देवि तुम्हें नमस्कार है ॥१८॥ किरीट धारण कर, महावज्र लिए, हजारों आंखों से दीप्त, वृत्रासुर के प्राणों को हरने वाली इन्द्रा शक्तिरूपा

नारायणी देवी को हमारा नमस्कार है ।।१६।। अत्यन्त बल स्वरूपा शिवदूती के रूप में दैत्यों का नाश करने वाली तथा भयंकर शब्द करने वाली नारायणी, तुम्हें नमस्कार है ।।२०।। बड़े

नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २० ॥ दंष्ट्राकरालवदने शिरोमाला विभूषणे । चामुण्डे मुण्डमथने नारायणि नमोऽस्तु ते ॥ २१ ॥ लक्ष्मि लज्जे महाविद्ये श्रद्धे पुष्टि स्वधे ध्रुवे । महारात्रि महाविद्ये नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२२॥ मेधे सरस्वती वरे भूति बाभ्रवि तामसि । नियते त्वं प्रसीदेशे नारायणि नमोऽस्तु ते ॥२३॥ सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते । भयेभ्य-

बड़े दाँतों वाली, मुण्डों की माला से शोभित, मुण्ड को मारने वाली चामुण्डे, नारयणी, तुम्हें नमस्कार है ।।२१।। लक्ष्मी, लज्जा, महाविद्या, श्रद्धा, पुष्टि, स्वधा, ध्रुवा, महारात्रि महा-

विद्या, सर्व रूपा नारायणी! तुम्हें नमस्कार है ॥२२॥ सरस्वती, वरा (श्रेष्ठा), भूति (ऐश्वर्यरूपा) वाभ्रवी (पार्वती) तामसी (महाकाली), नियता (संयमपरायणा) तथा ईशा (सब की

स्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥२४॥ एतत्ते वदनं सौम्यं लोचनत्रय भूषितम् । पातु नः सर्वभीतिभ्यः कात्यायनि नमोऽस्तु ते ॥२५॥ ज्वालाकरालमत्युग्रमशेषासुरसूदनम् । त्रिशूलं पातु नो भीतेर्भद्रकालिनमोऽस्तु ते ॥२६॥ हिनस्ति दैत्यतेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् । सा घण्टा

(अधीश्वरी) रूपिणी देवी तुमको नमस्कार है।२३। हे सब स्वरूप धारण करने वाली सबकी स्वामिनि सब शक्तियों से युक्त दुर्गे देवि! हमारी भय से रक्षा करो, तुम्हें नमस्कार है ॥२४॥ हे कात्यायनि तुम्हारी तीन आँखों से विभूषित यह सौम्य मुख हमें सब कष्टों से बचावे, तुम्हें नमस्कार है ॥२५॥

भद्रकालि ! ज्वाला के समान भयङ्कर, अत्यन्त उग्र, समस्त असुरों का नाश करने वाला तुम्हारा त्रिशूल हमारी भय से रक्षा करे। तुम्हें नमस्कार है ॥२६॥ अपनी ध्वनी से मारे जगत

पातु नो देवि पापेभ्यो नः सुतानिव ॥२७॥ असुरासृग्वसा-पङ्कचर्चितस्ते करोज्ज्वलः। शुभाय खड्गो भवतु चण्डिके त्वां नता वयम् ॥२८॥ *रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान्सकलानभीष्टान्। त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥ २९ ॥ एतत्कृतं यत्कदनं त्वयाद्य धर्मद्विषां देवी महासुराणाम्। रूपैरनेकैर्बहुधात्ममूर्ति

को पूरित कर असुरों के तेज को नष्ट करने वाला तुम्हारा घण्टा हम लोगों की सब पापों से पुत्रों के समान रक्षा करे ॥२७॥ हे चण्डिके ! असुरों के रक्त और चर्बी के कीचड़ से चर्चित

* इस मन्त्र से हवन में 'गलो' की आहुति दें।

हुआ तुम्हारा खड्ग हमारे कल्याण के लिए हो, हम तुम्हें नमस्कार करते हैं ॥२८॥ हे देवि ! तुम प्रसन्न होकर सम्पूर्ण रोगों को नष्ट कर देती हो तथा रुष्ट होकर सारी अभीष्ट कामनाओं को नाश कर देती हो, तुम्हारे आश्रित मनुष्यों को कभी कष्ट नहीं होता किन्तु वह दूसरों को आश्रय देने योग्य होते हैं ॥२९॥ हे अम्बिके ! अपने आप को अनेक स्वरूपों में स्थिर कर जो इस समय

कृत्वाम्बिके तत्प्रकरोति कान्या ॥ ३० ॥ विद्यासु शास्त्रेषु विवेकदीपेष्वाद्येषु वाक्येषु च का त्वदन्या । ममत्वगर्तेऽतिमहान्धकारे विभ्रामयत्येतदतीव विश्वम् ॥ ३१ ॥ रक्षांसि यत्रो-

धर्मद्रोही महासुरों का तुमने नाश किया है ऐसा कार्य अन्य कौन कर सकता है ॥३०॥ सारीविद्याओं, शास्त्रों ज्ञानआदि दीपक तथा आदि वाक्य अर्थात् वेदों के होते हुए महाअन्धकार रूपी ममता के गड्ढे में इस संसार को तुम्हारे बिना कौन घुमा सकता

है ॥३१॥ जहां राक्षस, जहां भयंकर विष वाले सर्प, जहां शत्रु तथा डाकू चोर हैं जहां दावानल है और समुद्र के बीच स्थित होकर तुम प्राणियों की रक्षा करती हो ॥३२॥ हे विश्व की स्वामिनि! तू सारे विश्व की रक्षा करती है, विश्व में व्याप्त होकर सबको धारण कर रही हो, तुम ब्रह्मा, विष्णु आदि विश्वेश्वरों से वन्दना की जाती हो। हे देवि! जो तेरी भक्ति

**ग्रविषाश्च नागा यत्रारयो दस्युबलानि यत्र । दावानलो यत्र तथाब्धिमध्ये तत्र स्थिता त्वं परिपासि विश्वम् ॥ ३२ ॥**

**विश्वेश्वरि त्वं परिपासि विश्वं विश्वात्मिका धारयसीति**

करते हैं वह सम्पूर्ण विश्व को आश्रय देने योग्य होते हैं ॥३३॥ हे देवि! प्रसन्न होओ और सदा शत्रु भय से हमारी रक्षा करो जैसे असुरों का वधकर आपने हमारी रक्षा की है इसी प्रकार सारे जगत के पापों तथा उत्पातों के द्वारा उत्पन्न हमारी आदि उपद्रवों को शीघ्र शांत करो ॥३४॥ हे विश्व की पीड़ा के हरण करने वाली देवि! अपने सन्मुख विनम्र पुरुषों पर प्रसन्न होओ, हे

त्रिलोकी से स्तुति योग्य देवि ! तम लोगों को वर देने वाली हो ॥३५॥ देवी बोलीं ॥३६॥ हे देवताओ ! मैं वर देने को तैयार हूं। जो इच्छा हो संसार के हित के लिए वर मांगो मैं दूंगी ॥३७॥

विश्वम् । विश्वेशवन्द्या भवती भवन्ति विश्वाश्रया ये त्वयि भक्तिनम्राः ॥ ३३ ॥ देवि प्रसीद परिपालय नोऽरिभीतेर्नित्यं यथासुरवधादधुनैव सद्यः । पापानि सर्वजगतां प्रशमं नयाशु उत्पातपाकजनिताँश्च महोपसर्गान् ॥ ३४ ॥ प्रणतानां प्रसीद त्वं देवि विश्वार्तिहारिणि । त्रैलोक्यवासिनामीड्ये लोकानां

देवता बोले ॥३८॥ हे सब की स्वामिनि ! त्रिलोकी की समस्त बाधाओं को शांत करने वाला काम जैसा कि तुम ने अब किया है इसी प्रकार हमारे शत्रुओं का नाश करती रहो ॥३९॥ देवी बोली ॥४०॥ वैवस्वत मन्वन्तर के अट्ठाइसवें युग में दोनों शुम्भ और निशुम्भ महासुर

फिर उत्पन्न होंगे॥४१॥तब मैं नन्द गोप के घर में यशोदा के गर्भ से अवतीर्ण होकर और विन्ध्याचल निवासिनी होकर उन दोनों का नाश करूंगी॥४२॥फिर पृथ्वी पर अत्यन्त रुद्र रूप धारण

वरदा भव ॥ ३५ ॥ देव्युवाच ॥ ३६ ॥ वरदाहं सुरगणा वरं यन्मनसेच्छथ । तं वृणुध्वं प्रयच्छामि जगतामुपकारकम् ॥ ३७ ॥ देवा ऊचुः ॥ ३८ ॥ *सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि । एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥ ३९ ॥ देव्युवाच ॥ ४० ॥ वैवस्वतेऽन्तरे प्राप्ते अष्टाविंशतितमे युगे । शुम्भो निशुम्भश्चैवान्यावुत्पत्स्येते महासुरौ ॥ ४१ ॥ +नन्दगोपगृहे जाता

कर वैप्रचित्त नामक असुरों का बध करूंगी ॥४३॥ उन उग्र वैप्रचित्र असुरों का भक्षण करने

---

*इस मन्त्रसे हवन में काली मिर्चों की आहुति देवें। +इस मन्त्र से हवन में मक्खन और मिश्री की आहुति देवें।

से अनार के पुष्पों के समान दांत लाल हो जायेंगे ॥४४॥ इस पर स्वर्ग में देवता और भूमि पर मनुष्य मेरी स्तुति करते हुए सदा रक्त दन्तिका नाम से पुकारेंगे ॥४५॥ फिर सौ वर्ष तक

यशोदा गर्भसम्भवा । ततस्तौ नाशयिष्यामि विन्ध्याचलनिवासिनी ॥ ४२ ॥ पुनरप्यतिरौद्रेण रूपेण पृथिवीतले । अवतीर्य हनिष्यामि वैप्रचित्तांस्तु दानवान् ॥ ४३ ॥ *भक्षयन्त्याश्च तानुग्रान् वैप्रचित्तान्महासुरान् । रक्ता दन्ता भविष्यन्ति दाडिमी कुसुमोपमाः ॥ ४४ ॥ ततो मां देवताः स्वर्गे मर्त्यलोके च मानवाः । स्तुवन्तो व्याहरिष्यन्ति सततं रक्तदन्तिकाम् ॥ ४५ ॥ भूयश्च

वर्षा न होने के अवसर पर जब मुनि मेरी स्तुति करेंगे तो मैं गर्भ के बिना ही उत्पन्न होऊँगी ॥४६॥ उस समय सौ नेत्रों से मैं मुनियों को देखूँगी इसलिए मनुष्य मुझे

शताक्षी नाम से पुकारेंगे ॥४७॥ उस समय वर्षा होने तक मैं सारे संसार को अपने देह से प्राण धारक शाकों को उत्पन्न कर पालना करूँगी ।४८॥ इस संसार में मेरा नाम शाक-

शतवार्षिक्यामनावृष्ट्यामनम्भसि । मुनिभिः संस्तुता भूमौ संभविष्याम्ययोनिजा ॥ ४६ ॥ ततः शतेन नेत्राणां निरीक्षि-ष्यामि यन्मुनीन् । कीर्तयिष्यन्ति मनुजाः शताक्षीमिति मां ततः ॥ ४७ ॥ ततोऽहमखिलं लोकमात्मदेहसमुद्भवैः । भरिष्यामि सुराः शाकैरावृष्टैः प्राणधारकैः ॥ ४८ ॥ *शाकम्भरीति विख्याति तदा यास्याम्यहं भुवि । तत्रैव च वधिष्यामि दुर्गमाख्यं महा-

म्भरी प्रसिद्ध होगा और वहाँ ही दुर्ग नाम से महासुर का वध करूँगी ॥४६॥ इससे मेरा

*इस मन्त्र से हवन में 'अनार के फूलों' की आहुति देवें ।

नाम दुर्गा देवी विख्यात होगा फिर जब मैं भयंकर रूप धारण कर हिमालय पर ॥५०॥ मुनियों की रक्षा के लिए राक्षसों का भक्षण करूंगी तब सारे मुनि नम्र होकर मेरी स्तुति

सुरम् ॥ ४९ ॥ दुर्गा देवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति पुनश्चाहं यदा भीमं रूपं कृत्वा हिमाचले ॥ ५० ॥ रक्षांसि भक्षयिष्यामि मुनीनां त्राणकारणात् । तदा मां मुनयः सर्वे स्तोष्यन्त्यानम्रमूर्तयः ॥ ५१ ॥ भीमादेवीति विख्यातं तन्मे नाम भविष्यति । यदारुणाख्यस्त्रैलोक्ये महाबाधां करिष्यति ॥ ५२ ॥ तदाहं भ्रामरं रूपं कृत्वा संख्येयषट्पदम् । त्रैलोक्यस्य

करेंगे ॥५१॥ उस पर मेरा नाम, 'भीमा देवी' प्रसिद्ध होगा और जब अरुण नामक राक्षस सारी त्रिलोकी में उपद्रव मचायेगा ॥५२॥ तब मैं असंख्य भ्रमरों का रूप धारण का त्रिलोकी

के हित के लिए उस महासुर का वध करूंगी ॥५३॥ तब मेरी भ्रामरी नाम से संसार के सब

हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम् ॥ ५३ ॥ भ्रामरीति च मां लोकास्तदा स्तोष्यन्ति सर्वतः । इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ॥ ५४ ॥ तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥ ॐ ॥ ५५ ॥

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये देव्याः स्तुतिर्नामैकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ उवाच ४ । अर्ध श्लो० १ । श्लो० ५० । एवम् ५५ । एवमादितः ॥ ६३० ॥

मनुष्य स्तुति करेंगे, इस तरह जब जब असुरों के द्वारा उत्पात होंगे तब तब मैं उत्पन्न होकर शत्रुओं का नाश करूंगी ॥५५॥

# अथ द्वादशोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेट विलसद्धस्ताभिरासेविताम् । हस्तैश्च-
क्रगदासिखेट विशिखांश्चापं गुणां तर्जनीं बिभ्राणामनलात्मिकां
शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥ १२ ॥

जिस के अंगों की प्रभा बिजली के सदृश है, जो सिंह के ऊपर बैठी हुई भयंकर प्रतीत होती है। जिसके हाथों में तलवार और ढाल है और अनेक कन्यायें जिस की सेवा में खड़ी हैं। जो अपने हाथ में चक्र, गदा, तलवार, ढाल, बाण, धनुष, पाश और तर्जनी मुद्रा धारण किये हुये

है और जिसका स्वरूप अग्निमय है तथा जिस के मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट है उस तीन नेत्रों वाली दुर्गा देवी का मैं ध्यान करता हूं ॥१२॥

ॐ देव्युवाच ॥ १ ॥ एभिः स्तवैश्च मां नित्यं स्तोष्यते यः समाहितः । तस्याहं सकलां बाधां नाशयिष्याम्यसंशयम् ॥ २ ॥ मधुकैटभनाशं च महिषासुर घातनम् । कीर्तयिष्यन्ति ये

देवी बोली ॥१॥ जो मनुष्य एकाग्र मन से इन मन्त्रों द्वारा नित्य स्तुति करेगा उसकी सारी बाधाओं को मैं अवश्य दूर करूँगी ॥२॥ मधु कैटभ के नाश, महिषासुर का घात तथा शुम्भ निशुम्भ के संहार के प्रसङ्ग का जो मनुष्य पाठ करेंगे ॥३॥ तथा अष्टमी, चतुर्दशी और नवमी को जो एकाग्र मन से मेरे माहात्म्य को भक्ति-पूर्वक सुनेंगे ॥४॥ उनके पाप और पाप-जन्य आपत्तियें सब निर्मूल होंगी और दरिद्रता तथा प्रियजनों का वियोग भी उन के यहां न होगा ॥५॥ ऐसे पुरुषों को शत्रु, चोर-डाकू, राजा, शस्त्र, अग्नि और जल से कभी डर न

होगा ॥६॥ इस लिए मेरे इस माहात्म्य को एकाग्र मन से भक्ति-पूर्वक पढ़ना और सुनना चाहिए, यह परम कल्याण करने वाला है ॥७॥ यह मेरा माहात्म्य महामारी से उत्पन्न समस्त उप-

तद्वद् वधं शुम्भनिशुम्भयोः ॥ ३ ॥ अष्टम्यां च चतुर्दश्यां नवम्यां चैकचेतसः । श्रोष्यन्ति चैव ये भक्त्या मम माहा-त्म्यमुत्तमम् ॥ ४ ॥ न तेषां दुष्कृतं किञ्चिद् दुष्कृतोत्था न चापदः । भविष्यति न दारिद्र्यं न चैवेष्टवियोजनम् ॥ ५ ॥ शत्रुतो न भयं तस्य दस्युतो वा न राजतः । न शस्त्रानलतोयौघात्कदा चित्सम्भविष्यति ॥ ६ ॥ तस्मान्ममैतन्माहात्म्यं पठितव्यं समा-

द्रवों तथा तीनों प्रकार के सन्तापों को शान्त करता है ॥८॥ जिस घर में नित्य-प्रति मेरे माहात्म्य का पाठ होता है उस घर को मैं कभी न त्यागूंगी और उसके समीप वास करूंगी ॥९॥

बलिदान, पूजा, होम तथा महोत्सव आदि में मेरा यह चरित्र पढ़ना और सुनना चाहिए ॥१०॥ ज्ञान पूर्वक अथवा अज्ञान से जो भी बलि, पूजा तथा होम किया जाता है मैं उसी

हितैः । श्रोतव्यं च सदा भक्त्या परं स्वस्त्ययनं हि तत् ॥७॥ *उपसर्गानशेषांस्तु महामारीसमुद्भवान् । तथा त्रिविधमुत्पातं माहात्म्यं शमयेन्मम ॥ ८ ॥ यत्रैतत्पठ्यते सम्यङ्नित्यमायतने मम । सदा न तद्विमोक्ष्यामि सान्निध्यं तत्र मे स्थितम् ॥ ९ ॥ बलिप्रदाने पूजायामग्निकार्ये महोत्सवे । सर्वं ममैतच्चरित-

को प्रीति पूर्वक ग्रहण करती हूँ ॥११॥ शरद ऋत में जो प्रति वर्ष महा पूजा की जाती है उस में मेरा यह माहात्म्य भक्ति पूर्वक सुनने से मनष्य सब बाधाओं से मुक्त तथा मेरे अनुग्रह

*इस मन्त्र से हवन में शाक की आहुति देवें।

से धन धान्य और पुत्र पौत्र से सम्पन्न होता है इस में सन्देह नहीं ॥१२-१३॥ मेरा यह माहात्म्य और कल्याणकारी जन्म तथा युद्ध में मेरे पराक्रम सुन कर मनुष्य निर्भय होता है ॥१४॥ शत्रुओं

मुच्चार्यं श्राव्यमेव च ॥ १० ॥ जानताऽजानता वापि बलिपूजां तथा कृताम् । प्रतीच्छिष्याम्यहं प्रीत्या वह्निहोमं तथा कृतम् ॥ ११ ॥ शरत्काले महापूजा क्रियते या च वार्षिकी । तस्यां ममैतन्माहात्म्यं श्रुत्वा भक्तिसमन्वितः ॥ १२ ॥ *सर्वाबाधा विनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः । मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥ १३ ॥ श्रुत्वा ममैतन्माहात्म्यं तथा चोत्पत्तयः शुभाः । पराक्रमं

का नाश होता है और कल्याण की प्राप्ति होती है तथा मेरा माहात्म्य सुनने वालों का

*इस मन्त्र से नीम की आहुति देवें।

कुल प्रसन्न रहता है ॥१५॥ सर्वत्र शान्ति कर्म में, बुरे स्वप्न देखने पर, ग्रह पीड़ा होने पर मेरा माहात्म्य सुनना चाहिये ॥१६॥ इससे सब विघ्न व पीड़ा शांत जायेंगी और बुरे

च युद्धेषु जायते निर्भयः पुमान् ॥ १४ ॥ रिपवः संक्षयं यान्ति कल्याणं चोपपद्यते । नन्दते च कुलं पुंसां माहात्म्यं मम शृण्वताम् ॥ १५ ॥ शान्तिकर्मणि सर्वत्र तथा दुःस्वप्नदर्शने । ग्रहपीडासु चोग्रासु माहात्म्यं शृणुयान्मम ॥ १६ ॥ *उपसर्गाः शमं यान्तिग्रहपीडाश्च दारुणाः । दुःस्वप्नं च नृभिर्दृष्टं सुस्वप्न-मुपजायते ॥ १७ ॥ +बालग्रहाभिभूतानां बालानां शान्तिकारकम् ।

स्वप्न नष्ट हो कर अच्छे स्वप्न आयेंगे ॥१७॥ यह माहात्म्य बाल ग्रह से पीड़ित बच्चों के

*इस मन्त्र से मोती की आहुति देवें।

लिए शांतिदायक तथा मनुष्य के परस्पर के विरोध मिटाकर मैत्रीभाव उत्पन्न करता है ॥१८॥ सब दुराचारी मनुष्यों के बल का हरने वाला तथा राक्षस, भूत और पिशाचों को इसके पढ़ने से

संघातभेदे च नृणां मैत्रीकरणमुत्तमम् ॥ १८ ॥ दुर्वृत्तानामशेषाणां बलहानिकरं परम् । रक्षो भूतपिशाचानां पठनादेव नाशनम् ॥ १९ ॥ *सर्वं ममैतन्माहात्म्यं मम सन्निधिकारकम् । पशुपुष्पार्घ्यधूपैश्च गन्धदीपैस्तथोत्तमैः ॥ २० ॥ †विप्राणां भोजनैर्होमैः प्रोक्षणीयैरहर्निशम् । अन्यैश्च विविधैर्भोगैः प्रदानैर्वत्सरेण या ॥ २१ ॥ प्रीतिर्मे क्रियते सास्मिन्सकृत्सुचरिते

ही नष्ट करता है ॥१९॥ मेरा यह माहात्म्य मनुष्य को मेरे समीप लाता है। पशु पुष्प, अर्घ्य

*इस मन्त्र से बालछड़ की आहुति देवें। †इस मन्त्र से सरसों की आहुति देवें।

धूप, गन्ध, दीप, ब्राह्मणभोजन, होम, रात दिन अभिषेक तथा अनेक प्रकार के भोग देने से जो वर्ष भर तक मेरी प्रीति के लिए किया जाता है वह फल माहात्म्य के पढ़ने और सुनने से

श्रुते। श्रुतं हरति पापानि तथाऽऽरोग्यं प्रयच्छति ॥ २२ ॥ रक्षां करोति भूतेभ्यो जन्मनां कीर्तनं मम। युद्धेषु चरितं यन्मे दुष्टदैत्यनिबर्हणम् ॥२३॥ तस्मिञ्छ्रुते वैरिकृतं भयं पुंसां न जायते। युष्माभिःस्तुतयो याश्च याश्च ब्रह्मर्षिभि- कृताः ॥ २४ ॥ ब्रह्मणा च कृतास्तास्तु प्रयच्छन्ति शुभां मतिम्। अरण्ये प्रान्तरे वापि दावाग्नि परिवारितः ॥ २५ ॥ दस्युभिर्वा

शीघ्र प्राप्त होता है ॥२१-२२॥ मेरे जन्मों की कथा भूतों से रक्षा करती है, दुष्ट दैत्यों का नाश करने वाला युद्ध सम्बन्धी मेरा चरित्र ॥२३॥ सुनने से मनुष्य का शत्रु भय नष्ट होता

है। तुम्हारे से तथा ब्रह्मर्षियों से की गई स्तुतियें ॥२३॥ और ब्रह्मा से की हुई स्तुति शुभ मति प्रदान करती है। बन में दावाग्नि से घिरा हुआ ॥२५॥ निर्जन स्थान में चारों से घिरा हुआ

वृतः शून्ये गृहीतो वापि शत्रुभिः । सिंहव्याघ्रानुयातो वा वने वा वनहस्तिभिः ॥ २६ ॥ राज्ञा क्रुद्धेन चाज्ञप्तो वध्यो बन्ध गतोऽपि वा । आघूर्णितो वा वातेन स्थितःपोते महार्णवे ॥ २७ ॥ पतत्सु चापि शस्त्रेषु संग्रामे भृशदारुणे । सर्वाबाधासु घोरासु वेदनाभ्यर्दितोऽपि वा ॥ २८ ॥ स्मरन्ममैतच्चरितं नरो मुच्येत संकटात् । मम प्रभावात्सिहाद्या दस्यवो वैरिणास्तथा ॥ २९ ॥

तथा शत्रुओं से पकड़ा हुआ, बन में सिंह, व्याघ्र अथवा जंगली हाथियों के फन्दे में फँसा हुआ ॥२६॥ क्रुद्ध हुए राजा के आदेश से पकड़ा हुआ या फांसी पर चढ़ने वाला, लू लगने

पर तथा महा सागर में छोटी सी नौका पर बैठा हुआ ॥२७॥ भयङ्कर युद्ध में तीक्ष्ण शस्त्रों का प्रहार होने पर अथवा समस्त घोर बाधाओं तथा कष्टों से पीड़ित होकर भी ॥२८॥ मेरे इस चरित्र

दूरादेव पलायन्ते स्मरतश्चरितं मम ॥ ३० ॥ ऋषिरुवाच ॥ ३१ ॥ इत्युक्त्वा सा भगवती चण्डिका चण्डविक्रमा ॥ ३२ ॥ पश्यतामेव देवानां तत्रैवान्तरधीयत । तेऽपि देवा निरातंका स्वाधिकारान्यथा पुरा ॥ ३३ ॥ यज्ञभागभुजः सर्वे चक्रुर्विनिहतारयः । दैत्याश्च देव्या निहते शुम्भे देवरिपौ युधि ॥ ३४ ॥ जगद्विध्वं-

का स्मरण करके मनुष्य संकट से मुक्त हो जाता है, मेरे प्रभाव से सिंह आदि तथा चोर और शत्रु ॥२६॥ मेरे चरित्र का स्मरण करने वाले पुरुष से दूर भाग जाते हैं ॥३०॥ ऋषि बोले ॥ यों कहकर तीव्र पराक्रम से युक्त वह भगवती चण्डिका ॥३२॥ सब देवों के देखते हुए वहाँ

ही अन्तर्ध्यान होगई, देवता भी निर्भय हो पूर्ववत् अपने अपने अधिकारों को प्राप्त कर ॥३३॥ सब शत्रुओं के नष्ट होने से यज्ञभाग लेने लगे, देवी द्वारा युद्ध में महासुर शुम्भ के मरने

सिनि तस्मिन् महोग्रेऽतुलविक्रमे । निशुम्भे च महावीर्ये शेषाः पातालमाययुः ॥ ३५ ॥ एवं भगवती देवी सा नित्यापि पुनः पुनः । सम्भूय कुरुते भूप जगतः परिपालनम् ॥ ३६ ॥ तयैतन्मोह्यते विश्वं सैव विश्वं प्रसूयते । सा याचिता च विज्ञानं तुष्टा ऋद्धिं प्रयच्छति ॥ ३७ ॥ व्याप्तं तयैतत्सकलं ब्रह्माण्डं

पर ॥३४॥ अत्यन्त पराक्रमी, उग्र, जगत का नाश वाले, अतिबलवान् निशुम्भ के मरने पर शेष राक्षस पाताल को चले गये॥३५॥ हे राजन् इस तरह वह भगवती देवी बार बार प्रकट होकर

संसार की रक्षा करती है ॥३६॥ वह संसार को मोह में फांसती और वह ही उत्पन्न करती है, वह ही याचना करने पर सन्तुष्ट हो कर विज्ञान व ऋद्धि प्रदान करती है ॥३७॥ हे राजन् !

मनुजेश्वर । महाकाल्या महाकाले महामारीस्वरूपया ॥ ३८ ॥ सैव काले महामारी सैव सृष्टिर्भवत्यजा । स्थितिं करोति भूतानां सैव काले सनातनी ॥ ३९ ॥ भवकाले नृणां सैव लक्ष्मीर्वृद्धिप्रदा गृहे । सैवाभावे तथाऽलक्ष्मीर्विनाशायोपजायते ॥ ४० ॥ *स्तुता सम्पूजिता पुष्पैधूपगन्धादिभिस्तथा । ददाति वित्तं पुत्रांश्च मतिं धर्मे तथा शुभाम् ॥ ॐ ॥ ४१ ॥

प्रलयकाल में महामारी का रूप धारण करने वाली महाकाली से यह सारा ब्रह्माण्ड व्याप्त है ॥३८॥ वह प्रलय के समय महामारी और उत्पत्ति के समय सृष्टि करती है और पालन के

*इस मन्त्र से खस, सफेदचन्दन कर्पूर की आहुति देवें ।

समय प्राणियों की स्थिति का कारण होती है ॥३९॥ वह वहां उन्नति के समय गृह में लक्ष्मी के रूपमें मनुष्योंको वृद्धिप्रद होती हैं और अभाव में दरिद्रता बनकर लक्ष्मी का नाश करती है।४०। धूप, गंध आदि से पूजने तथा स्तुति करने पर धन और पुत्र तथा धर्म में बुद्धि प्रदान करती है।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवी-माहात्म्ये फलस्तुतिर्नाम द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ उवाच २। अर्धश्लोकौ २। श्लो० ३७। एवम् ४१ एवमादितः ॥ ६७१ ॥

# अथ त्रयोदशोऽध्यायः

## अथ ध्यानम्

ॐ बालार्कमण्डलाभासां चतुर्बाहुं त्रिलोचनाम् ।
पाशांकुशवराभीतीर्धारयन्तीं शिवां भजे ॥ १३ ॥

जिस की चार भुजाएँ और तीन नेत्र हैं तथा जो अपने हाथों में पाश, अङ्कुश, वर एवं अभय की मुद्रा धारण किये रहती है और जो उदय काल के सूर्य मण्डल की सी कान्ति वाली है, मैं शिवा देवी का ध्यान करता हूं ।

ॐ ऋषिरुवाच ॥ १ ॥ एतत्ते कथितं भूप देवीमाहात्म्यमुत्तमम् ।
एवं प्रभावा सा देवी ययेदं धार्यते जगत् ॥ २ ॥ विद्या तथैव

ऋषि बोले ॥१॥ हे राजन् यह देवी का सर्वोपरि माहात्म्य तुमसे कहा, इतना प्रभाव रखने वाली यह देवी है, जो इस संसार को धारण करती है ॥ २ ॥ यह देवी ही जो

क्रियते भगवद्विष्णुमायया । तया त्वमेष वैश्यश्च तथैवान्ये विवेकिनः ॥ ३ ॥ मोह्यन्ते मोहिताश्चैव मोहमेष्यन्ति चापरे । तामुपैहि महाराज शरणं परमेश्वरीम् ॥ ४ ॥ आराधिता सैव नृणां भोगस्वर्गापवर्गदा ॥ ५ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ ६ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा सुरथः स नराधिपः ॥ ७ ॥ प्रणिपत्य महाभागं तमृषिं शंसितव्रतम् । निर्विण्णोऽतिममत्वेन राज्यापहरणेन च ॥ ८ ॥

भगवान् विष्णु की माया है विद्या ज्ञान उत्पन्न करती है उसी के द्वारा तुम, यह वैश्य, तथा अन्य विचारशील पुरुष ॥३॥ मोह में फँसते हैं, फँस रहे हैं और भविष्य में भी मोह जाल में फँसेंगे,

इसलिये हे राजन् ! तुम उस परमेश्वरी की शरण में जाओ ॥४॥ वहही देवी मनुष्यों को आराधना करने पर भोग, स्वर्ग तथा मुक्ति प्रदान करतीं है ॥५॥ मार्कण्डेय ऋषि बोले ॥६॥ मेधा ऋषि

जगाम सद्यस्तपसे स च वैश्यो महामुने । संदर्शनार्थमम्भाया नदीपुलिन संस्थितः ॥ ९ ॥ स च वैश्यस्तपस्तेपे देवीसूक्तं परं जपन् । तौ तस्मिन्पुलिने देव्याः कृत्वा मूर्तिं महीमीयम् ॥ १० ॥ *अर्हणां चक्रतुस्तस्याः पुष्पधूपाग्नितर्पणैः । निराहारौ यताहारौ तन्मनस्कौ समाहितौ ॥ ११ ॥ ददतुस्तौ बलिं चैव निजगात्रा सृगुक्षितम् । एवं समाराधयतोस्त्रिभिव र्षैर्यतात्मनोः ॥ १२ ॥

के इस प्रकार वचन सुन राजा सुरथ उस प्रशंसनीय व्रती ऋषि को प्रणाम कर राज्य हरण और ममता से विरक्त होकर ॥८॥ हे महामुने ! तत्काल तप करने चला गया और वह वैश्य देवी

*इस मन्त्र के साथ पुष्प और धूप की आहुति देवें।

के दर्शनों के लिये नदी के किनारे चला गया ॥९॥ उस वैश्य ने देवी के परम सूक्त का जप करते हुए तप किया, राजा और वैश्य दोनों नदी के किनारे देवी की मिट्टी की मूर्ति बनाकर ॥१०॥ पुष्प, धूप और होम आदि से नियमित आहार से रह कर पुनः निराहार रह कर देवी में एकाग्र हो मन लगा पूजा करने लगे ॥११॥ तथा दोनों ने अपने शरीर के रक्त से सींचकर

**परितुष्टा जगद्धात्री प्रत्यक्षं प्राह चण्डिका ॥ १३ ॥ देव्युवाच ॥१४॥ यत्प्रार्थ्यते त्वया भूप त्वया च कुलनन्दन । मत्तस्तत्प्राप्यतां सर्वं परितुष्टा ददामि तत् ॥ १५ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ १६ ॥ ततो**

बलि दी। इस तरह संयम से तीन वर्ष तक आराधना करने पर ॥१२॥ जगत् को धारण करने वाली देवी सुन्तुष्ट हो प्रत्यक्ष होकर बोली ॥१३॥ देवी बोली ॥१४॥ हे राजन् ! तथा हे वैश्य, मैं प्रसन्न होकर कहती हूं कि तुम जो चाहो मांगो मैं वह ही दूँगी । १५॥ मार्कण्डेय ऋषि बोले ॥१६॥ देवी से ऐसा सुन राजा सुरथ ने कहा कि मैं अगले जन्म में अखण्ड

राज्य प्राप्त करूँ तथा इस जन्म में भी बल पूर्वक शत्रुओं को नष्ट कर अपना राज्य प्राप्त करूँ ॥१७॥ वैश्य ने विरक्त हो यह मेरा है, यह मैं हूं इस प्रकार के संग को नष्ट करने वाला

वव्रे नृपो राज्यमविभ्रंश्यन्यजन्मनि । अत्रैव च निजं राज्यं हतशत्रुबलं बलात् ॥ १७ ॥ सोऽपि वैश्यस्ततो ज्ञानं वव्रे निर्विण्णमानसः । ममेत्यहमिति प्राज्ञः सङ्गविच्युतिकारकम् ॥ १८ ॥ देव्युवाच ॥ १९ ॥ स्वल्पैरहोभिर्नृपते स्वं राज्यं प्राप्स्यते भवान् ॥ २० ॥ हत्वा रिपूनस्खलितं तव तत्र भविष्यति ॥ २१ ॥ मृतश्च भूयः संप्राप्य जन्म देवाद्विवस्वतः ॥ २२ ॥ सावर्णिको नाम मनु

तत्त्व ज्ञान मांगा ॥१८॥ देवी बोली ॥१९॥ राजन्, थोड़े ही दिनों में तुम अपने राज्य को प्राप्त करोगे ॥२०॥ अपने शत्रुओं को मार कर अखण्ड राज्य भोगोगे ॥२१॥ और मरने के

पश्चात् सूर्य भगवान् से जन्म लेकर ।।२२।। सावर्णि मनु के नाम से संसार में प्रसिद्धि पाओगे ।।२३।। हे वैश्य श्रेष्ठ ! तूने जो वर मुझ से मांगा है वह ही मैं तुम्हें देती हूँ तुम्हें मोक्ष को

भवान् भुवि भविष्यति ॥ २३ ॥ वैश्यवर्य त्वया यश्च वरोऽस्मत्तोऽभिवांछितः ॥ २४ ॥ तं प्रयच्छामि संसिद्ध्यै तव ज्ञानं भविष्यति ॥ २५ ॥ मार्कण्डेय उवाच ॥ २६ ॥ इति दत्त्वा तयोर्देवी यथाभिलषितं वरम् ॥ २७ ॥ बभूवान्तर्हिता सद्यो भक्त्या ताभ्यामभिष्टुता । एवं देव्या वरं लब्ध्वा सुरथः क्षत्रियर्षभः ॥ २८ ॥ सूर्याज्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता मनुः ॐ ॥ २९ ॥

प्राप्त कराने वाला ज्ञान मिलेगा ।।२४-२५।। मार्कण्डेय ऋषि बोले ।।२६।। दोनों को इस प्रकार उनकी इच्छानुसार वर देकर तथा दोनों के स्तुति करने पर देवी तत्क्षण अन्तर्धान

हो गई ।।२७।। इस प्रकार देवी से वर पाकर क्षत्रियों में श्रेष्ठ राजा सुरथ सूर्य से जन्म प्राप्त कर सावर्णि मुनि होंगे ।।२८-२९।।

इति श्रीमार्कण्डेयपुराणे सावर्णिके मन्वन्तरे देवीमाहात्म्ये सुरथवैश्ययोर्वरप्रदानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ।। १३ ।। उवाच ६ । अर्ध० श्लोकाः ११ । श्लो० १२ । एवम्० २९ । एवमादितः ७०० । समस्ता उवाच मंत्राः ५७ । अर्ध० श्लोकाः ४२ । श्लो० ५३५ । अवदानानि ६६ ।

# अथ नवार्णमन्त्र जपविधिः

इस प्रकार सप्तशती का पाठ पूरा होने पर पहले नवार्णजप करके फिर देवी सूक्त का पाठ करना चाहिये।

नीचे लिखे विनियोग को पढ़कर जल गिराए।

श्री गणपतिर्जयति। ॐ अस्य श्रीनवार्णमन्त्रस्य ब्रह्मा-विष्णुरुद्रा ऋषयःगायत्र्युष्णिगनुष्टुभश्छन्दांसि श्री महाकाली, महालक्ष्मी महासरस्वत्यो देवताः, ऐं बीजम्, ह्रीं शक्तिः, क्लीं कीलकम्, श्रीमहाकाली महालक्ष्मी, महासरस्वती प्रीत्यर्थे जपे विनियोगः ॥

## ॥ अथ ऋष्यादिन्यासः ॥

नीचे लिखे न्यास वाक्यों में से एक एक का उच्चारण करके दाहिने हाथ की अंगुलियों से क्रमशः शिर, मुख, हृदय, गुदा, दोनों चरण और नाभि का स्पर्श करे।

ॐ ब्रह्माविष्णुरुद्रऋषिभ्यो नमः, शिरसि ॥ ॐ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्छन्दोभ्यो नमः मुखे । श्रीमहाकाली महालक्ष्मी महासरस्वती देवताभ्यो नमः, हृदि । ऐं बीजाय नमः गुह्ये । ह्रीं शक्तये नमः, पादयोः । क्लीं कीलकाय नमः, नाभौ । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे इति मूलेन करौ संशोध्य* । ॐ ऐं अंगुष्ठाभ्यां नमः ॐ ह्रीं तर्जनीभ्यां नमः । ॐ क्लीं

*इस से हाथों की शुद्धि करके न्यास करे।

मध्यमाभ्यां नमः । ॐ चामुण्डायै अनामिकाभ्यां नमः । ॐ विच्चे कनिष्ठिकाभ्यां नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे करतलकरपृष्ठाभ्यां नमः ॥

निम्न लिखित वाक्यों को पढ़कर दाहिने हाथों की पाचों अंगुलियों से हृदय आदि अङ्गों का स्पर्श करे

## ॥ अथ हृदयादिषडङ्गन्यासः ॥

ॐ ऐं हृदयाय नमः । ॐ ह्रीं शिरसे स्वाहा । ॐ क्लीं शिखायै वषट् । ॐ चामुण्डायै कवचाय‡ हुम् । ॐ विच्चे नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे अस्त्राय* फट् ।

‡दाहिने हाथ की अंगुलियों से बायें कंधे को और बायें हाथ की अंगुलियों से दायें कंधे को एक साथ स्पर्श करे ।

*दाहिने हाथ को शिर के ऊपर से बाईं ओर से पीछे की ओर ले जाकर दाहिनी ओर से आगे ले जाए और तर्जनी तथा मध्यमा अंगुलियों से बायें हाथ की हथेली पर ताली बजाये ।

# अथ बीजन्यासः

निम्नलिखित वाक्यों को पढ़कर क्रमशःशिखा आदि का दाहिने हाथ की पांचों अंगुलियों से स्पर्श करे।

ॐ ऐं नमः, शिखायाम् । ॐ ह्रीं नमः दक्षिणनेत्रे ॥ ॐ क्लीं नमः, वामनेत्रे । ॐ चां नमः, दक्षिणकर्णे । ॐ मुं नमः वामकर्णे । ॐ डां नमः, दक्षिणनासापुटे । ॐ यैं नमः वामनासापुटे । ॐ विं नमः, मुखे । ॐ च्चैं नमः गुह्ये।

# अथ व्यापक न्यासः

प्रत्येक दिशा में चुटकी वजाते हुए न्यास करे।

ॐ ऐं प्राच्यै नमः । ॐ ऐं आग्नेय्यै नमः । ॐ ह्रीं दक्षिणायै

नमः । ॐ ह्रीं नैर्ऋत्यै नमः । ॐ क्लीं प्रतीच्यै नमः । ॐ क्लीं वायव्यै नमः । ॐ चामुण्डायै उदीच्यै नमः । ॐ चामुण्डायै ऐशान्यै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ऊर्ध्वायै नमः । ॐ ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे भूम्यै नमः ।

## ॥ अथ ध्यानम् ॥

खड्गं चक्र गदेषुचाप परिघाञ्छूलं भुशुण्डीं शिरः
शङ्खं संदधतीं करैस्त्रिनयनां सर्वाङ्ग भूषावृताम् ।
नीलाश्मद्युतिमास्यपाददशकां सेवे महाकालिकां
यामस्तौत्स्वपिते हरौ कमलजो हन्तुं मधुकैटभम् ॥ १ ॥

मधु और कैटभ को मरने के लिए ब्रह्मा जी ने ऐसी देवी का स्तवन किया था जिसने दस हाथों में खड्ग, चक्र, गदा, बाण, धनुष, परिघ, शूल, भुशुण्डि, मस्तक और शङ्ख धारण किये हैं उनके

अक्षस्रक्परशुं गदेषुकुलिशं पद्मं धनुः कुण्डिकां ।
दण्डं शक्तिमसिं च चर्म जलजं घण्टां सुराभाजनम् ॥
शूलं पाशसुदर्शने च दधतीं हस्तैः प्रसन्नाननां । सेवे
सैरिभमर्दिनीमिह महालक्ष्मीं सरोजस्थिताम् ॥ २ ॥ घण्टा-
शूलहलानि शङ्खमुसले चक्रं धनुः सायकं । हस्ताब्जैर्दधतीं

तीन नेत्र हैं। जिसके समस्त अङ्गों में दिव्य भूषण विभूषित हैं। जिसके शरीर की कांति नील-मणि के समान है तथा वे दस मुख और दस पैरों से युक्त है। १। मैं कमलासन पर बैठी हुई प्रसन्न मुखवाली महिषासुर मर्दिनी महालक्ष्मी का भजन करता हूं, जो अपने हाथ में अक्षमाला

घनान्तविलसच्छीतांशुतुल्यप्रभाम् ॥ गौरीदेहसमुद्भवां त्रिजगतामाधारभूतां महा पूर्वामत्र सरस्वतीमनुभजे शुम्भादिदैत्यार्दिनीम् ॥ ३ ॥

फरसा, गदा, बाण, वज्र, पद्म, धनुष, कुण्डिका, दण्ड, शक्ति, खड्ग, ढाल, शंखी, घण्टा, मधुपात्र शूल, पाश और चक्र धारण करती हैं ॥२॥ जिनके हाथों में घण्टा, शूल, हल, शंख, मूसल, चक्र, धनुष और बाण हैं और शरद ऋतु के शोभा सम्पन्न चन्द्रमा के समान मनोहर जिनकी कान्ति है, जो तीनों लोकों की आधारभूता और शुम्भादि दैत्यों को नाश करने वाली हैं तथा गौरी के शरीर से जो प्रकट हुई हैं, मैं उन महासरस्वती देवी का भजन करता हूं ॥३॥

## ॥ अथ माला पूजनम् ॥

नीचे लिखे मन्त्र से माला की पूजा करे।

ऐं ह्रीं अक्षमालिकायै नमः

नीचे लिखे मन्त्र से प्रार्थना करे ।

ॐ मां माले महामाये सर्व शक्ति स्वरूपिणि ।
चतुर्वर्गस्त्वयि न्यस्तस्तस्मान्मे सिद्धिदा भव ॥
ॐ अविघ्नं कुरु माले त्वं गृह्णामि दक्षिणे करे ।
जपकाले च सिद्ध्यर्थं प्रसीद मम सिद्धये ॥

नीचे लिखे मन्त्र से दाहिने हाथ में माला को ग्रहण करके मन्त्र के देवता सविता का ध्यान करता हुआ हृदय में नवार्ण मन्त्र का १०८ वार जप करे ।

ॐ अक्षमालाधिपतये सुसिद्धिं देहि देहि सर्वमन्त्रार्थसाधिनि साधय साधय सर्वसिद्धिं परिकल्पय मे स्वाहा ।

अर्थात हे महामाये ! सर्व शक्ति रूप धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष तेरे ही अधीन हैं इससे मुझे सिद्धि की दाता हो ।

इस प्रकार प्रार्थना करके जप आरम्भ करे।

## नवार्ण मन्त्र

ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे

नीचे लिखे मन्त्र को पढ़कर देवी के वाम हस्त में निवेदन करे।

गुह्यातिगुह्यगोप्त्री त्वं गृहाणास्मत्कृतं जपम्।
सिद्धिर्भवतु मे देवि त्वत्प्रसादान्महेश्वरि॥

तत्पश्चात् फिर नीचे लिखे अनुसार न्यास करे।

## करन्यासः

ओं ह्रीं अङ्गुष्ठाभ्यां नमः। ओं चं तर्जनीभ्यां नमः।
ओं डिं मध्यमाभ्यां नमः। ओं कां अनामिकाभ्यां नमः।
ओं यैं कनिष्ठिकाभ्यां नमः। ओं ह्रीं चण्डिकायै करतल करपृष्ठाभ्यां नमः।

# हृदयादि न्यासः

ओं खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा । शङ्खिनी चापिनी बाणा भुशुण्डी परिघायुधा ॥ हृदयाय नमः । ओं शूलेन पाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके । घण्टा स्वनेन नः पाहि चापज्यानिःस्वनेन च ॥ शिरसे स्वाहा ॥ ओं प्राच्यां रक्ष प्रतीच्यां च चण्डिके रक्ष दक्षिणे । भ्रामणेनात्मशूलस्य उत्तरस्यां तथेश्वरि ॥ शिखायै वषट् ॥ ओं सौम्यानि यानि रूपाणि त्रैलोक्ये विचरन्ति ते । यानि चात्यर्थ घोराणि तै रक्षास्मांस्तथा भुवम् ॥ कवचाय हुम् ॥

ओं खड्ग शूल गदादीनि यानि चास्त्राणि तेऽम्बिके ।
करपल्लव सङ्गीनि तैरस्मान् रक्ष सर्वतः ॥ नेत्रत्रयाय वौषट् ।
ओं सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते । भयेभ्यस्त्राहि
नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तुते ॥ अस्त्राय फट् ॥

## ध्यानम्

ॐ विद्युद्दामसमप्रभां मृगपतिस्कन्धस्थितां भीषणां
कन्याभिः करवालखेटविलसद्धस्ताभिरासेविताम् ।
हस्तैश्चक्रगदासिखेट विशिखांश्चापं गुणं तर्जनीं
बिभ्राणामनलात्मिकां शशिधरां दुर्गां त्रिनेत्रां भजे ॥

# अथ ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तम्

ओं अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चराम्याहमदित्यैरुत विश्वदेवैः ॥ अहं मित्रावरुणो-भा बिभर्म्यहमिन्द्राग्नी अहमश्विनोभा ॥ १ ॥ अहं सोममाहनसं बिभर्म्यहं त्वष्टारमुत पूषणं भगम् । अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते ॥२॥ अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् ॥ तां मा देवा व्यदधुः पुरुत्रा भूरिस्थात्रां भूर्यावेशयन्तीम् ॥३॥ मया सो अन्नमत्ति यो विपश्यति यः प्राणिति य ईं शृणोत्युक्तम् । अमन्तवो मां त उप क्षियन्ति श्रुधि श्रुत श्रद्धिवं ते वदामि ॥ ४ ॥ अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवेभिरुत मानुषेभिः । यं कामये तं तमुग्रं कृणोमि तं ब्रह्माणं तमृषिं तं सुमेधाम् ॥५॥ अहं रुद्राय धनुरा तनोमि ब्रह्मद्विषे शरवे हन्तवा उ । अहं जनाय समदं

कृणोम्यहं द्यावापृथिवि आ विवेश ॥६॥ अहं सुवे पितरमस्य मूर्द्धन्मम योनिरप्स्वन्त समुद्रे। ततो वि तिष्ठे भुवनानु विश्वोतामूं द्यां वर्ष्मणोपस्पृशामि ॥७॥ अहमेव वात इव प्रवाम्यारभमाणा भुवनानि विश्वा। परो दिवा पर एना पृथिव्यैतावती महिमा संबभूव ॥ ८ ॥

इति ऋग्वेदोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम्।

मैं सच्चिदानन्द स्वरूपा सर्वात्मभूता देवी, रुद्र, वसु, आदित्य तथा विश्वेदेव गणों के स्वरूप में बिहार करती हूं। मित्र और वरुण, इन्द्र और अग्नि, तथा अश्विनी कुमार युगल को भी मैं ही धारण करती हूं ॥१॥ शत्रु हन्ता आकाशचारी सोम देव को, त्वष्टा नामक प्रजापति को, तथा भूपा और भग को मैं ने ही धारण किया हुआ है। जो हविष्यान्न से परिपूर्ण हो देवताओं को श्रेष्ठ हविष्य पहुंचाता है, तथा सोम रस से सन्तुष्ट करता है, उस यजमान को उत्तम यज्ञ के फल और धन प्रदान कराने वाली मैं ही हूं ॥२॥ सारे संसार

की नियन्ता, उपासकों को धन देने वाली, साक्षात्कार के योग्य, पर ब्रह्म को अपृथक् रूपमें जानने वाली पूज्य देवताओं की अग्रगण्या मैं हूं, मैं प्रपञ्च रूप से विविधस्थितियों में स्थित हूं। सर्व भूत मेरा अधिष्ठान है। सब देवता हर व्यवस्था में सब कुछ मेरे लिए करते हैं ॥३॥ भोक्त शक्ति होने के कारण सब अन्नादि मेरी शक्ति से खाते हैं, प्राणीमात्र मेरी शक्ति से ही देखते, सांस लेते तथा कही बात को सुनते हैं। मुझे इस रूप में न जानने वाले मनुष्य ही दुःख के भाजन तथा अवनति को प्राप्त होते हैं। हे बहुश्रुत! मैं तुम्हें श्रद्धा से प्राप्य ब्रह्म तत्त्व का उपदेश करती हूं, सुनो ॥४॥ मैं देवता और मनुष्यों द्वारा सेवित इस दुर्लभ तत्त्व का वर्णन करती हूं। जिस २ पुरुष को मैं मन से चाहूं उस को सब की अपेक्षा बलशाली बना देती हूं। तथा इसी को सृष्टिकर्ता ब्रह्मा, परोक्ष ज्ञान से युक्त ऋषि तथा उत्तम मेधा-शक्ति से युक्त बनाती हूं ॥५॥ ब्रह्म शत्रु, हिंसक राक्षसों को मारने के लिये रुद्र के धनुष को चढ़ाती हूं। शरणागत प्राणियों के रक्षणार्थ शत्रुओं से युद्ध करने वाली मैं हूं,। तथा अन्तर्ध्यान रूप से पृथ्वी और आकाश को व्याप्त मैं ही करती हूं ॥६॥ मैं ही संसार के

जनक रूप आकाश को सर्वोपरि सर्वाधिष्ठान स्वरूप परमात्मा के ऊपर उत्पन्न करती हूं। सागर में तथा जल में मेरे कारण ( कारण स्वरूप चैतन्य ब्रह्म ) की स्थिति है, अत एव मैं सर्वत्र व्याप्त हूं तथा उस स्वर्ग लोक का स्पर्श भी अपने शरीर से करती हूं ॥७॥ कारण रूप से जब सम्पूर्ण संसार की रचना आरम्भ करती हूं, तब किसी की प्रेरणा के बिना स्वयमेव पवन की भांति चलती हूं। अर्थात् स्वच्छन्द कार्य में संतान होती हूं। मैं पृथ्वी और आकाश से परे हूं। मैं अपनी शक्ति से ऐसी बन गई हूं ॥८॥

---

# अथ तन्त्रोक्तं देवीसूक्तम्

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः। नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥ १ ॥ रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्य

*इस का अर्थ पञ्चमाध्याय में देखें।

धात्र्यै नमोनमः। ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः॥ २॥
कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमोनमः। नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै
शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥३॥ दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥४॥ अतिसौम्यातिरौद्रायै
नतास्तस्यै नमोनमः। नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमोनमः॥ ५॥
या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमो नमः ॥ ६॥ या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते। नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥७॥ या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥ ८॥ या देवी सर्वभूतेषु
निद्रारूपेण संस्थिता। नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः

॥९॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमोनमः ॥१०॥ या देवी सर्वभूतेषु छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमोनमः ॥११॥ या देवी सर्वभूतेषु शक्ति-
रूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१२॥ या
देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
नमः ॥१३॥ या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु जाति रूपेण
संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१५॥ या देवी
सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिाता नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः
॥१६॥ या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै

नमस्तस्यै नमो नमः ॥१७॥ या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ १८॥ या देवी सर्वभूतेषु
कान्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१९॥ या
देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
नमः ॥ २० ॥ या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २१ ॥ या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २२ ॥ या देवी सर्वभूतेषु
दयारूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २३ ॥ या
देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो
नमः ॥ २४ ॥ या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता । नमस्तस्यै नमस्तस्यै

नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २५ ॥ या देवी सर्वभूतेषु भ्रांतिरूपेण संस्थिता !
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २६ ॥ इंद्रियाणामधिष्ठात्री
भूतानां चाखिलेषु या । भूतेषु सततं तस्यै व्याप्ति देव्यै नमो नमः ॥ २७ ॥
चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत् । नमस्तस्यै नमस्तस्यै
नमस्तस्यै नमो नमः ॥ २८ ॥ स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रयात्तथा सुरेन्द्रेण
दिनेषु सेविता । करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी शुभानि भद्राण्यभिहन्तु
चापदः ॥ २९ ॥ या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितै रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥ ३० ॥

। इति तन्त्रोक्तं देवीसूक्तं समाप्तम्

# अथ प्राधानिकं रहस्यम्

## ॥ राजोवाच ॥

भगवन्नवतारा मे चण्डिकायास्त्वयोदिताः । एतेषां प्रकृतिं ब्रह्मन्प्रधानं वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ आराध्यं यन्मया देव्याः स्वरूपं येन च द्विज । विधिना ब्रूहि सकलं यथावत्प्रणतस्य मे ॥ २ ॥

राजा बोला। हे भगवन् ! आपने चण्डिका के अवतारों का वर्णन तो कर दिया अब उन का मुख्य स्वरूप भी कहिये ॥१॥ हे महाराज ! मुझे देवी के जिस स्वरूप की और जिस विधि से आराधना करनी चाहिये वह सब मुझ विनीत से कहिये ॥२॥

ऋषि बोले ! यह रहस्य परमगोपनीय है। परन्तु तू भक्त है इसलिये तुमसे इसको कहता हूं ॥ ३ ॥ सब की आदि कारण, सत्व, रज, तम तीन गुणों वाली महा लक्ष्मी परमेश्वरी

## ऋषिरुवाच

इदं रहस्यं परममनाख्येयं प्रचक्षते । भक्तोऽसीति न मे किंचित्तवावाच्यं नराधिप ॥ ३ ॥ सर्वस्याद्या महालक्ष्मी स्त्रिगुणा परमेश्वरी । लक्ष्यालक्ष्यस्वरूपा सा व्याप्यकृत्स्नं व्यवस्थिता ॥ ४ ॥ मातुलिङ्गं गदां खेटं पानपात्रं च बिभ्रति । नागं लिङ्गं च योनिं च बिभ्रती नृप मूर्द्धनि ॥ ५ ॥ तप्तकाञ्च-

लक्ष्य (स्थूल) अलक्ष्य (सूक्ष्म) रूपों वाली सारे संसार में व्याप्त हो रही है ॥४॥ हे राजन् वह हाथों में मातुलिंग, गदा, खेट तथा पात्र और शिर पर नाग, लिंग और योनि धारण

किए हुए है ॥५॥ तपाये हुए सुवर्ण के समान उसकी कान्ति है और तपाए हुए सोनेके ही आभूषण धारण कर रही है तथा अपने तेज से सारा आकाश परिपूर्ण कर रही है ॥६॥ उस परमेश्वरी ने सम्पूर्ण

नवर्णाभा तप्तकाञ्चनभूषणा । शून्यं तदखिलं स्वेन पूरयामास तेजसा ॥ ६ ॥ शून्यं तदखिलं लोकं विलोक्य परमेश्वरी । बभार परमं रूपं तमसा केवलेन हि ॥ ७ ॥ सा भिन्नाञ्जन-संकाशा दंष्ट्रांकितवरानना । विशाललोचना नारी बभूव तनुमध्यमा ॥ ८ ॥ खड्ग पात्रशिरः खेटैरलंकृतचतुर्भुजा । कबन्धहारं शिरसा बिभ्राणाऽहिशिरःस्रजम् ॥ ९ ॥

जगत् को शून्य देख कर केवल तमोगुण रूप से एक अन्य रूप धारण किया ॥७॥ वह काजल के रंगके समान कान्तिमान्, बड़े दांतों से युक्त मुख वाली, विशाल नेत्र तथा मध्यम शरीर की स्त्री हुई ॥८॥

ढाल, तलवार पात्र और कटे हुए शरीर से शोभित, चार भुजावाली और कबन्ध (धड़) का हार तथा मुण्डों की माला धारण किये हुए थी ॥९॥ उस उत्तम तामसी देवी ने महालक्ष्मी को नमस्कार करके कहा कि मेरा नाम तथा कर्म मुझे बताओ ॥१०॥ महालक्ष्मी ने उस उत्तम तामसी से कहा कि मैं

सा प्रोवाच महालक्ष्मीं तामसी प्रमदोत्तमाम् । नाम कर्म च मे मातर्देहि तुभ्यं नमो नमः ॥ १० ॥ तां प्रोवाच महालक्ष्मी स्तामसीं प्रमदोत्तमाम् । ददामि तव नामानि यानि कर्माणि तानि ते ॥ ११ ॥ महामाया महाकाली महामारी क्षुधा तृषा । निद्रा तृष्णा चैकवीरा कालरात्रिर्दुरत्यया ॥ १२ ॥

तुम्हें नाम प्रदान करती हूं और तुम्हारे कार्य भी बतलाती हूं ॥११॥ महामाया, महाकाली, महामारी क्षुधा, तृषा, निद्रा, तृष्णा, एकवीरा, कालरात्री और दुरत्यया ॥ १२ ॥ यह तुम्हारे नाम, हैं, जो कर्म अनुसार हैं। जो मनुष्य इन नामों से तुम्हारे कर्मों को जानकर पाठ करता है वह

सुख भोगता है ॥१३॥ उससे ऐसा कह कर महालक्ष्मी ने दूसरा रूप अत्यन्त शुद्ध सत्त्व गुण से चन्द्रमा के समान तेजवान धारण किया ॥१४॥ वह श्रेष्ठ नारी अक्षमाला, अंकुश, वीणा

इमानि तव नामानि प्रतिपाद्यानि कर्मभिः । एभिः कर्माणी ते ज्ञात्वा योऽधीते सोऽश्नुते सुखम् ॥ १३ ॥ तामित्युक्त्वा महालक्ष्मीः स्वरूपमपरं नृप । सत्त्वाख्येनातिशुद्धेन गुणेनेन्दुप्रभं दधौ ॥ १४ ॥ अक्षमालांकुशधरा वीणा-पुस्तक धारिणी । सा बभूव वरा नारी नामान्यस्यै च सा ददौ ॥ १५ ॥ महाविद्या महावाणी भारती वाक्सरस्वती ।

तथा पुस्तक धारण किए हुए थी, महालक्ष्मी ने उसे भी नाम प्रदान किया ॥१५॥ महाविद्या, महावाणी, भारती, वाक्, सरस्वती, आर्या, ब्राह्मी, कामधेनु, वेदगर्भा, धीश्वरी

॥१६॥ नाम रखकर महालक्ष्मी ने महाकाली और सरस्वती से कहा-कि हे देवियो-तुम दोनों अपने अपने गुणों के योग्य स्त्री और पुरुष के जोड़े उत्पन्न करो ॥१७॥ यह कहकर महालक्ष्मीने

आर्या ब्राह्मी कामधेनुर्वेदगर्भा चा धीश्वरी ॥ १६ ॥ अथोवाच महालक्ष्मीर्महाकालीं सरस्वतीम् । युवा जनयतां देव्यौ मिथुने स्वानुरूपतः ॥ १७ इत्युक्त्वा ते महालक्ष्मीः ससर्ज मिथुनं स्वयम् । हिरण्यगर्भौ रुचिरौ स्त्रीपुंसौ कमलासनौ ॥ १८ ॥ ब्रह्मन्विधे विरञ्चेति धातरित्याह तं नरम् । श्रीः पद्मे कमले लक्ष्मीत्याह माता च तां स्त्रियाम् ॥ १९ ॥

स्वयं कमल के आसनपर विराजमान सुन्दर तथा प्रकाशमान स्त्री पुरुषका जोड़ा उत्पन्न किया ॥१८॥ उस पुरुष को ब्रह्मन्, विधे, वरंच तथा धातः कहकर सम्बोधित किया तथा उस स्त्री को श्री, पद्मे,

लक्ष्मी, माता कहा ॥१६॥ महाकाली सरस्वती ने भी स्त्री-पुरुष के जोड़े उत्पन्न किये। जिनके नाम और रूप भी तुझसे कहता हूं ॥२०॥ महाकाली ने नील कण्ठ, लाल भुजा, श्वेतशरीर

महाकाली भारती च मिथुने सृजतः सह। एतयोरपि रूपाणि नामानि च वदामि ते ॥ २० ॥ नीलकण्ठं रक्तबाहुं श्वेताङ्गं चन्द्रशेखरम्। जनयामास पुरुषं महाकाली सितां स्त्रियम् ॥ २१ ॥ स रुद्रः शङ्करः स्थाणुः कपर्दी च त्रिलो-चनः। त्रयी विद्या कामधेनुः सा स्त्री भाषाक्षरा स्वरा ॥ २२ ॥ सरस्वती स्त्रियं गौरीं कृष्णं च पुरुषं नृप। जनयामास

तथा मस्तक पर चन्द्रमा का मुकुट धारण किये पुरुष कों और गौर वर्ण स्त्री को उत्पन्न किया ॥२१॥ वह पुरुष रुद्र, शंकर, स्थाणु, कपर्दी त्रिलोचन के नाम से प्रसिद्ध हुआ तथा स्त्री, के त्रयी विद्या, कामधेनु

भाषा, अक्षरा और स्वरा यह नाम रखे ॥२२॥ राजन् ! सरस्वती ने गौर वर्ण स्त्री तथा श्याम रंग के पुरुष को प्रकट किया । उनके नाम भी मैं तुझ से कहता हूं ॥२३॥ विष्णु, कृष्ण,हृषिकेश,

नामानि तयोरपि वदामि ते ॥ २३ ॥ विष्णुः कृष्णो हृषी-केशो वासुदेवो जनार्दनः । उमा गौरी सती चण्डी सुन्दरी सुभगा शिवा ॥ २४ ॥ एवं युवतयः सद्यः पुरुषत्वं प्रपेदिरे । चक्षुष्मन्तोऽनुपश्यन्ति नेतरे तद्विदो जनाः ॥ २५ ॥ ब्रह्मणे प्रददौ पत्नीं महालक्ष्मीर्नृप त्रयीम् । रुद्राय गौरीं वरदां वासुदेवाय च श्रियम् ॥ २६ ॥ स्वरया सह संभूय

वासुदेव और जनार्दन पुरुष के तथा उमा, गौरी, सती, चण्डी, सुन्दरी, सुभगा, शिवा स्त्री के नाम रखे ॥२४॥ इस प्रकार वह तीनों स्त्रियां तत्काल पुरुषत्व को प्राप्त हो गई, ज्ञान नेत्र

वाले पुरुष ही इस रहस्य को जानते हैं दूसरे जन नहीं ॥ २५॥ हे राजन् ! महालक्ष्मी ने त्रयी विद्या रूपा सरस्वती को ब्रह्मा केलिये रुद्रको वर देने वाली गौरी और वासुदेव को लक्ष्मी पत्नी रूप में दी

विरञ्चोऽण्डमजीजनत् । बिभेद भगवान् रुद्रस्तद् गौर्या सह वीर्यवान् ॥ २७ ॥ अण्डमध्ये प्रधानादि कार्यजातम-भून्नृप । महाभूतात्मकं सर्वं जगत्स्थावरजङ्गमम् ॥ २८ ॥ पुपोष पालयामास तल्लक्ष्म्या सह केशवः । संजहार जगत्सर्वं सह गौर्या महेश्वरः ॥ २९ ॥ महालक्ष्मीर्महाराज सर्वसत्त्वमयीश्वरी । निराकारा च साकारा सैव नाना-

।२६। ब्रह्मा ने स्वरा के साथ मिलकर ब्रह्माण्ड उत्पन्न किया और शक्तिशाली भगवान् रुद्र ने गौरी के साथ मिलकर उसका भेदन किया ।।२७। हे राजन् ! संसार में चर अचर महाभूतात्म जो भी कार्य

हुआ। वह सब इसी ब्रह्माण्ड से उत्पन्न हुआ ।२८। विष्णु लक्ष्मी के साथ उसको पालन और पोषण करते हैं और महादेव गौरी के साथ सारे जगत् का संहार करते हैं ।।२९।। हे महाराज! महालक्ष्मी ही सर्व सत्वमयी और ईश्वरीय है। वह निराकार भी हैं और साकार भी तथा अनेक

भिधानभृत् ॥ ३० ॥ नामान्तरैर्निरूप्यैषा नाम्ना नान्येन केनचित् ॥ ॐ ॥ ३१ ॥

नामों से पुकारी जाती है ।।३०।। महालक्ष्मी का वर्णन तथा ज्ञान इन नामों द्वारा ही होता है अन्य किसी साधन से नहीं ।।३१।।

।। इति प्राधानिकं रहस्यं सम्पूर्णम् ।।

# अथ वैकृतिकं रहस्यम्

## ऋषिरुवाच

ॐ त्रिगुणा तामसी देवी सात्त्विकी या त्रिधोदिता । सा शर्वा चण्डिका दुर्गा भद्रा भगवतीर्यते ॥ १ ॥ योग निद्रा हरेरुक्ता महाकाली तमोगुणा । मधुकैटभनाशार्थं यां तुष्टा-

ऋषि बोले । हमने जो तीन गुण वाली तामसी देवी तथा तीन भेद से सात्विकी देवी कही वे ही शर्वा, चण्डिका, दुर्गा, भद्रा और भगवती नाम से कहाती हैं ॥१॥ तमोगुणवाली महाकाली विष्णु भगवान् की योगनिद्रा कही जाती है जिस की स्तुति ब्रह्मा ने मधुकैटभ के नाश के लिए की थी ॥२॥ जो दश मुख, दश भुजायें, दश पैर तथा काजल समान वर्णवाली विशाल

तीस नेत्रों की माला से शोभायमान है ।३।। जिसके देदीप्यमान दांत और दाढ़ तथा भयंकर रूप वह महालक्ष्मी में रूप सौभाग्य और कांति की प्रतिष्ठा से हो कर स्थित है ।।४।। खड्ग

वाम्बुजासनः ॥ २ ॥ दशवक्त्रा दशभुजा दशपादाञ्जन-प्रभा । विशालया राजमाना त्रिंशल्लोचनमालया ॥ ३ ॥ स्फुरद्दशनदंष्ट्रा सा भीमरूपापि भूमिप । रूपसौभाग्यकान्तीनां सा प्रतिष्ठा महाश्रियः ॥ ४ ॥ खड्गबाणगदाशूल चक्रशंख भुशुण्डि भृत् । परिघं कार्मुकं शीर्षं निश्च्योतद्रुधिरं दधौ ॥ ५ ॥ एषा सा वैष्णवी माया महाकाली दुरत्यया । आराधिता

बाण, गदा, शूल, शंख, चक्र, भुशुण्डी, परिघ, धनुष और रुधिर टपकता हुआ शिर धारण करती है ।।५।। यह दुरत्या महाकाली भगवान् विष्णु की माया है जो प्रसन्न होकर चराचर

जगत् को उपासक के वश में कर देती है ।।६।। जो सब देवों के शरीर से प्रकट हुई यह अनुपम कांति वाली त्रिगुणा महालक्ष्मी साक्षात् महिष मर्दिनी है ।।७।। जिस के श्वेत

वशीकुर्यात्पूजाकर्तुश्चराचरम् ॥ ६ ॥ सर्वदेवशरीरेभ्यो याऽऽविर्भूताऽमितप्रभा । त्रिगुणा सा महालक्ष्मीः साक्षान्महिषमर्दिनी ॥ ७ ॥ श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला । रक्तमध्या रक्तपादा नीलजंघोरुरुन्मदा ॥ ८ ॥ सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा । चित्रानुलेपना कांतिरूपसौभाग्यशालिनी ॥ ९ ॥ अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती ।

मुख, नील भुजा, श्वेत स्तन मण्डल, रक्त पैर, नीली जंघा, उत्कट मद-पिण्डली वाली ।।८।। चित्र विचित्र जघन वाली तथा चित्र विचित्र माला, वस्त्र और आभूषण धारण

करती है जो विचित्र अनुलेपन से युक्त तथा कांतिरूप और सौभाग्य शीला है ॥९॥ वह पूजन करने योग्य सती अठारह भुजा वाली और सहस्र भुजा वाली है आगे क्रम से उस के दायें बायें हाथों के शस्त्रों का वर्णन करते हैं ॥१०॥ अक्षमाला, कमल, बाण, तलवार, बज्र,

आयुधान्यत्र वक्ष्यन्ते दक्षिणाधः करक्रमात् ॥ १० ॥ अक्षमाला च कमलं बाणोऽसिः कुलिशं गदा । चक्रं त्रिशूलं परशुः शंखो घण्टा च पाशकः ॥ ११ ॥ शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः अलंकृतभुजामेभिरायुधैः कमलासनाम् ॥ १२ ॥ सर्वदेवमयीमीशां महालक्ष्मीमिमां नृप । पूजयेत्सर्व-

गदा, चक्र, त्रिशूल, परशु, शंख, घण्टा फांसी ॥११॥ शक्ति, दण्ड, ढाल, धनुष, पान, पात्र, कमण्डलु, इन आयुधों से अलंकृत भुजाओं वाली कमलासन पर विराजमान हैं ॥१२॥ इस सर्व देव मयी ईश्वरी महालक्ष्मी की जो मनुष्य पूजा करता है वह सब मनुष्यों और देवों का

स्वामी होता है ॥१३॥ जो गौरी के देह से उत्पन्न हुई तथा केवल सतो गुण के आश्रय करती है वह शुम्भासुर को मारने वाली साक्षात् सरस्वती है ॥१४॥ हे राजन्! वह अपनी

लोकानां स देवानां प्रभुर्भवेत् ॥ १३ ॥ गौरीदेहात्समुद्भुता या सत्वैकगुणाश्रया । साक्षात्सरस्वती प्रोक्ता शुम्भासुर-निबर्हिणी ॥ १४ ॥ दधौ चाष्टभुजा बाणमुसले शूलचक्रभृत् । शंखं घण्टां च लाङ्गूलं कार्मुकं वसुधाधिप ॥ १५ ॥ एषा संपूजिता भक्त्या सर्वज्ञत्वं प्रयच्छति । निशुम्भमर्थिनी देवी शुम्भासुरनिबर्हिणी ॥ १६ ॥ इत्युक्तानि स्वरूपाणि मूर्तीनां

आठ भुजाओं में बाण मुसल, शूल, चक्र, शंख, घण्टा हल तथा धनुष धारण करती है ॥१५॥ यह शुम्भ और निशुम्भ को मारने वाली भक्ति पूर्वक करने पर सर्वज्ञ बना देती

है ॥१६॥ हे राजन् ! देवी के ये स्वरूप तुझ से कहे अब जगन्माता की और इनकी उपासना अलग अलग सुनिये ॥१७॥ जब लक्ष्मी का पूजन करे तो दक्षिण और उत्तर में क्रम से महाकाली और महा सरस्वती का पूजन करे तथा पीछे की

तव पार्थिव । उपासनं जगन्मातुः पृथगासां निशामय ॥ १७ ॥
महालक्ष्मीर्यदा पूज्या महाकाली सरस्वती । दक्षिणोत्तरयोः पूज्ये पृष्ठतो मिथुनत्रयम् ॥ १८ ॥ विरञ्चिः स्वरया मध्ये रुद्रो गौर्या च दक्षिणे । वामे लक्ष्म्या हृषिकेशः पुरतो देवतात्रयम् ॥ १९ ॥ अष्टादशभुजा मध्ये वामे चास्या दशानना ।

और तीनों का पूजन करना चाहिये ॥१८॥ सरस्वती के साथ ब्रह्मा का मध्य में, गौरी के साथ रुद्र का दक्षिण में लक्ष्मी के साथ विष्णु का उत्तर में, और आगे तीनों का पूजन करे ॥१९॥ मध्य में अर्थात् महालक्ष्मी के सन्मुख अष्टादश भुजा वाली लक्ष्मी का, वाम

भाग में दश मुखों वाली महाकाली का तथा दक्षिण भाग में अष्टभुजी महा सरस्वती का पूजन करना चाहिये ॥२०॥ हे राजन् ! यदि केवल अष्टादश भुजा वाली महालक्ष्मी का या

दक्षिणेऽष्टभुजा लक्ष्मीर्महतीति समर्चयेत् ॥ २० ॥ अष्टादश-भुजा चैषा यदा पूज्या नराधिप । दशानना चाष्टभुजा दक्षिणोत्तरयोस्तदा ॥ २१ ॥ कालमृत्यू च सम्पूज्यौ सर्वारिष्ट-प्रशान्तये । यदा चाष्टभुजा पूज्या शुम्भासुरनिवर्हिणी ॥ २२ ॥ नवास्याः शक्तयः *पूज्यास्तदा रुद्रविनायकौ । नमो देव्या

दशमुखी काली, का अष्ट भुजी सरस्वती का पूजन करना हो तो ॥२१॥ सब अरिष्टों की शान्ति के लिये इनके दक्षिण भाग में काल और उत्तर भाग में मृत्यु का पूजन करना चाहिये और (अष्टभुजी के पूजन की दूसरी विधि) जब शुम्भासुर को मारने वाली अष्टभुजी का पूजन करना हो ॥२२॥ तो

*ब्राह्मी, माहेश्वरी, कौमारी, वैष्णवी, वाराही, नारसिंही, ऐंद्री, शिवदूती तथा चामुण्डा ये नौ शक्तियां हैं।

इसकी नौ शक्तियों का और दक्षिण भाग में रुद्र एवं वाम भाग में गणेश का पूजन करे तथा नमोदेव्यै स्तोत्र से महालक्ष्मी की अराधना करे ।२३। देवी के तीन अवतारों के पूजन से उन्हीं अवतारों के

इति स्तोत्रैर्महालक्ष्मीं समर्चयेत् ॥ २३ ॥ अवतारत्रयार्चायां स्तोत्रमन्त्रास्तदाश्रयाः । अष्टादशभुजा चैषा पूज्या महिषमर्दिनी ॥ २४ ॥ महालक्ष्मीर्महाकाली सैव प्रोक्ता सरस्वती । ईश्वरी पुण्यपापानां सर्वलोकमहेश्वरी ॥ २५ ॥ महिषान्तकरी येन पूजिता स जगत्प्रभुः । पूजयेज्जगतां धात्रीं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् ॥ २६ ॥ अर्घ्यादिभिरलङ्कारैर्गन्ध पुष्पैस्तथा-

आश्रित स्तोत्र और मन्त्र से पूजा करे, यह अष्टादश भुजी देवी महिष मर्दिनी पूजने योग्य है ।।२४।। यह ही महालक्ष्मी, महाकाली और महासरस्वती कही जाती है और यह ही पुण्य पापों की स्वामिनी

तथा सारे लोकों की महेश्वरी है ॥२५॥ जिसने महिषासुर के अन्त वाली महालक्ष्मी का पूजन किया है वह ही जगत् का स्वामी है, जगत् के धारण करने वाली तथा भक्तों से प्रेम करने वाली

क्षतैः । धूपैर्दीपैश्च नैवेद्यैर्नानाभक्ष्य समन्वितैः ॥ २७ ॥ रुधिराक्तेन बलिना मांसेन सुरया नृप (बलिमांसादि पूजेयं विप्रवर्ज्या मयेरिता । तेषां किल सुरामांसैर्नोक्ता पूजा नृप क्वचित् ।) प्रणामाचमनीयेन चन्दनेन सुगन्धिना ॥ २८ ॥ सकर्पूरैश्च ताम्बूलैर्भक्तिभावसमन्वितैः । वामभागेऽग्रतो देव्याश्छिन्नशीर्षं महासुरम् ॥ २९ ॥ पूजयेन्महिषं येन प्राप्तं सायुज्यमीशया । दक्षिणे पुरतः सिंहं

चण्डिका का पूजन करना चाहिये ॥२६॥ अर्घ्यादि से, आभूषणों से, गन्ध, पुष्प, अक्षत, धूप,

*जो लोग मांस और मदिरा का व्यवहार करते हैं, उन्हीं लोगों के लिए मांस मदिरा द्वारा पूजन का विधान है। अन्य के लिए नहीं।

दीप, नैवेद्य तथा अनेक विध भक्ष्य पदार्थ ।२७। रक्त सिञ्चित मांस की बलि, मदिरा, प्रणाम आचमन, चन्दन और सुगन्ध ।।२८।। कपूर सहित पान आदि से भक्ति पूर्वक पूजन करना

समग्रं धर्ममीश्वरम् ॥ ३० ॥ वाहनं पूजयेद्देव्या धृतं येन चराचरम् । कुर्याच्च स्तवनं धीमाँस्तस्या एकाग्रमानसः ॥ ३१ ॥ ततः कृताञ्जलिर्भूत्वा स्तुवीत चरितैरिमैः । एकेन वा मध्यमेन नैकेनेतरयोरिह ॥ ३२ ॥ चरितार्धं तु न जपेज्जपञ्छिद्रमवाप्नुयात । प्रदक्षिणानमस्कारान्कृत्वा मूर्ध्नि कृताञ्जलिः ॥ ३३ ॥ क्षमापयेज्जगद्धात्रीं मुहुर्मुहुरतन्द्रितः । प्रतिश्लोकं च

चाहिये ।२९।जो देवी से मोक्ष चाहता हो वह देवी के सामने वाम भाग में महिषासुर का पूजन करे और दक्षिणकी ओर देवी के आगे उन के वाहन सिंहका पूजन करे जो सम्पूर्ण धर्मका प्रतीक और चराचर

को धारण करने वाला है बुद्धिमान मनुष्य एकाग्र मन से उसकी स्तुती करे।३०-३१। पुनःहाथ जोड़कर देवी के इन चरित्रों से स्तुति करे, समयाभाव में यदि कोई एकही चरित्र से स्तुति करना चाहे तो केवल मध्यम चरित्र से स्तुति करे, परन्तु प्रथम व उत्तर के चरित्रों में एक से न करे।३२।आधे चरित्र से स्तुति

जुहुयात्पायसं तिलसर्पिषा ॥ ३४ ॥ जुहुयात्स्तोत्रमन्त्रैर्वा चण्डिकायै शुभं हविः । भूयो नामपदैर्देवीं पूजयेत्सुसमाहितः ॥ ३५ ॥ प्रयतः प्राञ्जलिः प्रह्वः प्रणम्यारोप्य चात्मनि । सुचिरं भावयेदीशां चण्डिकां तन्मयो भवेत् ॥ ३६ ॥ एवं यः पूजयेद्भक्त्या प्रत्यहं परमेश्वरीम् । भुक्त्वा भोगान् यथा

न करे ऐसा करने से जपमें छिद्र हो जाता है हाथ बांध कर नत मस्तक हो प्रदक्षिणा तथा नमस्कार करे इस तरह हाथ जोड़ शिर से नमस्कार करे ।३३। जगत् के धारण करने वाली देवी से प्रमोद रहित

वोकर पुनः पुनः क्षमा मांगे, तिल और घी से प्रत्येक श्लोक के द्वारा हवन करे ।।३४।। अथवा चण्डिका केलिये स्तोत्र के मन्त्रों से पवित्र हविष्य का हवन करे पुनः एकाग्र मनसे नाम और पदों से देवी का पूजनकरे ।३५। फिर निश्चल हो हाथ बांध तथा प्राणों को आत्मा में स्थिर कर बहुत

कामं देवीसायुज्यमाप्नुयात् ।। ३७ ।। यो न पूजयते नित्यं चण्डिकां भक्तवत्सलाम् । भस्मीकृत्यास्य पुण्यानि निर्दहेत्पर. मेश्वरी ।। ३८ ।। तस्मात्पूजय भूपाल सर्वलोकमहेश्वरीम् । यथोक्तेन विधानेन चण्डिकां सुखमाप्स्यसि ।। ३९ ।।

समय तक चण्डिका देवी का ध्यान करता हुआ तन्मय हो जाए ।।३६।। इस प्रकार जो भक्ति भाव से प्रतिदिन परमेश्वरी का पूजन करता है वह यथेष्ट कामनाओं को भोग कर देवी के सायुज्य को पाता है ।।३७। जो मनुष्य भक्त वत्सला चण्डिका की नित्य पूजा नहीं करता

परमेश्वरी उसके पुण्यों को जलाकर भस्म वर देती है ॥३८॥ इसलिये हे राजन्! सब लोकों की महेश्वरी चण्डिका देवी का कथित विधि के अनुसार पूजन करो इससे सुख मिलेगा ॥३९॥

॥ इति वैकृतिकं रहस्यं सम्पूर्णम् ॥

# अथ मूर्त्तिरहस्यम्

## ऋषिरुवाच

ॐ नन्दा भगवती नाम या भविष्यति नन्दजा । स्तुता सा पूजिता भक्त्या वशीकुर्याज्जगत्त्रयम् ॥ १ ॥ कनकोत्तमकान्तिः सा सुकान्तिकनकाम्बरा । देवी कनकवर्णाभा कनकोत्तम-भूषणा ॥ २ ॥ कमलांकुशपाशाब्जैरलंकृतचतुर्भुजा । इन्दिरा कमला लक्ष्मीः सा श्रीरुक्माम्बुजासना ॥ ३ ॥ या रक्तदन्तिका

ऋषि बोले—नन्दा भगवती जिसका नाम है जो नन्द से उत्पन्न होगी, उनकी स्तुति और पूजा करने से तीनों लोक वश में हो जाते हैं ॥१॥ उसकी सुवर्ण के समान उत्तम कांति,

सुवर्ण के समान सुन्दर वस्त्र तथा वर्ण और सुवर्ण के समान उत्तम आभूषण हैं ॥२॥ उसकी चारों भुजा में कमल, अंकुश, पाश और शंख सुशोभित हैं और इन्दिरा, कमला,

नाम देवी प्रोक्ता मयानघ । तस्याः स्वरूपं वक्ष्यामि शृणु सर्वभयापहम् ॥ ४ ॥ रक्ताम्बरा रक्तवर्णा रक्तसर्वाङ्गभूषणा । रक्तायुधा रक्तनेत्रा रक्तकेशातिभीषणा ॥ ५ ॥ रक्ततीक्ष्णनखा रक्तदशना रक्तदन्तिका । पतिं नारीवानुरक्ता देवी भक्तं भजे जनम् ॥ ६ ॥ वसुधेव विशाला सा सुमेरुयुगलस्तनी । दीर्घौ लम्बावतिस्थूलौ तावतीव मनोहरौ ॥ ७ ॥ कर्कशावतिकान्तौ

लक्ष्मी, श्री रुक्मा, कमलासना उसके नाम हैं ॥३॥ हे निष्पाप राजन् ! मैं ने जो रक्त दन्तिका देवी का वर्णन किया है उसका सब भयों के हरने वाला रूप कहता हूं,

सुनो ।।४।। वस्त्र रक्त, वर्ण रक्त, सब अंगों के आभूषण रक्त, आयुध रक्त, केश रक्त, अत्यन्त भयंकर ।।५।। तीक्ष्ण तथा रक्तनख, रक्तदांत वाली रक्तदन्तिका देवी पति की

तौ सर्वानन्दपयोनिधी । भक्तान् सम्पादयेद्देवी सर्वकामदुघौ स्तनौ ॥ ८ ॥ खड्गं पात्रं च मुसलं लाङ्गलं च बिभर्ति सा । आख्याता रक्तचामुण्डा देवी योगेश्वरीति च ॥ ९ ॥ अनया व्याप्तमखिलं जगत्स्थावरजङ्गमम् । इमां यः पूजयेद्भक्त्या स व्याप्नोति चराचरम् ॥ १० ॥ (भुक्त्वा भोगान् यथाकामं देवी सायुज्यमाप्नुयात् ।) अधीते य इमं नित्यं रक्तदन्त्या वपुः स्तवम् । तं सा परिचरेद्देवी पतिं प्रिय-

सुश्रूषा करने वाली नारी के समान भक्तों के अनुकूल रहती है ।।६।। वह पृथ्वी के समान विशाल है सुमेरु के समान उसके दोनों स्तन हैं जो बहुत लम्बे, बहुत स्थूल और अत्यन्त

मनोहर हैं ॥७॥ वे बड़े, कान्तिमान् और सर्वानन्द के समुद्र हैं। देवी अपने भक्तों को सब कामनाओं के दुहने वाले स्तन पिलाती है ॥८॥ खड्ग, पात्र, मुसल और हल धारण करती है, यह देवी रक्त चामुण्डा और योगेश्वरी कही जाती है ॥९॥ इससे चराचर सारा संसार व्यापक है जो इसकी भक्तिभाव से पूजा करता है वह चराचर में व्याप्त होता है ॥१०॥

मिवाङ्गना ॥ ११ ॥ शाकम्भरी नीलवर्णा नीलोत्पलविलोचना । गम्भीरनाभिस्त्रिवलीविभूषिततनूदरी ॥ १२ ॥ सुकर्कशसमोत्तुङ्गवृत्तपीन घनस्तनी । मुष्टिं शिलीमुखापूर्णं कमलं कमलालया ॥ १३ ॥ पुष्पपल्लवमूलादिफलाढ्यं शाकसंचयम् । काम्यानन्तर-

और जो रक्तदन्तिका के शरीर के इस स्तोत्र का नित्य पाठ करता है देवी उसको ऐसा आनन्द रखती है जैसे स्त्री पति को ॥११॥ शाकम्भरी देवी का नीलवर्ण, नीले कमल के समान आंखे, गम्भीर नाभि और त्रिवली से विभूषित सूक्ष्म उदर है ॥१२॥ कठोर, सम,

ऊंचे गोल मोटे और मांसल स्तन हैं, मुष्टि में कमल हैं जिस पर भौंरे गुंजार कर रहे हैं तथा कमल पर भी विराजमान हैं ॥१३॥ पुष्प, पल्लव, मूल और फल से युक्त है उस के शाक को संग्रह कामना करने योग्य, अनेक रसो वाला, क्षुधा, तृषा, मृत्यु और बुढ़ापे को

सैर्युक्तं क्षुत्तृण्मृत्युभयापहम् ॥ १४ ॥ कार्मुकं च स्फुरत्कान्ति बिभ्रति परमेश्वरी । शाकम्भरी शताक्षी सा सैव दुर्गा प्रकीर्तिता ॥ १५ ॥ विशोका दुष्टदमनी शमनी दुरितापदाम् । उमा गौरी सती चण्डी कालिका सा च पार्वती ॥ १६ ॥ शाकम्भरीं स्तुवन् ध्यायञ्जपन् संपूजयन्नमन् । अक्षय्यमश्नुते

दूर करने वाला है ॥१४॥ उस परमेश्वरी ने चमकता हुआ कान्तिमान धनुष धारण किया हुआ है वह शाकम्भरी, शताक्षी और दुर्गा के नाम से पुकारी जाती है ॥१५॥ वही शोक को दूर

करने वाली, दुष्टों का दमन करने वाली तथा विपत्तियों को शांत करने वाली उमा, गौरी सती चण्डी, कालिका और पार्वती है ॥१६॥ शाकम्भरी की स्तुति करने वाला, ध्यान, जप, पूजा और नमस्कार करने वाला शीघ्र ही अक्षय अन्न, पान, अमृत और फल

शीघ्रमन्नपानामृतं फलम् ॥ १७ ॥ भीमापि नीलवर्णा सा दंष्ट्रादशनभासुरा । विशाललोचना नारी वृत्तपीनपयोधरा ॥ १८ ॥ चन्द्रहासं च डमरुं शिरः पात्रं च विभूती । एकवीरा कालरात्रिः सैवोक्ता कामदा स्तुता ॥ १६ ॥ तेजोमण्डल-दुर्धर्षा भ्रामरी चित्रकान्तिभृत् । चित्रानुलेपना देवी चित्रा-

को प्राप्त करता है ॥१७॥ भीमा देवी भी नील वर्ण है उसके दांत-दाड़ बड़े सुन्दर हैं, नेत्र विशाल तथा गोल और स्थूल स्तन हैं ॥१८॥ वह खड्ग, डमरू, शिर पात्र धारण किये हुए

है। उसके एकवीरा, कालरात्रि, कामदा, ॥१६॥ तेजोमण्डलदर्धर्षा, भ्रामरी चित्रकान्ति-भृत, चित्रानुलेपना-चित्राभरणभूषिता, चित्र भ्रमरपाणि, महामारी यह नाम हैं ॥२०॥ हे राजन्

भरणभूषिता ॥ २० ॥ चित्रभ्रमरपाणिः सा महामारीति गीयते । इत्येता मूर्तयो देव्या याः ख्याता वसुधाधिप ॥ २१ ॥ जगन्मातुश्चण्डिकायाः कीर्तिताः कामधेनवः । इदं रहस्यं परमं न वाच्यं कस्यचित्त्वया ॥ २२ ॥ व्याख्यानं दिव्यमूर्तीनामभीष्टफलदायकम् । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन देवीं जप निरन्तरम् ॥ २३ ॥ सप्तजन्मार्जितैर्घोरैर्ब्रह्महत्यासमैरपि । पाठमात्रेण

देवी की मूर्तियां यह कही गई हैं ॥२१॥ ये मूर्तियां जगन्माता चण्डिका की कामधेनु कहलाती हैं हे राजन् यह चरित्र परम गुप्त हैं तुम्हें किसी से न कहना चाहिए ॥२२॥ इन दिव्य मूर्तियों

का चरित्र अभीष्ट फल देने वाला है अतः पूरे प्रयत्न से नित्य उसका जप करो ॥२३॥ इन मन्त्रों का जप करने से सात जन्मों में एकत्र किये हुए ब्रह्महत्या समान घोर पापों से मनुष्य

मन्त्राणां मुच्यते सर्वकिल्बिषैः ॥ २४ ॥ देव्या ध्यानं मयाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं महत् । तस्मात् सर्वप्रयत्नेन सर्वकाम फलप्रदम् ॥ २५ ॥ (एतस्यास्त्वं प्रसादेन सर्वमान्यो भविष्यसि । सर्वरूप मयी देवी सर्वदेवी मयं जगत । अतोऽहं विश्वरूपां तां नमामि परमेश्वरीम् ॥ २६ ॥

छूट जाता है ॥२४॥ देवी का यह परम गुह्य ध्यान मैंने तुझ से कहा, इस लिये मनुष्य एकाग्र मन से ध्यान करके यथेष्ट फल को प्राप्त करता है ॥२५॥ उसके प्रसाद से तुम सर्वमान्य हो जाओगे। देव सर्वरूपमयी है तथा सम्पूर्ण जगत् देवीमय है। अतः मैंउन विश्वरूपा परमेश्वरी को नमस्कार करताहूं।

इति मूर्तिरहस्यं सम्पूर्णम्

# क्षमा-प्रार्थना

अपराध सहस्राणि क्रियन्तेऽहर्निशं मया । दासोऽय-
मिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरी ॥ १ ॥ आवाहनं न जानामि
न जानामि विसर्जनम् । पूजां चैव न जानामि क्षम्यतां
परमेश्वरी ॥ २ ॥ मन्त्रहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरी ।
यत्पूजितं मया देवी परिपूर्णं तदस्तु मे ॥ ३ ॥ सापराधोऽस्मि

परमेश्वरी ! मेरे से रात दिन सहस्र अपराध होते रहते हैं । मुझे अपना दास समझ कर मेरे उन अपराधों को आप कृपा करके क्षमा करो ॥१॥ हे परमेश्वरी ! मैं आवाहन करना नहीं जानता, विसर्जन करना भी नहीं जानता तथा पूजा करने का ढंग भी नहीं जानता, अतः क्षमा करो ॥२॥ हे देवि ! सुरेश्वरी ! मैं मन्त्रहीन, क्रियाहीन और भक्तिहीन हूं अतः जैसे भी मैंने

आप का पूजन किया है व आप की कृपा से पूर्ण हो ॥३॥ हे जगदम्बे । मैं अपराधी आप की शरण में आया हूं । इस समय दया का पात्र हूं । तुम जैसे चाहो ॥४॥ देवि ! परमेश्वरी

शरणं प्राप्तस्त्वां जगदम्बिके । इदानीमनुकम्प्योऽहं यथेच्छसि तथा कुरु ॥ ४ ॥ अज्ञानाद्विस्मृते भ्रान्त्या यन्न्यूनमधिकं कृतम् । तत्सर्वं क्षम्यतां देवि प्रसीद परमेश्वरी ॥ ५ ॥ कामेश्वरी जगन्मातः सच्चिदानन्दविग्रहे । गृहाणार्चामिमां प्रीत्या प्रसीद परमेश्वरि ॥ ६ ॥

अज्ञान से, भूल से अथवा बुद्धिभ्रान्त होने के कारण मैंने जो न्यूनता या अधिकता करदी हो, वह सब क्षमा करो और प्रसन्न होओ ॥५॥ हे सच्चिदानन्द स्वरूपा परमेश्वरी तथा जगन्माता कामेश्वरी ! आप प्रेम पूर्वक मेरी यह पूजा स्वीकार करें और मुझ पर प्रसन्न रहो।

# देव्यपराधक्षमापनस्तोत्रम् ।

न मन्त्रं नो यन्त्रं तदपि च न जाने स्तुतिमहो न चाह्वानं ध्यानं तदपि च न जाने स्तुतिकथा । न जाने मुद्रास्ते तदपि च न जाने विलपनं परं जाने मातस्त्वदनुसरणं क्लेशहरणम् ॥ १ ॥ न मोक्षस्याकाङ्क्षा भवविभववाञ्छापि च न मे न विज्ञानापेक्षा शशिमुखि सुखेच्छापि न पुनः । अतस्त्वां संयाचे जननि जननं यातु मम वै मृडानी रुद्राणी शिव शिव भवानीति जपतः ॥२॥ विधेरज्ञानेन द्रविणविरहेणालसतया विधेयाशक्यत्वात्तव चरणयोर्या च्युतिरभूत ॥ तदेतत्क्षन्तव्यं जननि सकलोद्धारिणि शिवे कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥३॥ जगन्मातर्मातस्तव चरणसेवा न रचिता न वा दत्तं देवि द्रविणमपि भूयस्तव मया ॥ तथापि त्वं स्नेहं मयि निरुपमं यत्प्रकुरुषे कुपुत्रो

जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥४॥ पृथिव्यां पुत्रास्ते जननि बहवः सन्ति सरलाः परं तेषां मध्ये विरलतरलोऽहं तव सुतः ॥ मदीयोऽयं त्यागः समुचितमिदं नो तव शिवे, कुपुत्रो जायेत क्वचिदपि कुमाता न भवति ॥५॥ परित्यक्ता देवा विविधविधसेवाकुलतया, मया पञ्चाशीतेरधिकमपनीते तु वयसि। इदानीं चेन्मातस्तव यदि कृपा नापि भविता निरालम्बो लम्बोदरजननि कं यामि सततम् ॥६॥ श्वपाको जल्पाको भवति मधुपाकोपमगिरा निरातंको रंको विहरति चिरं कोटिकनकैः । तवापर्णे कर्णे विशति मनुवर्णे फलमिदं जनः को जानीते जननि जपनीयं जपविधौ ॥७॥ चिताभस्मालेपो गरलमशनं दिक्पट-धरो जटाधारी कंठे भुजगपतिहारी पशुपतिः । कपाली भूतेशो भजति जगदीशैकपदवीं भवानि त्वत्पाणिग्रहणपरिपाटीफलमिदम् ॥८॥ नाराधितासि

विधिना विपिधोपचारैः किं लक्ष्यसे तव कृतं न मया वचोभिः । श्यामे त्वमेव यदि किञ्चन मय्यनाथे धत्से कृपामुचितमम्ब परं तवैव ॥९॥ आपत्सु मग्नः स्मरणं त्वदीयं करोमि दुर्गे करुणार्णवेशि । नैतच्छठत्वं मम भावयेथाः क्षुधातृषार्ता जननीं स्मरन्ति ॥१०॥ जगदम्ब विचित्रमत्र किं परिपूर्णा करुणास्ति चेन्मयि । अपराध परम्परावृतं न हि माता समुपेक्षते सुतम् ॥११॥ मत्समः पातकी नास्ति पापघ्नी त्वत्समा न हि । एवं ज्ञात्वा महादेवि यथायोग्यं तथा कुरु ॥१२॥

इति देव्यपराधक्षमपनस्तोत्रम्

:—:

# कुञ्जिका स्तोत्रम्

शिव उवाच । श्रृणु देवि प्रवक्ष्यामि कुञ्जिकास्तोत्रमुत्तमम् । येन मन्त्र-प्रभावेण चण्डीजापः शुभो भवेत ॥१॥ न कवचं नार्गलास्तोत्रं कीलकं न रहस्यकम् । न सूक्तं नापि ध्यानं च न न्यासो न वार्चनम् ॥२॥ कुञ्जिका पाठमात्रेण दुर्गापाठफलं लभेत् । अति गुह्यतरं देवि देवानामपि दुर्लभम् ॥३॥ गोपनीयं प्रयत्नेन स्वयोनिरिव पार्वति । मारणं मोहनं वश्यं स्तम्भनोच्चाटनादिकम् ॥४॥ पाठमात्रेण संसिद्धयेत् कुञ्जिका स्तोत्रमुत्तमम् ॥ अथ मन्त्रः ॥ ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे । ॐ ग्लौ हुं क्लीं जूं सः ज्वालय ज्वालय ज्वल ज्वल प्रज्वल प्रज्वल ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे ज्वल हं सं लं क्षं फट् स्वाहा ॥ इति मन्त्रः ॥

नमस्ते रुद्ररूपिण्यै नमस्ते मधुमर्दिनि । नमः कैटभहारिण्यै नमस्ते महिषार्दिनि । नमस्ते शुंभहन्त्र्यै च निशुम्भासुरघातिनि । जाग्रतं हि महादेवि जपं सिद्धं कुरुष्व मे । ऐंकारी सृष्टिरूपायै ह्रींकारी प्रतिपालिका । क्लीं कारी कामरूपिण्यै बीजरूपे नमोस्तु ते । चामुण्डा चण्डघाती च यैकारी वरदायिनी ॥ विच्चे चाभयदा नित्यं नमस्ते मन्त्ररूपिणि । धां धीं धूं धूर्जटेः पत्नी वां वीं वूं वागधीश्वरी । क्रां क्रीं क्रूं कालिका देवि शां शीं शूं मे शुभं कुरु । हुँ हुँ हुँकार रूपिण्यै जं जं जं जम्भ नादिनी भ्रां भ्रीं भ्रूं भैरवी भद्रे भवान्यै ते नमोनमः । अं कं चं टं तं पं यं शं वीं दुं ऐं वीं हं क्षं धिजाग्रं धिजाग्रं त्रोटय त्रोटय दीप्तं कुरु कुरु स्वाहा ।

पां पीं पूं पार्वती पूर्णा खां खीं खूं खेचरी तथा । सां सीं सूं सप्तशती देव्या मन्त्रसिद्धिं कुरुष्व मे । इदं तु कुञ्जिकास्तोत्रं मन्त्रजागर्तिहेतवे । अभक्ते नैव दातव्यं गोपितं रक्ष पार्वति । विहीनां कुञ्जिका देव्या यस्तु सप्तशतीं पठेत् । न तस्य जायते सिद्धिररण्ये रुदितं यथा ॥

इति श्री रुद्रयामले गौरीतन्त्रे कुञ्जिका स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

---

उपर्युक्त कुञ्जिका स्तोत्र का प्रतिदिन पाठ करने से सब प्रकार के विघ्न नष्ट हो जाते हैं। इस कुञ्जिका स्तोत्र तथा देवी सूक्त के सहित सप्तशती पाठ के करने से परम सिद्धि प्राप्त होती हैं।

# काम्य प्रयोग विधि

## ओं गणाधिपतये नमः

और प्रयोगों के लिए कात्यायनी तन्त्र में कहे हुए नीचे लिखे श्लोकों के आदि और अन्त में प्रणव को लगाकर जाप करने से सिद्धि होती है। नीचे हम कुछ मन्त्रों का उल्लेख करते हैं। अपनी अपनी कामना के अनुसार उन श्लोकों का १०० सम्पुट पाठ करने से कामना की शीघ्र सिद्धि होती है। (व्याहृतियों के साथ सम्पुट करना हो तो श्लोक से पहिले व्याहृती को अनुलोम और श्लोक के अन्त में व्याहृति को विलोम की विधि से पाठ करना चाहिए।)

१. अपमृत्युनिवारण के लिए

त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिंपुष्टि वर्धनम् उर्वारुकमिव बन्धनान् मृत्यो मुंक्षीय मामृतात्।

२. शूलेनपाहि नो देवि पाहि खड्गेन चाम्बिके। घराटा स्वनेन न

पाहि चापज्यानिस्वनेन च ।

यदि इस श्लोक से सम्पुट न करें तो केवल इस श्लोक का ही एक लाख जाप करने से अपमृत्यु निवारण होती है।

३. सर्वकार्य सिद्धि तथा विपत्ति नाश के लिए

शरणागतदीनार्त परित्राण परायणे । सर्वस्यार्ति हरे देवि नारायणि नमोस्तु ते । (केवल एक लाख जप करने से भी कार्य सिद्धि हो जाती है।)

४. बाधा शान्ति के लिए

सर्वाबाधा प्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरि विनाशनम् ॥

५. महामारी शान्ति के लिए

इत्थं यदा यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति ।

तदा तदावतीर्याहं करिष्याम्यरिसंक्षयम् ॥

६. पाप नाश के लिए

हिनस्ति दैत्य तेजांसि स्वनेनापूर्य या जगत् ।
सा घण्टा पातु नो देवि पापेभ्योऽनः सुतानिव ॥

७. मोहन के लिये

ज्ञानिनामपि चेतांसि देवि भगवति हि सा । बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति। (इस मन्त्र का एक लाख जाप करने से और दशांश पायस से हवन करने से शीघ्र सिद्धि होती है।)

८. रोग नाश के लिये

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥

(केवल पाठ मात्र से भी इस का फल प्राप्त होता है।)

९. प्रत्येक कार्य सिद्धि के लिये तथा सब प्रकार की विपत्तियों के नाश के लिये।

देवि प्रपन्नार्ति हरे प्रसीद प्रसीद मातर्जगतोऽखिलस्य।
प्रसीद विश्वेश्वरि पाहि विश्वं त्वमीश्वरी देवि चराचरस्य ॥

इस श्लोक का केवल एक लक्ष जाप करने से और श्लोक के अन्त में दीपक के आगे नमस्कार करने से शीघ्र सिद्धि होती है।

१०. भय नाश के लिये।

सर्व स्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्ति समन्विते।
भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोस्तुते।

११. आरोग्य और सौभाग्य के लिये।

देहि सौभाग्यमारोग्यं देहि मे परमं सुखम्।

रूपं देहि जयं देहि यशो देहि द्विषें जहि ॥

१२. बाधा शान्ति के लिए तथा धनपुत्रादि की प्राप्ति के लिए ।

सर्वाबाधाविनिर्मुक्तो धनधान्यसुतान्वितः ॥
मनुष्यो मत्प्रसादेन भविष्यति न संशयः ॥

१३. सब प्रकार के कल्याण के लिये ।

सर्वमङ्गल मङ्गल्ये शिवे सर्वार्थ साधिके ॥
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

१४. लक्ष्मी प्राप्ति के लिए ।

कांसोस्मितां हिरण्य प्राकारामार्द्रां ज्वलन्तीं तृप्तां तर्पयन्तीम् । पद्मे
स्थितां पद्मवर्णां तामिहोपह्वये श्रियम् ॥

# विपत्ति नाशक दुर्गा का ३२ नामों वाला मन्त्र

दुर्गा दुर्गार्ति शमनी दुर्गापद्विनिवारिणी ।
दुर्गमच्छेदिनि दुर्गसाधिनी दुर्गनाशिनी ॥
दुर्गतोद्धारिणी दुर्गनिहन्त्री दुर्गमापहा ।
दुर्गमज्ञानदा दुर्गदैत्य लोकदवानला ॥
दुर्गमा दुर्गमालोका दुर्गमात्मस्वरूपिणी ।
दुर्गमार्गप्रदा दुर्गमविद्या दुर्गमाश्रिता ॥
दुर्गमज्ञानसंस्थाना दुर्गमध्यानभासिनी ।
दुर्गमोहो दुर्गमगा दुर्गमार्थस्वरूपिणी ॥
दुर्गमायुरसंहन्त्री दुर्गमयुधधारिणी ।

दुर्गमाङ्गी दुर्गमता दुर्गम्या दुर्गमेश्वरी ॥
दुर्गभीमा दुर्गभामा दुर्गभा दुर्गदारिणी ।
नामावलिमिमां यस्तु दुर्गया मम मानवः ॥
पठेत् सर्वभयान्मुक्तो भविष्यति न संशयः ॥

जो मनुष्य इस नाम माला का पाठ करता है, वह निस्सन्देह सब प्रकार के भय से मुक्त हो जाता है । इस नाम माला का पुरश्चरण तीस हज़ार का है । पुरश्चरण पूर्वक पाठ करने से कार्यसिद्धि होती है ।

# नवचण्डयादि प्रयोगः

नवरात्रारम्भ के दिन साधक स्नानादि करके पुर्वाभिमुख होकर अपने आसन पर वैठकर अपनी मनोकामना अनुसार संकल्प आदि के उपरान्त अङ्ग न्यासादि करके देवी का ध्यान करे।

## ध्यानम्

श्वेतानना नीलभुजा सुश्वेतस्तनमण्डला। रक्तमध्या रक्तपादा नीलजङ्घोरुरुन्मदा॥ सुचित्रजघना चित्रमाल्याम्बरविभूषणा। चित्रानुलेपना कान्तीरूपसौभाग्यशालिनी॥ अष्टादशभुजा पूज्या सा सहस्रभुजा सती। आयुधान्यत्र वक्षयन्ते दक्षिणाधःकरक्रमात्॥ अक्षमाला च कमलं वाणोऽसिः कुलिशं गदा। चक्रं त्रिशूलं परशुः शङ्खो घण्टा च पाशकः। शक्तिर्दण्डश्चर्म चापं पानपात्रं कमण्डलुः॥ इति ध्यानं कृत्वा मानसोपचारैः सम्पूज्य पत्रासाधनं

कुर्यात् । ततो मध्यवेद्यां सर्वतोभद्रं तन्मध्यकोष्ठेषु अष्टदलं च विलिख्य तत्र ब्रह्मादिमण्डलदेवताः स्वस्वमन्त्रैः संस्थाप्य षोडशोपचारैः सम्पूज्य तन्मध्ये पीठपूजां कुर्यात् । तद्यथा-ओं मण्डूकादिपरतत्त्वान्तपीठदेवताभ्यो नमः इति पीठदेवताः सम्पूज्य पूर्वादिषु-ओं जयायै नमः १ । ओं विजयायै नमः २ । ओं अजितायै नमः ३ । ओं अपराजितायै नमः ४ । ओं नित्यायै नमः ५ । ओं विलासिन्यै नमः ६ । ओं दोग्ध्र्यै नमः ७ । ओं घोरायै नमः ८ । मध्ये-ओं मङ्गलायै नमः ९ । इति पीठशक्तीः पूजयेत् । ओं ह्रीं सर्वशक्तिकमलासनाय सर्वात्मसंसर्गयोगपीठात्मने नमः, इति पुष्पाञ्जलिना आसनं दत्त्वा तत्र 'ओं महीद्यौः' इत्यादिपूर्वोक्तैर्मन्त्रैर्हस्ताम्रकलशं संस्थाप्य तस्मिन् गन्धपुष्पफलसर्वौषधिदूर्वापञ्चपल्लव-पञ्चरत्न-सुवर्णसप्तमृत्तिकानि तत्तन्मन्त्रैः

प्रक्षिप्य कौशेयवस्त्रद्वयेन संवेष्ट्य तदुपरि ताम्रपूर्णपात्रं निधाय कलशे वरुण-मावाह्य सम्पूज्य कलशदेवताः स्मृत्वा 'कलशस्य मुखे विष्णुः' इत्यभिमन्त्र्य देव-दानवसंवादे' इत्यादि प्रार्थयेत्। ततः कलशोपरिस्थपूर्णपात्रे रक्तवस्त्रे अष्टगन्धेन यन्त्रं लिखेत्। अथवा ताम्रपात्रे लिखितं यन्त्रं मूर्त्तौ वा प्रतिष्ठां कृत्वा स्थापयेत। श्री सूक्तेन आवाहनादिपुष्पान्तैरुपचारैः सम्पूज्य आवरणपूजां प्रदक्षिणक्रमेण कुर्यात्। आवरणपूजा--त्रिकोणमध्ये देवीं सम्पूज्य त्रिकोणस्य पूर्वकोणे-ओं सरस्वतीसहिताय ब्रह्मणे नमः १। नैर्ऋत्याम्-ओं श्रीसहिताय विष्णवे नमः २। वायव्याम्-ओं उमासहिताय शिवाय नमः ३। उत्तरे-ओं सिंहाय नमः ४। दक्षिणे-ओं महिषाय नमः ५। इति त्रिकोणदेवताः पूजयेत्। षट्कोणमण्डले पूर्वादिवामक्रमेण पूजयेत्। ओं नं नन्दजायै

नमः १ । ओं रं रक्तदन्तिकायै नमः २ । ओं शां शाकम्भर्यै नमः ३ । ओं दुं दुर्गायै नमः ४ । ओं भीं भीमायै नमः ५ । ओं भ्रां भ्रामर्यै नमः ६ । अष्टदले वामक्रमेण-ओं ब्रां ब्राह्म्यै नमः १ । ओं मां माहेश्वर्यै नमः २ । ओं कौं कौमार्यै नमः ३ । ओं वैं वैष्णव्यै नमः ४ । ओं वां वाराह्यै नमः ५ । ओं नां नारसिंह्यै नमः ६ । ओं ऐं ऐंद्र्यै नमः ७ । ओं चां चामुण्डायै नमः ८ । चतुर्विंशतिदलेष्वपि वामक्रमेण-ओं विं विष्णुमायायै नमः १ । ओं चें चेतनायै नमः २ । ओं बु बुद्ध्यै नमः ३ । ओं निं निद्रायै नमः ४ । ओं क्षुं क्षुधायै नमः ५ । ओं छां छायायै नमः ६ । ओं शं शक्त्यै नमः ७ ओं तृं तृष्णायै नमः ८ । ओं क्षां क्षान्त्यै नमः ९ । ओं जा जात्यै नमः १० । ओं लं लज्जायै नमः ११ ।

ओं शां शान्त्यै नमः १२। ओं श्रं श्रद्धायै नमः १३। ओं कां कान्त्यै नमः १४। ओं लं लक्ष्म्यै नमः १५। ओं धृं धृत्यै नमः १६। ओं वृं वृत्यै नमः १७। ओं श्रुं श्रुत्यै नमः १८। ओं स्मृं स्मृत्यै नमः १९। ओं तुं तुष्ट्यै नमः २०। ओं पुं पुष्ट्यै नमः २१। ओं दं दयायै नमः २२। ओं मां मात्रे नमः २३। ओं भ्रां भ्रान्त्यै नमः २४। बहिर्भूतगृहचतुष्कोणेषु। ऐशान्याम् ओं गं गणपतये नमः १। आग्नेय्याम् -ओं क्षें क्षेत्रपालाय नमः २। नैर्ऋत्याम्-ओं वं वटुकाय नमः ३। वायव्याम्-ओं यों योगिनीभ्यो नमः ४। पुनः पूर्वादिषु प्रदक्षिणक्रमेण -ओं इं इन्द्राय नमः १। ओं रं अग्नये नमः २। ओं यं यमाय नमः ३। ओं क्षं निर्ऋतये नमः ४। ओं वं वरुणाय नमः ५ ओं

वं वायवे नमः ६ । ओं सों सोमाय नमः ७ । ओं रुं रुद्राय नमः ८ । ओं ब्रं ब्रह्मणे नमः ९ । अधः-ओं अं अनन्ताय नमः १० । तद्बाह्ये-ओं वज्राय नमः १ । ओं शक्तये नमः २ । ओं दण्डाय नमः ३ । ओं खड्गाय नमः ४ । ओं पाशाय नमः ५ । ओं अङ्कुशाय नमः ६ । ओं गदायै नमः ७ । ओं त्रिशूलाय नमः ८ । ओं पद्माय नमः ९ । ओं चक्राय नमः १० । अथाङ्गपूजा-ओं दुर्गायै नमः पादौ पूजयामि । ओं गिरिजायै नमः गुल्फौ पूजयामि । ओं अपर्णायै नमः जानुनी पूजयामि । ओं हरिप्रियायै नमः ऊरू पूजयामि । ओं पार्वत्यै नमः कटिं पूजयामि । ओं आर्यायै नमः नाभिं पूजयामि । ओं जगन्मात्रे नमः उदरं पूजयामि । ओं मङ्गलायै नमः कुक्षिंपूजयामि । ओं शिवायै नमः हृदयं

पूजयामि । ओं माहेश्वर्यै नमः कराठं पूजयामि । ओं विश्ववन्द्यै नमः स्कन्धौ पूजयामि । ओं काल्यै नमः बाहू पूजयामि । ओं आद्यायै नमः हस्तौ पूजयामि । ओं वरदायै नमः मुखं पूजयामि । ओं सुवारायै नमः नासिकां पूजयामि । ओं कमलाद्यै नमः नेत्रे पूजयामि । ओं अम्बिकायै नमः शिरः पूजयामि । ओं देव्यै नमः सर्वाङ्गं पूजयामि । ततः तत्तन्मन्त्रै धूपदीपनैवेद्यादिकं समर्प्य महानीराजनं प्रदक्षिणामेकां नमस्कारांश्च कृत्वा यथासम्भवं छत्रचामरादि समर्प्य फलैर्बलिं दत्त्वा अखराडदीपं स्थापयेत् । अथ रक्तवस्त्रोपरि चतुःषष्टिकोष्ठगतेषु अक्षतपुञ्जेषु क्रमेण योगिनीः पूजयेत् । ओं जयायै नमः १ ।जयमावाहयामि ओं जये ! इहागच्छ इह तिष्ठ इत्यावाहयेत् ।एवं ओं विजयायै नमः ० २ । ओं जयन्त्यै नमः ० ३ ।

ओं अपराजितायै नमः ० ४ । ओं दिव्ययोगिन्यै नमः ० ५ । ओं महायोगिन्यै नमः ० ६ । ओं सिद्धयोगिन्यै नमः ० ७। ओं गणेश्वर्यै नमः ० ८। ओं प्रेतासनायै नमः ० ९। ओं डाकिन्यै नमः ० १० । ओं काल्यै नमः ० ११ । ओं कालरात्र्यै नमः ० १२ । ओं निशाचर्यै नमः ० १३ । ओं टङ्कारिण्यैनमः ० १४ । ओं रुद्रवेतालिन्यै नमः ० १५ । ओं हुङ्कारिण्यैनमः ० १६ । ऊर्ध्वकेश्यैनमः ० १७ । ओं विरूपाक्ष्यैनमः ० १८ । ओं शुष्कलाङ्ग्यै नमः ० १९ । ओं नरभोजिन्यै नमः ० २० । ओं फट्कारिण्यै नमः ० २१ । ओं वीरभद्रायै नमः ० २२ । ओं धूमाङ्ग्यै नमः २३ । ओं कलहप्रियायै नमः २४ । ओं राक्षस्यै नमः २५ । ओं विश्वरूपायै नमः २६ । ओं भयङ्कर्य्यै नमः २७। ओं वीरकौमार्य्यै

नमः २८ । ओं चण्डिकायै नमः २९ । ओं वाराह्यै नमः ३० । ओं मुण्डधारिण्यै नमः ३१ । ओं भैरव्यै नमः ३२ । ओं भ्रान्तिरायै नमः ३३ । ओं धूम्राङ्ग्यै नमः ३४ । ओं प्रेतवाराह्यै नमः ३५ । ओं खड्गिन्यै नमः ३६ । ओं दीर्घलम्बौष्ठ्यै नमः ३७ । ओं मालिन्यै नमः ३८ । ओं मन्त्रयोगिन्यै नमः ३९ । ओं कालिन्यै नमः ४० । ओं चक्रिण्यै ४१ । ओं कं काल्यै नमः ४२ । ओं भुवनेश्वर्यै नमः ४३ । ओं शक्त्यै नमः ४४ । ओं महामाय्यै नमः ४५ । ओं यमदूत्यै नमः ४६ ओं करालिन्यै नमः ४७ । ओं केशिन्यै नमः ४८ । ओं मर्दिन्यै नमः ४९ । ओं रोमजङ्घायै नमः ५० । ओं निवारिण्यै नमः ५१ । ओं विशालिन्यै नमः ५२ । ओं कामुक्यै नमः ५३ । ओं लोल्यै नमः ५४ ।

ओं अधोमुख्यै नमः ५५ । ओं मुण्डाग्रधारिण्यै नमः ५६ । ओं व्याघ्र्यै
नमः ५७ । ओं काङ्क्षिण्यै नमः ५८ । ओं प्रेतरूपिण्यै नमः ५९ ।
ओं धूर्जट्यै नमः ६० । ओं घोरायै नमः ६१ । ओं कराल्यै नमः
६२ । ओं विषलम्बिन्यै नमः ६३ । ओं मोहिन्यै नमः ६४ ।
ओं चतुःषष्टियोगिनीभ्यो नमः, इति नाममन्त्रेण सम्पूज्य पायसबलिं
दद्यात् । ततः तत्रैव एकदेशे—'ओं बं बटुकाय नमः । क्षं क्षेत्रपालाय
नमः इति सम्पूज्य-'ओं बं बटुकाय पिङ्गलभासुरनेत्राय बलिं गृहाण
भक्ष भक्ष क्रन्दय क्रन्दय ह्रीं हूं स्वाहा । इति मन्त्रेण बटुकाय
क्षेत्रपालाय पायसादिनानाद्रव्यबलिं दत्वा हस्तौ प्रक्षाल्याचमेत् । ततः अनेन
पूजनेन श्रीमहाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वत्यः प्रीयन्तामिति । ततः आवरण
पूजां कृत्वा धूप दीप नैवेद्यादिकं समर्प्य पूर्वं ध्यानं कृत्वा यथाशक्ति जपं कृत्वा

कलशाग्रे पूर्वसंकल्पादि निमित्तकं पाठं कृत्वा देव्या समर्प्य आरार्त्तिकं कृत्वा कुमारिकामेकामेकं ब्राह्मणं च सम्पूज्य भोजयित्वा ताम्बूलदक्षिणा नमस्कारैः संतोषयेदिति। एवं द्वितीयायां द्विगुणं तृतीयायां त्रिगुणमिति क्रमेण नवम्यन्तं नवगुणं यथाभवति तथा पूजा चण्डीपाठ कुमारी ब्राह्मण भोजनादिकं च यथाविभव विस्तरं नवम्यन्तं महोत्सवं कुर्यादिति । अत्राप्येकाहारव्रतिको नियमः कर्तव्यः । ततो नवमे दिने कृतचण्डिकापाठदशांशतः होमं कृत्वा सर्वं विधिवत्समापयेत् । यद्याचार्यद्वारा कारयति तदा तस्मै वित्तशाठ्य-रहितां दक्षिणां दत्त्वा प्रणम्य समापयेदिति ।

विसर्जनमन्त्र-ओं गच्छ गच्छ परं स्थानं स्वस्थानं परमेश्वरि । यत्र ब्रह्मादयो देवा न विदुः परमं पदम् । इत्युच्चार्य विसृजेत् ।

# अथ शतचण्डीविधिः

शङ्करस्य भवान्या वा प्रासादनिकटे शुभम् ॥ ३ ॥ मण्डपं द्वारवेद्याढ्यं कुर्यात्सध्वजतोरणम् ॥ तत्र कुण्डं प्रकुर्वीत प्रतीच्यां मध्यतोऽपि वा ॥४॥ स्नात्वा नित्यक्रियां कृत्वा वृणुयाद्दश ब्राह्मणान् । जितेन्द्रियान् सदाचारान् कुलीनान् सत्यवादिनः ॥५॥ व्युत्पन्नांश्चण्डिकापाठरतांल्लज्जादयावतः । मधुपर्कविधानेन स्वर्णवस्त्रादिदानतः ॥ ६ ॥ जपार्थमासनं मालां दद्यात्तेभ्योऽपि भोजनम् । ते हविष्यान्नमश्नन्तो मन्त्रार्थगतमानसाः ॥ ७ ॥ भूमौ शयानाः प्रत्येकं जपेयुश्चण्डिकास्तवम् । मार्कण्डेयपुराणोक्तं दशकृत्वः सचेतसः ॥ ८ ॥ नवार्णं चण्डिकामन्त्रं जपेयुश्चायुतं पृथक् । यजमानः पूजयेच्च कन्यानां नवकं शुभम् ।

॥९॥ द्विवर्षाद्द्वादशाब्दान्ताः कुमारीः परिपूजयेत् । एकाब्दायाः प्रीत्यभावो रुद्राब्दा तु विवर्जिता ॥१०॥ तासां क्रमेण नामानि-कुमारी १ त्रिमूर्तिः २ कल्याणी ३ रोहिणी ४ कालिका ५ शाम्भवी ६ दुर्गा ७ चण्डिका ८ सुभद्रा ९ इति नाममन्त्रैस्तासां पूजा ॥ तत्र हीनाधिकाङ्गी कुष्ठव्रणयुता अन्धा काणा कुरूपा कूबरी लोमयुग्देहा दासीजा रोगिणीत्येवमाद्या वर्ज्याः । विप्रजां पूजयेत सिद्ध्यै यशसे क्षत्रियोद्भवाम् । वैश्यजां धनलाभाय पुत्राप्त्यै शूद्रजां यजेत् ॥११॥ गन्धपुष्पधूपदीपभक्ष्यभोज्यैर्यथाशक्तिवस्त्राभरणैश्च पूजयेत । द्विवर्षा सा सामयुक्ता त्रिमूर्तिर्हायनत्रिका । चतुरब्दा तु कल्याणी पञ्चवर्षा तु रोहिणी ॥१२॥ षडब्दा कालिका प्रोक्ता चण्डिका सप्तहायना । अष्टवर्षा शाम्भवी स्याद्दुर्गा तु नवहायना ॥१३॥ सुभद्रा दशवर्षोक्ता नाममन्त्रैः

प्रपूजयेत् । तासामावाहने मन्त्रः प्रोच्यते शङ्करोदितः ॥१४॥ मन्त्राक्षरमयीं लक्ष्मीं मातृणां रूपधारिणीम् । नवदुर्गात्मिकां साक्षात्कन्यामावाहयाम्यहम् ।१५। कुमारिकादिकन्यानां पूजामंत्रान् ब्रुवेऽधुना-जगत्पूज्ये जगद्वन्द्ये सर्वशक्ति-स्वरूपिणि । पूजां गृहाण कौमारि जगन्मातर्नमोऽस्तु ते ॥१६॥ त्रिपुरां त्रिपुराधारां त्रिवर्षां ज्ञानरूपिणीम् । त्रैलोक्यवन्दितां देवीं त्रिमूर्तिं पूजयाम्यहम् ॥१७॥ कलात्मिकां कलातीतां कारुण्यहृदयां शिवाम् । कल्याणजननीं देवीं कल्याणीं पूजयाम्यहम् ॥१८॥ अणिमादिगुणाधारामकाराद्यक्षरात्मिकाम् । अनन्तशक्तिकां लक्ष्मीं रोहिणीं पूजयाम्यहम् ॥१९॥ कामचारीं शुभां कांतां कालचक्रस्वरूपिणीम् । कामदां करुणोदारां कालिकां पूजयाम्यहम् ॥२०॥ चण्डवीरां चण्डमायां चण्डमुण्डप्रभञ्जनीम् । पूजयामि सदा देवीं चण्डिकां

चराडविक्रमाम् ॥२१॥ सदानन्दकरीं शान्तां सर्वदेवनमस्कृताम् । सर्वभूता-
त्मिकां लक्ष्मीं शाम्भवीं पूजयाम्यहम् ॥२२॥ दुर्गमे दुस्तरे कार्ये भवदुःख
विनाशिनीम् । पूजयामि सदा भक्त्या दुर्गां दुर्गार्तिनाशिनीम् ॥२३॥
सुन्दरीं स्वर्णवर्णाभां सुखसौभाग्यदायिनीम् । सुभद्रजननीं देवीं सुभद्रां
पूजयाम्यहम् ॥२४॥ एतैर्मन्त्रैः पुराणोक्तैस्तां तां कन्यां समर्चयेत् (इति
पूजनं कुमारिकाणाम् ), वेद्यां विरचिते रम्ये सर्वतोभद्रमराडले ॥२५॥ घटं
संस्थाप्य विधिवत्तत्राबाह्यार्चयेच्छिवाम् ॥२६॥ तदग्रे कन्यकाश्चापि पूजयेद्-
ब्राह्मणानिति । उपचारैस्तु विविधैर्नवार्णावरणान्यपि ॥२७॥ ओंकारः प्रथमं
पीठं पूर्वपीठमतः परम् । तृतीयं कामपीठञ्च पूजयेत्सम्प्रदायतः ॥२८॥ पूर्वा-
दिदिक्षु पीठस्य गणेशादिचतुष्टयम् । गणेशक्षेत्रपालौ च पादुके बटुकास्त्रयः

॥ २९॥ आग्नेय्यादिचतुर्दिक्षु पूज्यं देवीचतुष्टयम् । जया च विजया चैव जयन्ति चापराजिता॥३०॥ पूर्वोक्तयन्त्रे पूर्वकोणे सरस्वतीसहितो ब्रह्मा श्रीसहितो विष्णुर्नैर्ऋत्यामुमया सहितः शिवो वायव्यां षट्कोणे चक्रमध्यर्बाजे श्रीमहालक्ष्मी ह्रीं महाकाली ऐं महासरस्वती क्लीं दक्षिणवामयोः उदक्सिंहो दक्षिणे महिषः षट्कोणेषु नन्दजारक्तदन्तिकाशाकम्भरीदुर्गाभीमाभ्रामर्यः सबिन्दुनामाद्यवर्णतारायाश्चासां नारसिंह्यथैन्द्री चामुण्डा उक्तरीत्या नाममन्त्रैः पूज्याः, ततो विष्णुमायादिचतुर्विंशतिदेवताः प्रागादिक्रमेण केसरेषु पूज्याः, त्रितयश्च केसरत्रयम् । ताश्च विष्णुमाया १ चेतना २ बुद्धि ३ निद्रा ४ क्षुधा ५ छाया ६ शक्ति ७ तृष्णा ८ शान्ति ९ जाति १० लज्जा ११ क्षान्ति १२ श्रद्धा १३ कान्ति १४ लक्ष्मी १५ धृति १६ वृत्ति १७

स्मृति १८ दया १९ तुष्टि २० पुष्टि २१ मातृ २२ भ्रान्ति २३ चिति २४ रूपा एतावत्यः सप्तशतीस्तवे पञ्चमेऽध्याये आसां चतुर्विंशतीनां न पाठ इति न भ्रमितव्यम्, कात्ययायनीतन्त्रविरोधात्। नालमूले तु सम्पूज्यमाधारादि-चतुष्टयम् ॥ आधारः कूर्मशेषौ च चतुर्थी पृथिवी नृप ॥३१॥ गृहकोणेषु गणेशक्षेत्रपालौ बटुको योगिन्यः प्रागादिदिक्षु इन्द्राद्याश्चेति एवं चतुर्दिनं कुर्यात्तत्र प्रथमेऽह्नि एकावृत्तिर्द्वितीय द्वे तृतीये तिस्रश्चतुर्थे चतस्र इति पञ्चमे होमः। होमद्रव्याणि-पायसान्नैस्त्रिमध्वक्तैर्द्राक्षारम्भाफलादिभिः। मातुलिङ्गैरिक्षुखण्डैर्नारिकेलयुतैस्तिलैः ॥३२॥ जातीफलैराम्रफलैरन्यैर्मधुरवस्तुभिः। इति सप्तशत्या दशावृत्या प्रतिमन्त्रं हुतश्चरेत् ॥३३॥ अयुतञ्च नवार्णेन स्थापितेऽग्नौ विधानतः। कृत्वाऽऽवरणदेवानां होमं तन्नाममन्त्रतः ॥३५॥ कृत्त्वा पूर्णाहुतिं

सम्यग्देवमग्निं विसृज्य च । अभिषिञ्चेच्च यष्टारं विप्रौघः कलशोदकैः ॥३५॥
निष्कंसुवर्णमथवा प्रत्येकं दक्षिणां दिशेत् । भोजयेच्च शतं विप्रान्
भक्ष्यभोज्यैः पृथग्विधैः॥३६॥ तेभ्योऽपि दक्षिणां दत्वा गृह्णीयादाशिषस्तथा ।
एवं कृते जगद्वश्यं सर्वे नश्यन्त्युपद्रवाः ।



ॐ सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुः कासि त्वं महादेवीति ॥ १ ॥

साब्रवीत्—अहं ब्रह्मस्वरूपिणी मत्तः प्रकृतिपुरुषात्मकं जगत् । शून्यं चाशून्यं च ॥२॥

अहमानन्दानानन्दौ । अहं विज्ञानाविज्ञाने । अहं ब्रह्माब्रह्मणी वेदितव्ये । अहं पञ्चभूतान्यपञ्चभूतानि । अहमखिलं जगत् ॥३॥

वेदोऽहमवेदोऽहम् । विद्याहमविद्याहम् । अजाहमनजाहम् । अधश्चोर्ध्वं च तिर्यक्चाहम् ॥४॥

अहं रुद्रेभिर्वसुभिश्चरामि । अहमादित्यैरुत विश्वदेवैः । अहं मित्रावरुणावुभौ बिभर्मि । अहमिन्द्राग्नी अहमश्विनावुभौ ॥५॥

अहं सोमं त्वष्टारं पूषणं भगं दधामि । अहं विष्णुमुरुक्रमं ब्रह्माणमुत प्रजापतिं दधामि ॥६॥

अहं दधामि द्रविणं हविष्मते सुप्राव्ये यजमानाय सुन्वते । अहं राष्ट्री संगमनी वसूनां चिकितुषी प्रथमा यज्ञियानाम् । अहं सुवे पितरमस्य मूर्धन्मम योनिरप्स्वन्तः समुद्रे । य एवं वेद । स दैवीं सम्पदमाप्नोति ॥७॥

ते देवा अब्रुवन्—नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः । नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥८॥

तामग्निवर्णां तपसा ज्वलन्तीं वैरोचनीं कर्मफलेषु जुष्टाम् ।
दुर्गां देवीं शरणं प्रपद्या महेऽसुरान्नाशयित्र्यै ते नमः ॥९॥
देवीं वाचमजनयन्त देवा स्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ।
सा नो मन्द्रेषमूर्जं दुहाना धेनुर्वागस्मानुप सुष्टुतैतु ॥१०॥
कालरात्रीं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कन्दमातरम् ।
सरस्वतीमदितिं दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवाम् ॥११॥
महालक्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि ।
तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥१२॥
अदितिर्ह्यजनिष्ट दक्ष या दुहिता तव ।
तां देवा अन्वजायन्त भद्रा अमृतबन्धवः ॥१३॥
कामो योनिः कमला वज्रपाणिर्गुहा हसा मातरिश्वाभ्रमिन्द्रः ।
पुनर्गुहा सकला मायया च पुरूच्यैषा विश्वमातादिविद्योम् ॥१४॥

एषाऽऽत्मशक्तिः । एषा विश्वमोहिनी । पाशाङ्कुशधनुर्बाणधरा । एषा श्रीमहाविद्या । य एवं वेद स शोकं तरति ॥१५॥

नमस्ते अस्तु भगवति मातरस्मान् पाहि सर्वतः ॥१६॥

सैषाष्टौ वसवः। सैषैकादश रुद्राः। सैषा द्वादशादित्याः। सैषा विश्वेदेवाः सोमपा असोमपाश्च। सैषा यातुधाना असुरा रक्षांसि पिशाचा यक्षाः सिद्धाः। सैषा सत्त्वरजस्तमांसि। सैषा ब्रह्मविष्णुरुद्ररूपिणी। सैषा प्रजापतीन्द्रमनवः। सैषा ग्रहनक्षत्रज्योतींषि। कलाकाष्ठादिकालरूपिणी। तामहं प्रणौमि नित्यम्। पापापहारिणीं देवीं भुक्तिमुक्तिप्रदायिनीम्। अनन्तां विजयां शुद्धां शरण्यां शिवदां शिवाम् ॥१७॥

वियदीकारसंयुक्तं वीतिहोत्रसमन्वितम्। अर्धेन्दुलसितं देव्या बीजं सर्वार्थसाधकम् ॥१८॥

एवमेकाक्षरं ब्रह्म यतयः शुद्धचेतसः। ध्यायन्ति परमानन्दमया ज्ञानाम्बुराशयः ॥१९॥

वाङ्माया ब्रह्मसूस्तस्मात् षष्ठं वक्त्रसमन्वितम्। सूर्योऽवामश्रोत्रबिन्दुसंयुक्तष्टात्तृतीयकः। नारायणेन संमिश्रो वायुश्चाधरयुक् ततः। विच्चे नवार्णकोऽर्णः स्यान्महदानन्ददायकः ॥२०॥

हृत्पुण्डरीकमध्यस्थां प्रातःसूर्यसमप्रभाम्। पाशाङ्कुशधरां सौम्यां वरदाभयहस्तकाम्। त्रिनेत्रां रक्तवसनां भक्तकामदुघां भजे ॥२१॥

नमामि त्वां महादेवीं महाभयविनाशिनीम्। महादुर्गप्रशमनीं महाकारुण्यरूपिणीम् ॥२२॥

यस्याः स्वरूपं ब्रह्मादयो न जानन्ति तस्मादुच्यते अज्ञेया। यस्या अन्तो न लभ्यते तस्मादुच्यते अनन्ता। यस्या लक्ष्यं नोपलक्ष्यते तस्मादुच्यते अलक्ष्या। यस्या जननं नोपलभ्यते तस्मादुच्यते अजा। एकैव सर्वत्र वर्तते तस्मादुच्यते एका।

एकैव विश्वरूपिणी तस्मादुच्यते नैका । अत एवोच्यते अज्ञेयानन्तालक्ष्याजैका नैकेति ॥२३॥

मन्त्राणां मातृका देवी शब्दानां ज्ञानरूपिणी । ज्ञानानां चिन्मयातीता शून्यानां शून्यसाक्षिणी ।
यस्याः परतरं नास्ति सैषा दुर्गा प्रकीर्तिता ॥२४॥

तां दुर्गां दुर्गमां देवीं दुराचारविघातिनीम् । नमामि भवभीतोऽहं संसारार्णवतारिणीम् ॥२५॥

इदमथर्वशीर्षं योऽधीते स पञ्चाथर्वशीर्षजपफलमाप्नोति । इदमथर्वशीर्षमज्ञात्वा योऽर्चां स्थापयति शतलक्षं प्रजप्त्वापि सोऽर्चासिद्धिं न विन्दति । शतमष्टोत्तरं चास्य पुरश्चर्याविधिः स्मृतः । दशवारं पठेद् यस्तु सद्यः पापैः प्रमुच्यते । महादुर्गाणि तरति महादेव्याः प्रसादतः ॥२६॥

सायमधीयानो दिवसकृतं पापं नाशयति । प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति । सायं प्रातः प्रयुञ्जानो अपापो भवति । निशीथे तुरीयसंध्यायां जप्त्वा वाक्सिद्धिर्भवति । नूतनायां प्रतिमायां जप्त्वा देवतासान्निध्यं भवति । प्राणप्रतिष्ठायां जप्त्वा प्राणानां प्रतिष्ठा भवति । भौमाश्विन्यां महादेवीसंनिधौ जप्त्वा महामृत्युं तरति । स महामृत्युं तरति य एवं वेद । इत्युपनिषत् ॥

# हवन विधि

जिस दिन हवन करना हो उस दिन यजमान स्नान आदि करके संध्या प्राणायाम आदि के उपरान्त जहां हवन करना हो वहां पूर्वाभिमुख होकर बैठे और पुरोहित उत्तराभिमुख हो कर बैठे।

पुरोहित यजमान के सन्मुख दक्षिणदिशा में नवग्रहादि बनावें और उत्तर दिशा में हवन कुण्ड अथवा स्थण्डली बनावे। (किसी किसी आचार्य का मत है "कुण्डे तु बहवो दोषाः। स्थण्डिले बहवो गुणाः। तस्मात्कुण्डं परित्यज्य स्थण्डिले हवनं चरेत्"।) कुण्ड में बहुत प्रकार के खात, अर्थात् पृथ्वी में शल्य तथा मान आदि देखने में ठीक न होने से अनेक उपद्रव हो जाते हैं इस कारण स्थण्डिल को ही श्रेष्ठ माना है। नाप में कम होने से रोग, विशेष होने से वैर अनेक प्रकार के दोष देता है।)

# नवग्रहस्थापन विधि

मध्ये तु भास्करं विद्याच्छशिनं पूर्वदक्षिणे। लोहितं दक्षिणे विद्याद् बुधपूर्वे तथोत्तरे ॥१॥
उत्तरेण गुरुं विद्यात् पूर्वेणैव तु भार्गवम्। पश्चिमे च शनिं विद्याद्राहुं दक्षिण पश्चिमे ॥२॥
पश्चिमोत्तरतः केतुं ग्रहस्थापनमुत्तमम्। भास्करं वर्तुलाकारम् अर्द्धं चन्द्र निशाकरम् ॥३॥
त्रिकोणं मंगलं चैव बुधश्च धनुराकृतिम्। पद्माकारं गुरुश्चैव चतुरस्रकोणं च भार्गवम् ॥४॥

खड्गाकृतिं शनिं विद्यात् राहुश्च मकराकृतिम् ॥ केतुं ध्वजाकृतिश्चैव इत्येता ग्रहमूर्त्तयः ॥५॥ भास्कराङ्गारकौ रक्तौ, श्वेतौ शुक्रनिशाकरौ । हरितो ज्ञो गुरुः पीतः शनिः कृष्णस्तथैव च, राहुकेतू तथा धूम्रौ,कारयेच्च विचक्षणः ॥६॥ मण्डलादैशाने क्रमशः गणेश ओंकारं श्रीलक्ष्मी ६४ योगिन्यः स्थापयेत् । पुनः ग्रह वेदी उत्तरतः षोडश कण्ठरूपाः षोडशमातरः ईशाने घटं स्थापयेत् । ततो घटसमीपे दीपं मण्डलाद् दक्षिणे कृष्णसर्पश्च स्थापयेत् ।

यजमान पूर्व की ओर मुख करके बैठे तथा नीचे लिखे मन्त्र से अपने ऊपर तथा सामग्री पर गंगाजल का छींटा लगावें ।

ओं अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोपि वा । यः स्मरेत् पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यंतरः शुचिः ॥

फिर यजमान स्वस्ति वाचन करने के उपरांत हाथ में जल लेकर संकल्प करे ।

ओं विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः तत्सदद्य ब्रह्मणो द्वितीयपरार्द्धे श्री श्वेतवाराह कल्पे जम्बुद्वीपे भरत-खण्डे आर्यावर्ते वर्तमानकलियुग प्रथमचरणे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशतितमे युगे अमुक ऋतौ अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुक वासरान्वितायाम्-अमुक करण नक्षत्र योग

युक्तायां अमुकगोत्रोऽमुक शर्माहं सपत्नीकोऽहं मम सकुटुम्बस्य सपरिवारस्यायुरारोग्य विपुल-पुत्रपौत्राद्यनवच्छिन्न सन्तति स्थिर लक्ष्मी कीर्ति लाभशत्रु पराजय सदभीष्ट सिद्ध्यर्थं श्री महा काली महालक्ष्मी महासरस्वती प्रीत्यर्थं श्रुति स्मृति पुराणोक्त फल प्राप्त्यर्थं ब्राह्मण द्वारा कृतस्य नवचण्डी, शतचण्डी, सहस्रचण्डी वा सप्तशती पाठस्य साङ्गतासिद्ध्यर्थं तद्दशांश तर्पणं तद्दशांश मार्जनं तद्दशांश ब्राह्मण भोजन च करिष्ये । तन्निर्विघ्नपरिसमाप्तये गणपति पूजनं च करिष्ये ॥

[ ब्रह्मा वरणं ]

हाथ में धोती पान, सुपारी, दक्षिणा, मौली, चावल, तिलक, पुष्प और जल ले कर संकल्प करे और ब्रह्मा को अर्पण करे ।

अद्येहेत्यादिऽमुक गोत्रोऽहं अमुक शर्म्माहं श्री महाकाली, महालक्ष्मी महासरस्वती देवता प्रीत्यर्थं अस्मिन् श्री दुर्गा हवन कर्मणि सांगता फलप्राप्त्यर्थं एभिर्गंधाक्षत पुष्पतांबूल पूगीफल दक्षिणावासोभिः अमुक गोत्रोत्पन्नं ब्राह्मणं ब्रह्मत्वेन त्वामहं वृणे ॥

फिर ब्राह्मण को कङ्कण बन्धन करे और ब्रह्मा रूप ब्राह्मण नीचे लिखा मन्त्र पढ़े ।

ओं व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् । दक्षिणाया श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।

फिर यजमान ब्रह्मा रूप ब्राह्मण को तिलक करे और ब्राह्मण नीचे लिखा मन्त्र पढ़े ।

नमो ब्रह्मण्य देवाय गोब्राह्मणहिताय च । जगाद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमोनमः ।।

[ आचार्यवरणं ]

धोती पर सब चीजें रखकर आचार्य के वरण का सकल्प करे ।

अद्यामुक गोत्रोऽहं ऽमुक शर्माहं अस्मिन् श्री दुर्गाहवन कर्मणि सांगता फल प्राप्त्यर्थं एभिः गंधाक्षतपुष्प चंदन तांबूल वासोभिः अमुक गोत्रं अमुक शर्माणं ब्राह्मणमाचार्यत्वेन त्वामहं वृणे ।

फिर आचार्य को कङ्कण बन्धन करे और आचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढ़े ।

व्रतेन दीक्षामाप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम् ।
दक्षिणाया श्रद्धामाप्नोति श्रद्धया सत्यमाप्यते ।।

फिर आचार्य को तिलक करे और आचार्य नीचे लिखा मन्त्र पढ़े ।

नमो ब्रह्मण्य देवाय गोब्राह्मण हिताय च । जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः ।

फिर यजमान कहे । विहितं कर्मकुरु ।

करवाणीति ब्राह्मणो वदेत् ।

फिर आचार्य हाथ में चावल लेकर नीचे लिखे मन्त्र के अनुसार उन उन दिशाओं में छोड़े ।

पूर्वे रक्षतु गोविन्द आग्नेयां गरुड़ध्वजः । याम्यां रक्षतु वाराहो नारसिंहस्तु नैऋते । केशवो वारुणीं रक्षेद्वायव्यां मधुसूदनः । उत्तरे श्रीधरो रक्षेदैशाने तु गदाधरः । शंखं रक्षतु यज्ञाग्रे यज्ञपृष्ठे च पद्मकम् । वामपार्श्वे गदा रक्षेद्दक्षिणे च सुदर्शनम् ॥

उपेन्द्रो रक्षतु ब्रह्माणमाचार्यं पातु वामनः । अच्युतः पातु ऋग्वेदं यजुर्वेदमधोक्षजः ॥ कृष्णो रक्षतु सामानि अथर्वाणं तु माधवः । यजमानं सपत्नीकं पुण्डरीकाक्षश्च रक्षतु ॥

फिर आचार्य यजमान को नीचे लिखे मन्त्र से तिलक करे ।

ओं आदित्या वसवो रुद्रा विश्वेदेवा मरुद्गणाः । तिलकं ते प्रयच्छन्तु धर्मकामार्थ सिद्धये ।

फिर आचार्य यजमान को मौली बांधे ।

येन बद्धो बली राजा दानवेन्द्रो महाबलः तेनत्वां प्रतिबध्नामि रक्षो मा चल माचल ॥

फिर गणपत्यादि पूजन करे। फिर अधिदेवता का आवाहन और पूजन करे। फिर दश दिग्पालों का आवाहन और पूजन करे।

पूजन के उपरांत कुशकंडिका करके अग्नि स्थापन करे। अग्नि से दक्षिण दिशा में ब्रह्मा को प्राक् दक्षिण क्रम से कुशासन पर उत्तर मुख करके बैठावे। फिर प्रणीता पात्र में जल भरकर कुशा से ढक कर ब्रह्मा का मुख दिखावे और अग्नि से उत्तर की तरफ कुशा के ऊपर धरे। फिर कुशकण्डिका के अनुसार कुशा विछावें। एक प्रोक्षणी पात्र धरें। घी का कटोरा धरें। मार्जन के लिए तीन कुशा धरें। तीन कुशा गूंदकर उत्तर से पश्चिम की तरफ धरें। अंगूठे से तर्जनी के बराबर तीन लकड़ी धरें। फिर चावल से भरा हुआ पूर्णपात्र रखे। अनन्तर उसी दिशामें और सब वस्तु स्थापन करें। पवित्र छेदन कुशाओं से पवित्री की कुशा को प्रादेश मात्र छेदन करे। फिर ब्राह्मण पवित्री की कुशाओं सहित प्रणीता का जल हाथसे तीन बार प्रोक्षणी पात्रमें डाले। अनामिका और अंगूठे के अग्र भाग में पवित्रे की कुशाको पकड़ कर प्रोक्षणी पात्र में से तीन बार ऊपर को छींटा दे। फिर प्रणीता के जलसे प्रोक्षणी पात्र में तीन बार उसी कुशा से छींटा दे और प्रोक्षणी पात्र के जल का सब जगह छींटा लगावे। अग्नि और प्रणीता के मध्यमें प्रोक्षणी पात्र रखे। फिर घी का वर्तन अग्नि पर रखकर गरम करले। फिर स्रुवे को अग्नि से तपा ले और संमार्जन कुशाओं को लेकर स्रुवे के आरम्भ मेंसिरे कीकुशा

लगावे। तीन लक्कड़ी घी में भिगो कर अग्नि में डाले।

ब्रह्मा से लेकर घुटने तक मौली रखे। फिर स्रुवे से नीचे लिखी आहुतियां घी की डाले। और आहुति से बचा हुआ घी प्रोक्षणी पात्र में भी डालता जाए।

ओं प्रजापतये स्वाहा इदं प्रजापतये ॥ इति मनसा। ओं इन्द्राय स्वाहा इदमिन्द्राय। इत्याघारौ। ओं अग्नये स्वाहा इदमग्नये। ओं सोमाय स्वाहा इदं सोमाय। इत्याज्य भागौ। ओं भूः स्वाहा इदमग्नये ॥ ओं भुवः स्वाहा इदं वायवे। ओं स्वः स्वाहा इदं सूर्याय। (एता महा व्याहृतयः।) ओं त्वन्नो अग्ने वरुणस्य विद्वान् देवस्य हेडोऽअवयासिसीष्ठाः यजिष्ठो बन्हितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषाँ सि प्रमुमुग्ध्यस्मत् स्वाहा ॥ इदमग्नी वरुणाभ्याम्। ओं स त्वन्नो अग्नेऽवमो भवोतीनेदिष्ठो अस्या उषसोव्युष्टौ। अवयत्त्वनो वरुणँ रराणो वीहिमृडीकँ सुहवो न एधि स्वाहा। इदमग्नी वरुणाभ्याम्।

ओं अयाश्चाग्नेस्यनभि शस्तिपाश्च सत्वमित्वमयाअसि। अयानो यज्ञं वहास्य यानो धेहि भेषजँ स्वाहा इदमग्नये ॥ ओं ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा वितता-महान्तः। तेभिर्नो अद्य सवितोत्त विष्णुर्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा। इदं वरुणाय

सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भ्यः स्वर्केभ्यः। ओं उदुत्तमं वरुणपाशम स्मदवाधमं विमध्यम ँ श्रथाय। अथावयमादित्य व्रते तवा नागसो ऽदितये स्याम स्वाहा। इदं वरुणाय॥

नीचे लिखी आहुतियां घुटने से ब्रह्मा वाली मौली हटा कर दे।

ओं प्रजापतये स्वाहा। इदं प्रजापतये (इति मनसा प्राजापत्यम्) ओं अग्नये स्विष्टकृते स्वाहा। इदमग्नये स्विष्टकृते। ओं गणपतये स्वाहा॥

इस के उपरान्त गणेशादि मंडल में स्थापित देवताओं तथा नवग्रहों के मन्त्रों द्वारा आहुतियां दे। फिर हाथ में जल लेकर संकल्प करे।

ओं विष्णु विष्णु विंष्णुःअद्य श्री ब्रह्मणो द्वितीय परार्द्धे श्री श्वेत वाराह कल्पे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाविंशति तमे युगे कलियुगे कलि प्रथम चरणे जम्बूद्वीपे भरत खण्डे आर्य्यावर्तान्तर्गत ब्रह्मवर्तैक-देशे पुण्य क्षेत्रे वेदोक्त फलप्राप्ति कामसिद्ध्यर्थं वर्तमान संवत्सरेऽमुकायने अमुक मासे अमुक पक्षे अमुक तिथौ अमुकवासरे अमुकगोत्रोहममुक शर्म्माहं सकल पाप क्षय पूर्वक सकल मंगल प्राप्त्यै सर्वारिष्ट निवारणार्थं सर्वत्र हर्षविजय-सिद्ध्यर्थं श्री महा काली महालक्ष्मी

महासरस्वती देवता प्रीत्यर्थं कवचार्गल कीलकम्, रात्रि सूक्तम् नवार्णं च आद्यंतयोः पञ्च सूक्तं च मार्कण्डेय उवाच इत्यारभ्य सावर्णि र्भविता मनुरित्यंतं सप्तशती हवनमहं करिष्ये।

संकल्प के उपरान्त कवच, अर्गला, कीलक का पाठ करके अंग न्यास करके नवार्णमंत्र की १०८ आहुति देकर देवी सूक्त तथा सप्तशती न्यास करके फिर मार्कण्डेय उवाच से आरम्भ करके ओं सावर्णि-र्भविता मनुःतक प्रत्येक श्लोक के अन्त में 'स्वाहा' कहकर आहुति देते जावें। फिर न्यास करके १०८ नवार्ण मंत्र की आहुति दें।

प्रत्येक अध्यायके अन्त में ओं जय जय मार्कण्डेय पुराणे सावर्णिकेमन्वन्तरे देवी माहात्म्ये सत्याः सन्तु (यजमानस्य) मम कामा जगदम्बार्पणमस्तु॥ ऐसा कहकर जल छोड़ दे। प्रत्येक अध्याय के अंत में भोजपत्र में एक सुपारी २ लौंग १ छोटी इलायची, पान, कमलगट्टा, लपेट कर और घी में भिगोकर नीचे लिखे मंत्र से आहुति दें। इसके साथ पहले अध्याय में शहद, दूसरे में गुगल, तीसरे में भी गुगल, चौथे में मिश्री वा पायस, पांचवें में कपूर पुष्प वा ऋतु फल, छटे में भोजपत्र, सातवें में जायफल, आठवें में लालचन्दन, ९वें १०वें में बेलफल, ११वें में पुष्प पायस, १२वें में केला, १३वें अध्याय में फल वा फूल लेकर खड़े होकर आहुति दें।

ओं अम्बे अम्बिके अम्बालिके न मानयति कश्चन। ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकां कां पील-वासिनीं स्वाहा॥

फिर घी से तीन आहुति दें।

१. ओं अम्बायै स्वाहा। २. ओं अम्बिकायै स्वाहा। ३. ओं अम्बालिकायै नमो नमः स्वाहा॥

फिर हवन के दशांश की एक माला "ओं ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे स्वाहा" का तर्पण करे और तर्पण के दशांश का मार्जन करे।

एक बर्तन में जल लेकर उसमें दूध गंगाजल मिलाकर फूल या कुशा से तर्पण करे। और अग्नि में छींटा लगाने को मार्जन कहते हैं।

इसके उपरांत वेदी के चारों तरफ दश दिशाओं में दस दीवे धर कर उनमें दस घी की बत्ती जलावें। दही-उड़द-सिंदूर-यह भी उनके पास रखे। यह दश दिक्पाल की बली है।

फिर चावल लेकर **ओं एतन्ते देव०**-इत्यादि मन्त्र से प्रतिष्ठा करे। फिर नीचे लिखे अनुसार संकल्प करें।

अमुकगोत्रोहं अमुक शर्म्माहं भो दश दिक्पालाः दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम यजमानस्य सकुटुम्बस्य आयुः कर्ता क्षेमकर्ता शांतिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता निर्विघ्न कर्ता वरदो भव।

फिर क्षेत्रपाल की बलि दें।

आटे का एक चौमुखा दिया बनाकर उसमें चार बत्ती डालकर कड़वा तेल डालें और उसको जलावें। फिर दही-उड़द की दाल सिंदूर-स्याही पैसा यह भी उसके पास रखें और चावल लेकर **ओं एतन्ते देव०** इस मन्त्र से प्रतिष्ठा करके पूजन करके हाथ जोड़ें।

ओं करकलितकपालःकुंडली दण्डपाणिस्तरुण तिमिरनील व्याल यज्ञोपवीती। क्रतुसमय सपर्या विघ्न विच्छेद हेतुर्जयति वटुक नाथः सिद्धिदः साधकानाम्। ओं क्षेत्र पाल-शाकिनीडाकिनि भूतप्रेत वेतालपिशाच सहिताय इमं बलिं समर्पयामि॥

फिर जल-चावल लेकर संकल्प करें।

अमुक गोत्रोऽहं अमुक शर्माहं भो क्षेत्र पाल दिशं रक्ष बलिं भक्ष मम यजमानस्य सकुटुम्बस्य सपरिवारस्य आयुष्कर्ता क्षेमकर्ता शान्तिकर्ता पुष्टिकर्ता तुष्टिकर्ता वरदो भव॥

फिर दीपक को वहां से उठा दें और उस स्थान पर **ओं अपवित्रः पवित्रो वा०** से जल का छींटा लगावें।

फिर एक कूष्मांड अथवा जुट लेकर उसको खड्ग से एक ही वार में काटकर सिंदूर लगा दें वह देवी के लिए बलि होगी।

खड्ग पूजा--ओं ह्रीं ह्रीं खड्ग ऐसा ध्यान करके और अर्घ्यादि देकर ओं कालि कालि यज्ञेश्वरि। लोहदण्डायै नमः। मुष्टि देशे सरस्वती ब्रह्माभ्यां नमः। मध्ये लक्ष्मी नारायणाभ्यां नमः। अग्रे उमामहेशाभ्यां नमः॥

नीचे लिखे मंत्र से खड्ग से काटे।

ओं आं ह्रीं फट् इति मन्त्रेण विमलं खड्गं गृहीत्वा॥ एक हस्तेन द्वाभ्यां वा एकच्छेदेन घातयेत्॥

फिर पूर्णाहुति दें।

स्रुवे पर घी का भरा नारियल और चरु धरे उसकी ओं एतन्ते देव० इस मंत्र से प्रतिष्ठा तथा पजन करके लेकर खड़ा हो जाये और नीचे लिखे मन्त्र से नारियल को अग्नि में धर दे।

ओं मूर्द्धानं दिवो अरतिं पृथिव्या वैश्वानर मृत आजातमग्निम्॥ कवि ँ सम्राजमतिथिं जनानामासन्ना पात्रं जनयंत देवाः स्वाहा॥

नीचे लिखे मन्त्र से नारियल पर घी की धारा छोड़ें।

ओं वसोः पवित्रमसि शतधारं वसोः पवित्रमसि सहस्रधारम्। देवस्त्वा सविता पुनातु

वसोः पवित्रेण शतधारेण सुप्वाकामधुक्षः ॥

स्रुवे से नीचे लिखे मंत्रों से भस्म अनामिका अंगुली से पहले अपने को लगावें फिर यजमान को लगावें। त्र्यायुषं जमदग्नेरिति ललाटे-माथे पर। कश्यपस्य त्र्यायुषमिति ग्रीवायाम्-गले पर। यद्देवेषु त्र्यायुषमिति दक्षिणबाहुमूले-दक्षिण बाहु पर। तन्नो अस्तु त्र्यायुषमिति हृदये-छाती पर। इसके उपरांत स्रुवे पर से अनामिका अंगुली से घी लगाकर खाले फिर आचमन करे। फिर **ओं अपवित्रः पवित्रो वा०** मंत्र से प्रणीता पात्र से जल लेकर छींटा दे। और नीचे लिखे मंत्र से प्रणीता पात्र को ईशानदिशा में उल्टा दें।

**ओं दुर्मित्रियास्तस्मै सन्तु योस्मान्द्वेष्टि यं च वयं द्विष्मः ॥**

फिर ब्रह्मा की गांठ खोल दे और वेदी के चारों तरफ की सब कुशायें उठाकर अग्नि में नीचे लिखे मंत्र से डाल दे।

**ओं देवा गातु विदो गातु वित्वा गातुमित मनसस्पत इमंदेवयज्ञ ँ स्वाहा वातेधाः स्वाहा ॥**

इसके उपरांत परिक्रमा करके कुम्भ के जल से आम के पत्ते के साथ यजमान को परिवार सहित अभिषेक करे। फिर तिलक लगाकर यजमान को झोली में कुछ मीठा वगैरा डालें।

इसके उपरांत ब्राह्मणों को दक्षिणा देकर कुमारी कन्याओं का पूजनकरे फिर ब्राह्मणों को भोजन करावे।

## ★ दुर्गा हवन सामग्री ★

श्रींफल कच्चे, सर्वौंषधी, रोली, कलावा सुपारी, कपूर, केशर अबीर, गुलाल, हल्दी पिसी, मंहदी पिसी, सिंदूर, धूपवत्ती, अगरबत्ती, मोली, कमलगट्टे, १५ नग बेलगिरी, गुगल, छोटी इलायची, लौंग, मनफल २ नग, जयफल, भोजपत्र, सफेद ओर लाल चन्दन, पांचों मेवा, मिश्रीं मखन, पीली सरसों, काली मिर्च, गिलोय हरी, ढाक की लकड़ी, काले तिल, चावल, जो बिने हुए, चीनी, घी, खड़िया, गोले २ नग, कूजे २ मिश्री के, खैर की लकड़ी, आचमनी, पंच पात्र, माला, जपस्थली, धोती, अंगोछे, आज्यस्थाली, चरुस्थाली, पाकस्थाली कलश तांबे के, लोटा तांबे का, कटोरे तांबे के, कांसे के कटोरे, पूर्णपात्र. कटोरी कांसे की छायादान को, दूध कच्चा, दही, नैवेद्य, बरफी लडडू, ऋतु फल, शहद, आसन, मलमल, टूल बड़े अर्ज की, खारुआ, चुन्दरी, पीली छोट, दरयाई पीली, सुहाग पिटारी, अंगूठी सोने की, मूर्ति सोने की १, वाली सोने की १, चमेली का तेल, इत्र केवड़ा पंचरत्नी, छोटी हरड, आमले, मुनक्का, अदरक, बेर उर्द की दाल, कचौड़ी, पूरी, आम के पत्ते, बड़ के पत्ते, पीपल के पत्ते, व डाली छत्तर फूलों का, छोकर के पत्ते डाली, वन्दनबार चन्दोआ, फूलों की फूल माला, फूल, दूर्वा, जनेऊ, अनार की कली, गंगाजल, रेत, कुशामटकने सकोरे, पत्तलें, रूई; दियासलाई खंभ केले के, गन्ने, चाकू, सुतली, मीठा तेल, दाल चने की, मूंग हरी, उर्द काले, दाल मसूर उर्द के बड़े, आक की डाली, अलोंगा पान, गोबर, गोमूत्र, डोंने १ गड्डी, रेजगारी, पैसे रुपये, चौकी एक गज लम्बी चौड़ी, छोटी चौकी ४ आध गज लम्बी चौड़ी, पटरा आध गज का, बलिदान करने का शस्त्र, पेठा १ बलि करने को, पालक व वथुये का साक, आज्यस्थाली।

# आरती दुर्गा जी की

ओं जय अम्बे गौरी श्यामा जय अम्बे गौरी ।। जै मंगल करणि, जै आनन्द करणि ।।
तुम को निशदिन ध्यावै, तुम को सब दिन ध्यावै हरी, ब्रह्मा शिव री । ओं जय०
मांग सिंदूर विराजै, टीको मृग मद को ।। उज्ज्वल से दौउ नैना, चन्द्र बदन नीको ।। जै०
कनक समान कलेवर, रक्ताम्बर राजै ।। रक्त पुष्प, गल माला, कंठन पर साजै ।। जै०
कानन कुण्डल शोभित, नासाग्रे मोती ।। कोटिक चन्द्र दिवाकर, तिनके समजोती ।। जै०
केहरि वाहन राजत, खड्ग खप्पर धारि ।। सुर-नर मुनि जन सेवक, तिनके दुख हारि ।। जै०
शुम्भ निशुम्भ विदारे,महिषासुर घाती ।। धूम्र विलोचन नैना, निशदिन मद मोती ।। जै०
चौसठ योगिनी गावत,निरत करत भैरों ।। बाजत ताल मृदंगा और बाजत डमरो ।। जै०
भुजा अष्ट अति शोभित,वर अभयधारी ।। मन वांछित फल पावत, सेवत नर नारी ।। जै०
कंचन थाल विराजत,अगर कपूर बाती ।। मालकेतु में राजत, कोटि रतन जोती ।। जै०
आदि शक्ति की आरती,निशदिन जो गावे ।। कहत शिवा नन्द स्वामी मन वांछित फल पावे ।। जै०

# श्रीदुर्गा जी की आरती

सुन मेरी देवी पर्वत वासिनी कोई तेरा पार न पाया ॥ टेक ॥

पान सुपारी ध्वजा नारियल ले तेरी भेंट चढ़ाया ॥ सुन० ॥ १ ॥

सारी चोली तेरे अङ्ग बिराजे केसर तिलक लगाया ॥ सुन० ॥ २ ॥

ब्रह्मा वेद पढ़े तेरे द्वारे शङ्कर ध्यान लगाया ॥ सुन० ॥ ३ ॥

सतयुग द्वापर त्रेता मध्ये कलयुग राज सबाया ॥ सुन० ॥ ४ ॥

धूप दीप नैवेद्य आरती मोहन भोग लगाया ॥ सुन० ॥ ५ ॥

भगत मैया तेरा गुण गावे मनवांछित फल पाया ॥ सुन० ॥ ६ ॥